309

विज्ञान सरोवर

(सिद्धान्त दर्शन)

लेखक
महन्त श्री कृष्णदासजी शास्त्री

श्री ५ नवतनपुरीधाम
जामनगर

श्रीकृष्णपरमात्मने नमः

साहित्यभूषण विद्यामनीषी व्याकरणाचार्य
महन्त श्री कृष्णदासजी शास्त्री प्रणीत

विज्ञान सरोवर

(सिद्धान्त दर्शन)

प्रकाशक
श्री ५ नवनतपुरी धाम
जामनगर– ३६१ ००१

Shri Prannath Ji Pustkalay

पंचम संस्करण– ५०००
निजानन्दाब्द– ४१७
बुद्धजी शाका– ३२०
विक्रम संवत– २०५४
इसवी सन– १९९८

© प्रकाशक

श्री निजानन्द सम्प्रदाय के सम्पूर्ण साहित्य
अब टेलीग्राम ग्रुप में
श्री प्राणनाथ जी पुस्तकालय
श्री परमधाम की वाणी
बीतक, चर्चनी, चितवनि
की सभी PDF File

सेवा– वीस रूपयें

संपादन– सन्त सभा

प्रकाशक
श्री ५ नवतनपुरी धाम
जामनगर–३६१००१ (गुजरात)
फोन– (०२८८) ७२८२९

लिपि सज्जा तथा मुद्रक
निजानन्द कम्प्युटर्स
अक्षरातीत ऑफसेट
श्री ५ नवतनपुरी धाम
खीजड़ा मन्दिर, जामनगर

VIGYAN SAROVAR
By:- Mahant Krishnadas Shastri
Publisd by:- Shri 5 Navtanpuri Dham, Jamnagar-361 001 (INDIA)
I S B N 81 - 86228 - 19 - 5

Shri Prannath Ji Pustkalay

शुभ कामना

धर्मपरायण सुन्दरसाथजी !

आजके अर्थ प्रधान युगमें स्वार्थ परायणताके कारण समाजका भविष्य अस्पष्ट दिखाई दे रहा है. ऐसी परिस्थितिमें समय सीमा से आबद्ध समाजके सन्मार्गदर्शकके रूपमें धार्मिक साहित्य ही महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकता है इसलिए कि साहित्य समाजका दर्पण होता है. इससे ही अहिंसा, सत्य, वसुधैव कुटुम्बकम्, त्याग, समर्पण जैसे आत्मीय भाव जनमानसमें अंकित हो पायेंगे.

विज्ञान सरोवर एक ऐसा ग्रन्थ है जो लघुकाय होने पर भी ब्रह्मज्ञानरूपी सागरको अपने (गागर) में समिट कर अपने नामको सार्थक करते हुए हजारों ज्ञानपिपासुओंकी तृषा शान्त कर रहा है. अपने समाजके मूर्धन्य विद्वान महन्त श्री कृष्णदासजी शास्त्रीने ब्रह्मज्ञानके दुरूह रहस्यको भी सरल भाषामें स्पष्ट कर समाजके लिए बहुत ही बड़ा कार्य किया है.

श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके आद्यधर्मपीठ श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगरकी ओरसे वर्षोंसे इसका प्रकाशन हो रहा है फिर भी इसकी मांग उतनी ही बढ़ रही है. इससे ग्रन्थकी उपादेयता स्वतः सिद्ध होती है.

इस नूतन संस्करणको आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अतीव आनन्दका अनुभव हो रहा है. आशा है आप पाठकवृन्द इसका पूरा - पूरा लाभ उठायेंगे.

इस नूतन आवृत्तिके प्रकाशनमें श्री हरिप्रसाद शर्मा शास्त्री, श्री कृष्ण शास्त्री तथा श्री लीलाधर शास्त्रीका सहयोग महत्त्वपूर्ण रहा है. परोक्ष तथा प्रत्यक्ष रूपसे सहयोग देने वाले सभी धन्यवादके पात्र हैं.

शुभाकांक्षी
आचार्य श्री १०८ कृष्णमणिजी महाराज
श्री ५ नवतनपुरी धाम, जामनगर

Shri Prannath Ji Pustkalay

प्रार्थना

हे परमार्थ पन्थान्वेषण परायण धर्म प्रेमी बन्धुओ !

आज जिस पुस्तकको आपके समक्ष उपस्थित करते हुए मैं प्रसन्नताका अनुभव कर रहा हूं, इसका ज्ञान गर्भित सिद्धान्त तो लिखने, पढने और मनन करनेमें ब्रह्मानन्द रसभोगी, आप्तकाम, ब्रह्ममुनि और सच्चिदानन्द परमात्माके आनन्द अंगसे आविर्भूत ब्रह्मसृष्टि ही समर्थ हैं किन्तु उस परमात्माकी अचिन्त्य शक्तिद्वारा प्रदत्त प्रेरणाको प्राप्त कर जनसाधारणके कल्याणार्थ, इसके लिखनेमें मैं अपनी तुच्छ बुद्धिका प्रयोग कर रहा हूं. यह मेरी धृष्टता ही कही जायेगी. लेकिन अन्धपरम्पराका अनुकरण करनेवाला मानव समाज आज इस कलियुगी वातावरणमें धर्म, कर्म और शर्मसे रहित होकर अधःपतनके गहरे गर्तमें निमग्न होनेके लिये तत्पर है. ऐसी अवस्थामें प्रत्येक धार्मिक संस्था, विद्वान् और महात्माओंका कर्तव्य हो जाता है कि वे पतनोन्मुख जनसमाजके लिए परमार्थ – पथदर्शी, ब्रह्मवेत्ता महर्षियों द्वारा अनुभूत उस सुन्दर और सुगम मार्गको उपस्थित करें, जिसे प्राप्त कर जनता ऐहिक और पारलौकिक सुख सम्पादनमें समर्थ हो सके. क्योंकि –

जाने बिनु न होई परतीति, बिनु परतीति होई नहिं प्रीति ।
प्रीति बिना नहिं भक्ति दृढ़ई, जिमि खगेश जल की चिकनाई ।।

वास्तविक सिद्धान्तको जाने बिना विश्वास नहीं होता, बिना विश्वासके प्रेम नहीं, प्रेम बिना भक्ति नहीं और बिना भक्तिके मुक्ति नहीं मिलती है. श्री निजानन्द सम्प्रदाय अथवा श्रीकृष्ण प्रणामी धर्मके आदि आचार्य निजानन्द स्वामी सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी और

Shri Prannath Ji Pustkalay

स्वामी श्री प्राणनाथजीने माया, ब्रह्म और जीवके वास्तविक रहस्यका बहुत सुन्दर विवेचन किया है. जिसको जान लेनेके बाद किसी भी प्रकारकी शंकाका स्थान नहीं रह जाता है. साथ - साथ प्रभुकी प्राप्तिका सरल सोपान भी निर्दिष्ट किया है जिसकी जानकारी प्राप्त कर प्रत्येक देश, प्रत्येक आश्रमका रहने वाला मनुष्य आसानीसे परमात्माको प्राप्त कर सकता है. उक्त आचार्य - द्वयके सिद्धान्तमें मनुष्य जीवनका अन्तिम लक्ष्य प्रभु प्राप्ति ही होना चाहिए. क्योंकि मनुष्य तन धारण करनेकी सफलता इसीमें निहित है. श्रीकृष्णजीने भी कहा है कि –

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ॥
(भागवत ११.२०.१७)

सबसे प्रथम मनुष्य शरीरका प्राप्त होना ही दुर्लभ है. यदि प्रभु कृपासे यह मिल भी जाय तो कर्णधार सन्मार्ग प्रदर्शक गुरुकी प्राप्ति असम्भव है. इन दोनोंके उपलब्ध हो जाने पर भी यदि सत्संगका सुअवसर नहीं मिला तो सारा जीवन ही व्यर्थ चला गया. लेकिन इन तीनों अमूल्य पदार्थोंको परमात्मा प्रदान कर भी दे फिर भी जो मनुष्य इनसे लाभ नहीं उठाता है, वह आत्मा-हत्यारा है. आत्महत्या महान् पाप है. तुलसीदासजीने भी लिखा है –

जो न तरे भवसागर, नर समाज अस पाई ।
सो कृत निन्दक मन्द मति, आत्महनन गति जाई ॥

आत्म-घात करने वालोंको अन्धतामिस्र नामक नरकमें

Shri Prannath Ji Pustkalay

जाना पडता है. अतः उससे बचनेके लिए आत्मकल्याणका मार्ग अपनाना आवश्यक है.

मृत्युके समय जब अपने किये हुए प्रत्येक कर्मोंकी स्मृति होगी, तब समय व्यतीत हो चुका होगा. उस समय एक महा कारुणिक दुःखद स्मृति साथ लेकर जीवको प्रस्थान करना पडेगा. अतः पहले ही सावचेत हो जाना बुद्धिमानी है.

संसारको नश्वर समझकर मायिक पदार्थोंको ही सत्य माननेवाला प्राणी छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेष, मद, मत्सर, काम, क्रोध, अहंकार, परछिद्रान्वेषण शोषण और खोषणमें ही व्यस्त है. किन्तु इसका अन्त तो अवश्यंभावी है और इन कर्मोंसे सुखकी आशा दुराशा मात्र है.

यदि आजके समान ही युगका प्रवाह चलता रहा तो अधार्मिक और नास्तिकोंकी अधिकतासे संसारका नाश निकट भविष्यमें ही मान लेना असंगत न होगा.

प्राचीन कालमें भारत–वर्षका गौरव इसके अध्यात्म ज्ञानके ही कारण था. इसीलिए मनुजीने लिखा है कि–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ।।

पृथ्वीके दूसरे देशमें निवास करने वाले मनुष्य इस देशमें उत्पन्न होने वाले विद्वान ब्राह्मणोंसे शिक्षा ग्रहण करने आते थे. वह शिक्षा अध्यात्म ज्ञानकी ही थी. आज अपने अध्यात्म ज्ञानको भारत वर्ष भूल चुका है. आज पाश्चात्य भौतिक वादके सिद्धांतको अपनाकर यह जितनी अपनी उन्नति करना चाहता है, उतना ही

Shri Prannath Ji Pustkalay

अवनतिके गर्तमें गिरता चला जा रहा है. यह ठीक है कि दूसरे देशसे आया हुआ यह कुहरा एक दिन अवश्य नष्ट हो जायेगा, किन्तु तब तक भारतवर्षको विकृत कर जायेगा.

यह असत्य निश्चय ही जग में नष्ट एक दिन होगा ।
पर तब तक वह बुरी तरह से क्षत विक्षत कर देगा ।।
सत्य महान् उसी की जगमें विजय अन्तमें होगी ।
पर उस क्षण तक उसे देखने बैठा कौन रहेगा ।।

इसलिये अध्यात्म मार्ग जो हिन्दू संस्कृतिका सबसे ऊँचा सिद्धान्त है, उसको अपनाना मत भूलिये. श्री निजानन्द सम्प्रदाय अथवा श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके आचार्यने अध्यात्म ज्ञानके उच्चतम सिद्धान्तका बड़ा ही सुन्दर और सरल विवेचन किया है.

इसलिये ऐहिक और पारलौकिक सुखके चाहने वाले धार्मिक ज्ञान पिपासु मनुष्योंका कर्त्तव्य है कि इस पुस्तकको आद्योपान्त पढ़ें और उसका मनन करें.

प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कृष्ण प्रणामी धर्मके संस्थापक और प्रवर्तक निजानन्द स्वामी श्रीदेवचन्द्रजी और महाप्रभु श्री प्राणनाथजीका संक्षिप्त जीवन, श्रीनिजानन्द साम्प्रदायिक नियम, पद्धति, बुन्देलखण्ड केशरी धर्मवीर महाराजा छत्रसालजीका धार्मिक मार्ग और महाप्रभु श्री प्राणनाथजी द्वारा निर्मित श्रीमत्तारतम सागर ग्रन्थका निष्कर्ष रूप प्रकट वाणी गुम्फित है.

उपरोक्त विषय लेखकका स्वकपोलकल्पित सिद्धांत नहीं है, किन्तु वेद, पुराण सम्मत महाप्रभु स्वामी श्रीप्राणनाथजीका अनुभवगम्य सिद्धांत ही एकत्रित किया गया है, फिर भी –

गच्छतस्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः ।।

सिद्धांतानुसार भूल हो जाना भी मानवी स्वभावमें ही सन्निहित

Shri Prannath Ji Pustkalay

है, अतः उसके लिए पाठकगण क्षमा करेंगे.

यहां पर यह लिख देना भी आवश्यक है कि महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने प्राणीमात्रके साथ एकात्म भावना और विश्वबन्धुत्वके व्यवहारका पालन करनेका ही उपदेश किया है. ऐसी अवस्थामें इन सिद्धान्तोंको पढकर किसी साप्रदायिक पक्षपाती सज्जनके हृदयमें कष्टका अनुभव नहीं होना चाहिए. क्योंकि ये सिद्धांत किसीको कष्ट पहुंचानेके लिये नहीं लिखे गये हैं और न ही किसीके सिद्धांतोंके खण्डनका उद्देश्य ही है. क्योंकि –

विद्या विवादाय धनं मदाय शक्ति : परेषां परपीड़नाय ।
खलस्य साधोर्विपरीतमेततत्ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥

दुष्टोंके पास विद्या विवादके लिये, धन मदके लिए और शक्ति दूसरोंको कष्ट पहुंचानेके लिए होती है. वही विद्या, धन और शक्ति सज्जनोंके पास हो तो ज्ञान, दान और दूसरोंकी रक्षाके लिए होती है.

महाप्रभु स्वामी श्रीप्राणनाथजीका सिद्धान्त परिष्कृत, सत्य और सुन्दर होने के साथ-साथ जनकल्याणके लिए पर्याप्त है, अतः इसका प्रकाशन आवश्यक था. फिर भी किसीको विपरीत अर्थाभास हो तो आश्चर्य ही है.

भले भलाई पै लहहिं, लहहिं नीचाई नीच ।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥

फिर भी मेरी यह सनम्र प्रार्थना है कि जो भी सज्जन पक्षपातकी पक्षपातकी भावना त्यागकर इसे पढ़नेका कष्ट करेंगे उनके लिए यह अवश्य लाभदायक सिद्ध होगा. यद्यपि इस सम्बन्धमें अनेकों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, फिर भी सरल हिन्दी भाषामें जनसाधारणको लाभ पहुंच सके, इस उद्देश्यसे यह प्रयास किया गया है.

निवेदकः
महन्त कृष्णदास शास्त्री

Shri Prannath Ji Pustkalay

।। श्रीकृष्णपरमात्मने नमः ।।
।। श्रीनिजानन्दो विजयते ।।

अथ विज्ञान सरोवर

प्रणम्य परमात्मानं निजानन्दं महाप्रभुम् ।
प्राणनाथेन निर्दिष्टं मार्ग वच्मि सुखास्पदम् ।।
ब्रह्मानन्द – रसज्ञानां जनकल्याण – हेतवे ।
पद्धतिं ब्रह्मसृष्टीनां वर्णनं च करोम्यहम् ।।
निजानन्दके चरितकी, गाथा उदधि महान ।
मैं चाहत वर्णन करूं, मम है बुद्धि अजान ।।
जगदाधार जगत्पते, पूर्ण ब्रह्म श्रीराज ।
विनवौं द्वौकर–बद्ध हो, सिद्ध करो सब काज ।।

श्री निजानन्द स्वामीका जीवनवृत्त :–

श्री निजानन्द स्वामी सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीका जन्म विक्रम सम्वत् १६३८ में मारवाड प्रदेशके उमरकोट नामक ग्राममें, आश्विन शुक्ल चदुर्दशीको ब्रह्ममुहूर्तमें हुआ था. आपके पिताका नाम मतुमहेता और माताका नाम कुँवरबाई था. आप दोनों ही श्रीकृष्णके अनन्य भक्त थे. एक दिन सायंकाल कुँवरबाईजी श्रीकृष्णके ध्यानमें निमग्न थीं तो उस समय उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि चन्द्रमा आकाशसे उतरकर हमारे मुखमें प्रवेश कर रहा है. मतुमहेताजीने

Shri Prannath Ji Pustkalay

दैवज्ञोंको बुलाकर इसका कारण पूछा तो ज्योतिषियोंने बतलाया कि तुम्हारे घर पुत्र उत्पन्न होगा. समय पर पुत्र रत्नकी उत्पत्तिसे मेहताजीको बडी प्रसन्नता हुई. विद्वान् और महात्माओंने लग्नानुसार यह जाना कि इनके ज्ञानका प्रकाश चन्द्रवत् शीतल होगा. अतः देवचन्द्र नाम रख दिया. जात कर्म और नामकरण संस्कारके बाद बड़े प्यारसे देवचन्द्रजीका लालन-पालन होने लगा. जब इनकी अवस्था पांच वर्षकी हुई तभी परिष्कृत संस्कारके कारण मनमें यह शंका उत्पन्न हो गई कि – **कोऽहं कश्चास्ति संसारः**. मैं कौन हूं ? यह संसार क्या है ? इस शंकाके समाधानके लिए प्रत्येक महात्माओंके साथ सत्संग करना इनका नित्य नियम हो गया था. इसी उद्देश्यको लेकर आश्रमोंमें श्रेष्ठ-संन्यास आश्रममें दीक्षित ज्ञान सम्पन्न संन्यासी महात्माओंसे प्रश्न किया –

प्रथमहिं मत संन्यासके, पूछ्यो पद निरवान ।
पारब्रह्म क्यों पाइए, आप होई पहिचान ।।
माया कहिये कौन विधि, उत्पत्ति लय किहि ओर ।
जीव कहा ते आइयो, है प्रापत किहि खोर ।।

इस प्रकार दशनाम संन्यासियोंसे पूछने पर उन्होंने अपने मत, मन्या, मठ, सिद्धान्त और पद्धतिका विस्तारपूर्वक वर्णन किया और अपनी शिक्षा – दीक्षासे विभूषित कर अपने आचार, व्यवहार और नियमके पालनकी विधि बतलाई. श्रीदेवचन्द्रजीने उनके कथनानुसार नियमोंका पालन किया, किन्तु मानसिक सन्तोष न हुआ. अतः उनके सिद्धांतसे विरक्त होकर आपने अन्यत्र जानेकी इच्छा की. आपके पिताजी कच्छ देशमें व्यापारके लिये आया जाया करते थे. इसलिये आप भी तेरह वर्षकी अवस्थामें ही अपने पिताजीके साथ

Shri Prannath Ji Pustkalay

कच्छ चले गये. कच्छ उस समय एक धर्मप्राण देश था. वहां विद्वानों और महात्माओंकी अधिकता थी. बड़े–बड़े दार्शनिक पण्डित वहां निवास करते थे. उनके सत्संगसे श्रीदेवचन्द्रजीने वेदोंका सारभूत **प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म, अहं ब्रह्मास्मि तत्त्वमसि** और **अयमात्मा ब्रह्म** आदि द्वादश महावाक्योंका अध्ययन किया. इसके अतिरिक्त हर शास्त्रों और हर दर्शनोंका भी मंथन किया. किन्तु –

चारवेद षट् शास्त्र मत, करि चित्त लखे विवेक ।
मुक्ति दूर सबतें रही, करि क्रिया बहु कष्ट ।।
आचारज गुरु मत जेते, वेद व्यास बहु इष्ट ।।

(वृत्तान्त मुक्तावली)

इस प्रकार इन सिद्धान्तोसे भी सर्वदाके लिये आत्माको मुक्त करनेका मार्ग न निकल सका.

उसी कच्छके प्रसिद्ध शहर भूजनगरमें हरिदास नामके एक प्रसिद्ध महात्मा निवास करते थे. हरिदासजी पहुंचे हुये सन्त थे. उनको भक्ति और ज्ञानका स्वरूप कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी. श्रीदेवचन्द्रजीको हरिदासजीका दर्शन प्राप्त हुआ और तीन महीने तक सत्संग करनेसे आत्माको कुछ शांति मिली. किन्तु माता – पिताके वात्सल्य प्रेमके कारण हरिदासजीकी आज्ञा पाकर शीघ्र ही उमरकोट लौट आना पड़ा. यहां आकर भी श्री देवचन्द्रजी सांसारिक पदार्थोंमें आसक्त न हो सके. आपके हृदयमें आध्यात्मिक मार्गके अन्वेषणकी जो ज्वाला जल रही थी उसने शांत नहीं बैठने दिया. उमरकोटमें रहकर आपने पिण्ड और ब्रह्माण्डके तत्त्वों पर दृष्टिपात किया और देखा कि प्रकृतिसे लेकर शेषनाग पर्यन्त सारे विश्वका स्वरूप क्या है ? शरीरमें निवास करने वाली इन्द्रियां, मन, चित्त,

Shri Prannath Ji Pustkalay

बुद्धि, अहंकार, दश प्राणवायु, सत, रज, तम, गुण और पंच कोशोंका आकार क्या है ? अन्तमें आप इस निश्चय पर पहुंचे कि –

ये सब अनात्म जड़ कहें, इनते परे है ब्रह्म ।
तहँ मन वचन पहुंचे नहीं, तो मिटे कैसे भ्रम ।।

अतः आपने आत्मिक शांतिके लिये कच्छ देशमें श्रीहरिदासजीके पास ही जाना उचित समझा. किन्तु एकाकी जानेका कोई साधन न था. एक बारात कच्छ देशको जा रही थी और वह उमरकोटके मन्त्रीकी ही बारात थी, लेकिन उसके साथ जानेमें आप निष्फल रहे. माता–पिता भी अपने जीवनाधार एक ही पुत्रको अपनेसे पृथक नहीं करना चाहते थे. उनकी आज्ञाके बिना चले जाना भी मार्गमें प्रधान रुकावट थी. किन्तु जिसको ब्रह्मानन्दरस पान करनेकी इच्छा होती है, उसके मार्गकी सब रुकावटें स्वतः दूर हो जाती है और वह मायिक विघ्नोंकी चिन्ता नहीं करता. श्री देवचन्द्रजी मारवाड़के जनशून्य रेतीले मार्गसे अकेले ही चलनेके लिए घरसे निकल पड़े. जिसका कोई नहीं उसका साथ परमात्मा देता है. घोर अन्धकारमयी रात्रिमें पवनके प्रबल वेगसे पहाड़के समान दिखाई पड़ने वाले रेतकणसे मार्ग ढक चुका था. उसमें परमात्माका प्रेमी सत्रह वर्षका बालक प्रभुके ध्यानमें निमग्न होकर अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंचनेके लिए शीघ्रताके साथ कदम बढ़ाना चाहता था, लेकिन रास्ता बताने वाला कोई न था. भगवान तो भक्तोंके साथ ही रहते हैं. जिसका मार्ग दर्शक कोई न हो, उसको परमात्मा ही मार्ग बताता है. अतः परमात्मा ही पथ प्रदर्शकके रूपमें प्रकट हो गये.

मारवाड़के निर्जन प्रदेशमें डाकुओंका अधिक भय रहता है. अतः सिपाही भेषमें परमात्माको देखकर श्री देवचन्द्रजी एकबार

Shri Prannath Ji Pustkalay

भयभीत हो गये. लेकिन भयको भी भयभीत करने वाले परमात्माने क्षण मात्रमें इनके भयको दूर कर दिया और इनको सान्त्वना देकर इनके पीछे चल पड़े. श्री देवचन्द्रजीको गन्तव्य स्थान पर पहुंचाकर वह सिपाही तो अन्तर्हित हो गया और श्री देवचन्द्रजी अल्पकालीन परमात्म–दर्शनकी सुखद स्मृति अपने हृदयपट पर अंकित कर उनके वियोगमें व्याकुल मन लिये कच्छमें जा पहुंचे.

कच्छ देशके तात्कालीन राजगुरु नाथ संप्रदाय वाले थे. अतः उनके सिद्धांतको भी जान लेना उचित समझकर श्री देवचन्द्रजीने उनसे प्रश्न किया –

तिनसों जिज्ञासा करी, पूछ्यो निज कल्यान ।
कहाँ बद्ध कहाँ मोक्ष है, मोसों कहिये ज्ञान ।।

आपका प्रश्न सुनकर नाथ सम्प्रदाय वालोंने मुक्ति मार्गका साधन अष्टांग योग बतलाया. आपने उनके उपदेशानुसार यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि रूप अष्टांग योगका विधिवत् पालन किया. और साथ–साथ शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधान और विश्वास इन छः उपांगोंके पालनसे भी परमात्माको पानेका प्रयत्न किया. किन्तु अष्टांग योग और छः उपाङ्गोंसे भी मुक्ति मार्ग उपलब्ध न हो सका. इनसे उदासीन होकर श्री देवचन्द्रजीने मुस्लिम ग्रन्थका भी निरीक्षण कर लेना उचित समझा. अतः कुरानके मर्मज्ञ मुसलमानसे जानकारी प्राप्त कर उनके मजहबका भी आपने मंथन किया.

सुनी उनकी बातें सबै, सतगुरु कही जु एह ।
सूरत नहीं खुदायकी, हुकुम करे क्यों तेह ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

सूरत बिना हुकुम नहीं, क्यों महंमद बरहक ।
हैयात नबी मासूक क्यों, एही बड़ी है सक ।।
क्यों रसूल थे हक पै, क्यों लाये फुरमान ।
आखिर को क्यों आवसी, यह कर देउ पहिचान ।।

इन प्रश्नोंका यथार्थ उत्तर मौलवी, काजी कोई भी न दे सका. अतः उनसे पृथक् होकर –

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करे सो तस फल चाखा की तरफ अपना ध्यान आकृष्ट किया. किन्तु निष्कर्ष यह निकला कि शास्त्रवर्णित कर्म कांडके पालन करने वाले भी सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण वृत्तिके कारण स्वर्गलोक, मृत्युलोक अथवा अधोलोकमें ही रह जाते हैं और चौरासीलाख योनियोंसे उनका छुटकारा नहीं होता. इस प्रकार प्रत्येक मतमतान्तर शास्त्र पुराण निर्दिष्ट मार्ग और महात्माओं द्वारा उपदिष्ट सिद्धांतोंका अवगाहन करने पर यही निष्कर्ष निकला कि सभी सिद्धांतवादी साकार–निराकारके झगड़ेमें ही व्यस्त हैं. इनके द्वारा उपदिष्ट मार्गका अवलम्बन करने पर भी चतुर्दश भुवनात्मक ब्रह्मांडसे इस जीवको छुट्टी नहीं मिलती. इनके उपास्य देव भी मायाके चक्रमें ही भ्रमण करते हैं और अन्ततोगत्वा उन्हें भी काल कवलित होना ही पड़ता है.

अतः इस मायाजन्य संसारके बन्धनसे मुक्त करानेवाला परमार्थ तत्त्वज्ञ महात्माका दर्शन कहां प्राप्त होगा ? इसी चिन्तनमें निमग्न श्री देवचन्द्रजीको महात्मा श्री हरिदासजीका ध्यान आ गया और आप महात्माजीके पास जा पहुंचे.

कच्छ देशमें निवास कर अध्यात्म मार्गके अन्वेषणमें श्री

Shri Prannath Ji Pustkalay

देवचन्द्रजीको चार वर्ष व्यतीत हो चुके थे. पुत्र वियोगमें उनके माता–पिता बहुत दुःखी थे. और मेहताजीने कई बार आकर महात्मा श्री हरिदासजीसे पूछा भी था किन्तु श्रीदेवचन्द्रजीका कहीं पता न था. श्रीहरिदासजीकी आज्ञानुसार श्री देवचन्द्रजीने सबसे प्रथम पत्र लिखकर अपने माता–पिताको भी भूजनगरमें ही बुला लिया और स्वयं महात्माजीकी सेवामें तल्लीन हो गये. क्यों कि –

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ।। (गीता ४.३४)

नम्रता और सेवाके बाद ही प्रश्न करने पर तत्त्वदर्शी महात्मा ज्ञान उपदेश करते हैं. इसी सिद्धांतके अनुसार श्रीदेवचन्द्रजीने अपनी भक्तिसे महात्मा हरिदासजीको प्रसन्न कर लिया. प्रसन्न मन हरिदासजीने श्रीदेवचन्द्रजीको मन्त्र–दीक्षासे विभूषित करनेका निश्चय किया. उधर इनके माता–पिताने विवाह बन्धनमें बांधकर विरक्त होते हुए पुत्रको संसारमें लिप्त करनेका विचार भी कर लिया. संयोगवश दोनों कार्योंके लिए एक ही तिथि चुनी गयी. श्रीदेवचन्द्रजी प्रातःकाल ही क्षौरादि नित्य कर्मसे निवृत्त होकर गुरुकी सेवामें पहुंच गये. महात्मा हरिदासजीकी आज्ञानुसार मन्त्र ग्रहण कर जब घर पहुंचे तो उनके माता–पिताने इनका उदासीन भेष देखकर बहुत पश्चात्ताप किया और पूछा कि आज श्रृंगारके समय इस भद्रभेषकी क्या आवश्यकता थी ? श्रीदेवचन्द्रजीने कहा कि नाशवान् शरीरके साथ शरीरका सम्बन्ध निरर्थक है. चेतन आत्माका पति परमात्मा है और मैं अपना सम्बन्ध उससे कर चुका हूं. अब मुझे सांसारिक सम्बन्धकी जरूरत नहीं है. किन्तु इनके माता–पिताने हठात् इनको विवाह बन्धनमें बांध ही दिया. लेकिन जिसका मन परमात्माके

Shri Prannath Ji Pustkalay

स्वरूपमें रम रहा है, उसका मायिक पदार्थोंसे क्या सम्बन्ध हो सकता है ? श्री देवचन्द्रजी तो महात्मा हरिदासजीकी सेवाके साथ-साथ प्रभु भक्तिमें ही अपना समय व्यतीत करते थे.

महात्मा हरिदासजीने श्री देवचन्द्रजीको अपनी सेवामें अधिक परिश्रम करते हुए देखकर सोचा कि इनको भगवान बाल मुकुन्दजीकी मूर्ति दे दूं. इससे यह अहर्निश प्रभु भक्तिमें ही लगे रहेंगे और मेरी सेवाके अधिक परिश्रमसे भी छूट जायेंगे किन्तु भगवान बाल मुकुन्दजीको यह बात पसन्द न थी. श्रीदेवचन्द्रजीकी आन्तरिक शक्तिका उन्हें आभास हो गया था और उनसे सेवा कराना बाल मुकुन्दजीको अभीष्ट नहीं था. इसलिये नियत तिथिको बाल मुकुन्दजीकी मूर्ति सिंहासनसे अन्तर्हित हो गई. इससे महात्मा हरिदासजीको और उनके सेवक समुदायको महान कष्ट हुआ. दिन भर निराहार व्रत कर सब लोग इस प्रार्थनामें निमग्न रहे. रातको ध्यानावस्थामें दर्शन देकर बालमुकुन्दजीने हरिदासजीसे कहा कि तुम श्री देवचन्द्रजीकी शक्तिको नहीं जानते. ये पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णके आनन्द अंग है. इसलिए मैं इनकी सेवाका भार स्वीकार करनेमें असमर्थ हूं. तुम मेरी मूर्ति इनको नहीं देना. मैं अब अपने सिंहासन पर ही आसीन हूं. ध्यानसे उठकर हरिदासजीने भगवानका दर्शन किया और अपनेको कृतकृत्य समझा. श्री देवचन्द्रजीका महत्त्व जानकर अपनी सेवा करानेके लिए हार्दिक पश्चात्ताप किया और प्रातः काल क्षमा मांगने के लिए श्री देवचन्द्रजीके घर जाते समय मार्गमें मुलाकात हुई तथा अपनी अज्ञानताके लिए क्षमा मांगी.

श्री देवचन्द्रजी तो महात्मा हरिदासजीसे प्राप्त मन्त्रका ही जाप

Shri Prannath Ji Pustkalay

करते रहे और उससे आपको ध्यानावस्थामें अखंड व्रजमंडल और उसके अध्यक्ष प्रभु श्रीकृष्णजीका दर्शन प्राप्त हो गया.

कुछ दिनोंके बाद उनकी अन्तरात्माकी आवाज आई कि तुम जामनगर चले जाओ वहां तुमको परमात्माके साक्षात् दर्शन होंगे. अतः आप अपने माता–पिताके साथ जामनगर चले आये और वहीं अपना निवास स्थान बना लिया.

गुजरातके सौराष्ट्र क्षेत्रमें जामनगर एक प्रसिद्ध नगर है. विद्याका भी वह एक महत्त्वपूर्ण स्थान है. इसलिए उसको लोग छोटीकाशीके नामसे पुकारते हैं. वहां प्रसिद्ध कथा वाचकोंमें कानजी भट्ट नामके एक उद्भट विद्वान श्यामजीके मन्दिरमें नित्य श्रीमद्भागवतकी कथा किया करते थे. श्रीदेवचन्द्रजी भी कृष्णलीला रसपानके लिए नित्य नियमसे मन्दिरमें जाने लगे. चौदह वर्ष तक निर्विघ्न नियमपूर्वक कथा श्रवण करनेके बाद तपस्या पूरी हुई. परमात्माका आसन हिला और पूर्णब्रह्म परमात्माने– **द्विभुजं मुरलीहस्तं रत्नभूषणभूषितम्** के रूपमें प्रकट होकर श्रीदेवचन्द्रजीको दर्शन दिया.

पूर्णब्रह्म परमात्माके देदीप्यमान तेजोमय रूपको देखकर श्री देवचन्द्रजीकी आत्मा प्रसन्न हो गई. जिसको प्राप्त करनेके लिये पांच वर्षकी अवस्थासे ही श्रीदेवचन्द्रजी अथक परिश्रम कर रहे थे, वह पिपासा आज शांत हो गई. दशों दिशाओंको आलोकित करने वाले अपने आराध्य देवके मनोहर रूपको देखकर श्री देवचन्द्रजीने अपना मस्तक उनके युगल चरणोंमें रख दिया. पूर्णब्रह्म परमात्माने श्री देवचन्द्रजीको उठाकर अपने हृदयसे लगा लिया और अपना वरदहस्त मस्तक पर रखकर मायाजन्य विकारोंको दूर कर दिया.

Shri Prannath Ji Pustkalay

परम प्रभुके स्पर्शसे श्रीदेवचन्द्रजीका हृदय विकसित हो गया और वेद, शास्त्र, पुराणोंमें वर्णित अध्यात्म मार्गका गहन पथ हस्तामलकवत् भासने लगा.

परमात्मा स्वरूप अक्षरातीत श्रीकृष्णने कहा कि जिस परमात्माको प्राप्त करने और जाननेके लिए तुमने घोर कष्ट सहन किया है, वह मैं हूं मेरा स्थान परमधाम है, जो चतुर्दश भुवनात्मक ब्रह्मांड, अष्टावरण, गायत्री, सातशून्य, महाविष्णु, अव्याकृत, सबलिक, केवल, सत्स्वरूप, और अक्षरब्रह्मसे भी पर है. वहां सूर्य और चन्द्रमाके प्रकाशकी आवश्यकता नहीं किन्तु वह स्वयं प्रकाशमय है और वहां आत्मा पहुंचकर सदा – सर्वदाके लिये आवागमनसे रहित हो जाती है. वहांका प्रत्येक पदार्थ चेतन और पूर्ण है. तुमको वेद, शास्त्र, पुराण, भागवत, गीता एवं अन्य धर्मग्रन्थादि भी इसकी साक्षी देंगे.

तुम भी मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्माके आनन्द अंग हो. तुम्हारे ही समान उस ब्रह्मधाममें निवास करनेवाली मेरी अन्य शक्तियां इस मायाजन्य खेलको देखने आई हैं. उनको मैंने ही भेजा है और उनको जागृत कर परमधाममें ले आनेके लिये तुमको भी मैंने ही भेजा है. क्योंकि तुम उनमें प्रधान हो.

जिस मायाको तुम देख रहे हो इसकी वास्तविकता कुछ नहीं है. यह केवल दृश्यमात्र है और स्वप्नवत् नाशवान् है. काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष, मद, मत्सर यही इस मायाके शस्त्र हैं. जिनसे चौदह लोकके प्राणियोंको इसने मोहित कर रखा है. आकाश, पाताल, सागर, शिखर सब जगह इसकी पहुंच है. इसके भ्रामक ज्ञानमें पडे हुए प्राणी परमात्माको पहचाननेमें असमर्थ हैं.

Shri Prannath Ji Pustkalay

आत्मपथके पथिक कितने महात्मा–सन्त भी इस मायाके विकारोंसे अछूते नहीं हैं. उनके अन्दर भी आशा तृष्णारूपी वायुका प्रबल वेग उमडता ही रहता है. अरे ! मृत्युलोकके मानवकी तो बात ही क्या स्वर्ग, वैकुंठ, कैलाश आदि स्थानोंमें निवास करनेवाले देवता भी –

माययावेष्टिताः सर्वे भ्रमन्ति भववर्त्मनि ।

मायाके विकारोंसे आवेष्टित होकर आवागमनके चक्रसे छुटकारा नहीं प्राप्त कर पाते. इसलिए तुम आजसे शुद्ध सनातन सत्य मार्गका प्राणियोंमें प्रचार करो. साकार और निराकारके झगडेमें पडने वाले मानव समाजको पूर्ण ब्रह्म परमात्मा श्री कृष्णके वास्तविक स्वरूपका ज्ञान दो. भक्तिका वह सुलभ मार्ग प्रदर्शित करो जिस पर चलकर लोग आसानीसे परमात्माको प्राप्त कर सकें.

मैं अपने नामका महामन्त्र जो सब मन्त्रोंमें उत्तम है, तुमको देता हूं और मैं आजसे तुम्हारे ही हृदयमें निवास करूंगा. मेरे प्रकाशसे तुम्हारा हृदय सदा आलोकित रहेगा. तुम मेरे ही आनंद अंग हो. इसलिये संसारमें निजानन्दके नामसे तुम्हारी प्रसिद्धि होगी. इस प्रकार पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण – श्रीराजजीने अपना परिचय श्रीदेवचन्द्रजीको कराकर तारतम मंत्र प्रदान किया. अक्षरातीत श्रीकृष्णको ही एक मात्र अपना इष्ट मानकर प्रणाम करनेसे इसे श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म कहा गया. श्रीदेवचन्द्रजी स्वयं निजानन्द स्वरूप थे. उनके द्वारा प्रतिपादित मार्ग होनेसे इसे निजानन्द संप्रदाय भी कहा जाता है. उपरोक्त बातोंका उपदेश देकर परमात्मस्वरूप श्रीकृष्णजी अन्तर्हित होकर श्रीदेवचन्द्रजीके हृदय सिंहासन पर विराजमान हो गये. आज भी जामनगरमें वही श्यामजीका मन्दिर

Shri Prannath Ji Pustkalay

मौजूद है, और कोई न कोई विद्वान श्रीमद्भागवतकी कथा करते हैं. आज भी उस मन्दिरमें श्रीदेवचन्द्रजीका चरण चिन्ह (पादुका) अंकित है. दर्शनार्थी भक्तजन आज भी दर्शनकर अपने जीवनको सफल समझते हैं.

जामनगरमें श्रीकृष्ण प्रदत्त ब्रह्मज्ञान ग्रहण करनेका योग्य पात्र गांगजी भाईको समझकर श्रीनिजानन्द स्वामीने उनको ही सर्वप्रथम श्रीकृष्ण महामन्त्रका उपदेश दिया. उसके बाद इस परमार्थ पथका प्रसार होने लगा. कुछ दिनों तक गांगजी भाईके घरपर ही रहकर श्रीनिजानन्द स्वामी उपदेश करते रहे. अन्तमें शहरके बाहर एक बगीचामें पर्णकुटी बनाकर उसमें रहने लगे. वहां ब्रह्मानन्द रस पान करने वाले भक्तोंकी संख्या बढने लगी. एक रोज हजारों भक्तोंने जमुनाजीमें स्नान करनेकी प्रार्थना की तो श्रीनिजानन्द स्वामीने दीवालमें लकीर खींचकर जमुनाजीकी धारा प्रवाहित कर दी और भक्त मण्डलीने स्नानकर तृप्तिका अनुभव किया. वह स्थान आज भी उसी रूपमें मौजूद है और जमुनाजी भी कुण्ड (कूवा) के रूपमें प्रसिद्ध है. एक रोज भक्तजनोंने निजानन्द स्वामी श्रीदेवचन्द्रजीसे प्रार्थना की थी कि– हे सद्गुरु धामधनी भविष्यमें इस धर्मका प्रचार – प्रसार कहांसे होगा ? तब सद्गुरुने खीजड़ा वृक्षका दन्तधावन (दातून) कर एक फांक आपने जमीनमें स्थापित कर दिया और कहा यहांसे आगे प्रचार – प्रसार होगा तथा समस्त प्रणामी समाजका यह आद्यधर्म पीठ – मूलस्थान कहलायेगा. इसीलिए सद्गुरु गांगजीभाईके घरसे निकलकर इस स्थानमें आकर रहने लगे. बादमें लगाया हुआ दातून भी एक वृक्षके रूपमें परिणत हो गया. उसी वृक्षसे आज भी इस स्थानकी प्रसिद्धि है और इस

Shri Prannath Ji Pustkalay

स्थानको लोग खीजड़ा मन्दिरके नामसे पुकारते हैं. आज उस पर्णकुटीकी जगह गगनचुम्बी निवास स्थान बन गया है. और मध्यमें मन्दिर अपनी अपार शोभाको धारण करके स्थित है. मन्दिरसे सटा हुआ ही खीजड़ाका वृक्ष है, जो अध्यात्म मार्गका द्योतक बनकर भक्तोंकी आस्तिक बुद्धिको प्रोत्साहित करता रहता है.

श्रीनिजानन्द संप्रदायके ब्रह्मज्ञानका नूतन मार्ग जामनगरमें ही प्रस्फुटित हुआ इसलिये जामनगरको नवतनपुरी कहते हैं और यही धाम इस संप्रदायका मूल–प्रधान तीर्थ स्थान है. आज भी हजारोंकी संख्यामें नर–नारी एकत्रित होकर उस स्थानका दर्शन करते हैं और अपने जीवनको धन्य समझते हैं. श्रीनिजानन्द स्वामीने विक्रम सम्वत् १७१२ में इहलीला समाप्त की. श्री निजानन्द स्वामीके जीवन चरित्रका यहां सूक्ष्म दिग्दर्शन मात्र कराया है. जो श्रद्धालु सज्जन विस्तार पूर्वक देखना चाहें उन्हें वृत्तान्त मुक्तावली अथवा श्रीनिजानन्द चरितामृत पढ़नेका कष्ट करना चाहिए.

बोलो श्रीनिजानन्द स्वामीकी जय !

श्रीप्राणनाथजीका जीवनवृत्त :–

जामनगरमें केशव ठाकुर नामके एक लववंशीय क्षत्री रहते थे, जो राज्यके प्रधानमंत्री पद पर प्रतिष्ठित थे. उनके हरिवंश ठाकुर, शामलजी ठाकुर, गोवर्धन ठाकुर, मेहराज ठाकुर और उद्धव ठाकुर पांच पुत्र थे. गोवर्धन ठाकुर श्री निजानन्द स्वामीके पास कथा श्रवण करनेके लिए जाने लगे. संस्कार शुद्ध होनेके कारण इन्होंने शीघ्र ही दीक्षाग्रहण कर ली और अपने आपको सद्गुरुकी सेवामें अर्पण कर दिया.

Shri Prannath Ji Pustkalay

गोवर्धन ठाकुरके छोटे भाई मेहराज ठाकुरने भी सत्संगमें जानेका आग्रह किया. उस समय इनकी अवस्था १२ वर्षकी थी. गोवर्धन ठाकुरने श्री निजानंद स्वामीसे पूछा कि हे सद्गुरु धामधनी ! मेरा छोटा भाई आपकी सेवामें सत्संगका लाभ लेनेके लिए आना चाहता है. क्या यह ठीक होगा कि एक बालकको संसार मार्गसे हटाकर ब्रह्मज्ञानके मार्ग पर चलाया जाय ? और क्या वह ब्रह्मज्ञान ग्रहण करनेका पात्र बन सकता है ?

श्रीनिजानंद स्वामीने कहा कि जिसको तुम संसार समझ बैठे हो, वह तो असार है और अन्तमें इसे त्यागना ही पड़ेगा. जो लोग संसारको छोड़ना नहीं चाहते, संसार तो उनको छोड़ ही देता है. नश्वर पदार्थोंमें अपने आपको व्यस्त कर सत्य वस्तुकी ओरसे आंख बन्दकर लेना तो बुद्धिमानी नहीं है और ब्रह्मज्ञानका पात्र तो आत्माकी शुद्धि पर निर्भर है. ध्रुव और प्रह्लाद आदि भक्तोंने बाल्य–कालमें ही भक्ति कर उस सृष्टि नियन्ताको वशीभूत कर लिया था, जो जन साधारणके लिए दुर्लभ है. इसीलिए शीघ्र ही अपने भाईको मेरे पास ले आओ.

श्री निजानन्द स्वामीकी आज्ञा पाकर गोवर्धन ठाकुर अपने छोटे भाई मेहराज ठाकुरको सद्गुरुकी शरणमें ले गये. सद्गुरुने श्री मेहराज ठाकुरका तेजोमय स्वरूप देखकर समझ लिया कि इनके अन्दर परमात्माकी दी हुई अलौकिक शक्ति छिपी है. और उसके प्रस्फुटित होने पर सारे संसारमें ज्ञानका प्रकाश फैल जायेगा. इस प्रकार जानकर श्रीनिजानन्द स्वामीने इनको अपने हृदयसे लगा लिया और अलौकिक ब्रह्मज्ञानकी शिक्षा देकर श्रीकृष्ण महामंत्र (तारतममंत्र) प्रदान किया.

Shri Prannath Ji Pustkalay

श्री निजानंद स्वामीने श्री मेहराजको सम्बोधित करते हुए कहा कि शुद्ध सनातन ब्रह्मज्ञानसे संसारको आलोकित करनेके लिए ही परमात्माने तुमको भेजा है. परमात्माकी दी हुई अद्‌भुत शक्ति तुम्हारे अन्दर मौजूद है. वेद, शास्त्र, पुराण और महात्माओंके धर्म ग्रन्थोंका निष्कर्ष जो आज तक गुप्त है, उसका संसारके प्राणियोंमें प्रचार करो. अनात्मा (शरीर) और आत्माकी ग्रन्थिको सुलझा दो. मनुष्य जीवनकी सफलताका महान उद्देश्य संसारके सामने स्पष्ट कर भूले हुए प्राणियोंको सीधे रास्ते पर चलनेके लिए प्रेरित करो. परमात्माके वास्तविक स्वरूपका ज्ञान देकर लोगोंको कर्मयोगका पाठ पढाओ. इस श्री कृष्ण प्रणामी निजानंदीय झंडेके नीचे सारा विश्व एकत्रित होगा. संसारमें प्रचलित भिन्न भिन्न सम्प्रदायवादियोंके विरोध और अहंकारको दूरकर उनके हृदयमें सात्विक भावना भरो. और उन्हें ज्ञान करा दो कि सारी सृष्टिका मालिक एक ही है शारीरिक भिन्नताके अन्धकारमें पडे हुए मानव समाजको परमार्थ तत्त्वका उपदेश देकर आत्माकी महान् व्यापकताका मर्म स्पष्ट कर दो, जिससे मोह और अहंकारमें पडे हुए मनुष्य अपने स्वरूपको जानकर ऐहिक और पारलौकिक उन्नति प्राप्त कर सकें. तुम्हारी आत्मिक शक्ति महान् है. तुम्हारे ज्ञानके प्रतापसे सारी सृष्टिका भजन और भोजन एक ही हो जायेगा.

इस प्रकार श्री निजानंद स्वामीके मुखसे अपनी आत्मिक शक्तिका स्वरूप जानकर श्री मेहराज ठाकुरजी अपने आत्म–साधनमें तत्पर हो गये. मायाकी ममता और ऐहिक सुखोपभोगको तुच्छ समझकर सांसारिक पदार्थोंसे अपना मुख मोड लिया. इनके विरक्त स्वरूप और परिस्थितिको देखकर माता–पिताको अधिक

Shri Prannath Ji Pustkalay

चिन्ता हुई और उन्होंने श्रीनिजानंद स्वामीसे प्रार्थना की कि महाराज ! इनको ऐसे किसी कार्य क्षेत्रमें आप लगा दीजिये जिससे उनकी रूचि धर्ममें बनी रहे और हमें भी पुत्र सुखसे वंचित न होना पड़े.

गांगजी भाईके जेष्ठ भ्राता खेताभाई बीस वर्षसे अरब देशमें व्यापार करते थे. विजातियोंके साथ निवास करनेसे उनकी धार्मिक रुचि नष्ट हो चुकी थी. अतः श्री निजानन्द स्वामीने उनको धर्म मार्गमें प्रवृत्त करानेके लिए श्री मेहराज ठाकुरको नियुक्त कर दिया. सद्‌गुरुकी आज्ञा पाकर आपको अरब देशकी यात्रा करनी पडी.

खेताभाईका अरबमें बहुत बडा व्यापार था. उससे शीघ्र छुट्टी न मिलनेके कारण वे स्वदेश नहीं लौट सके और उनका वहीं देहान्त हो गया. पांच वर्ष तक श्री मेहराज ठाकुरजीको भी खेता भाईकी वजहसे अरबमें ही रहना पड़ा. वहां रहकर आपने मुस्लिम संस्कृतिका भी अच्छी तरह अध्ययन कर लिया और अरब देशके बादशाहसे मिलकर हिन्दू संस्कृतिका महत्त्व उसको समझाया. पांच वर्षके बाद स्वदेश लौटने पर काठियावाडके अन्दर ध्रोलके मन्त्री पदका भार संभालनेके लिए आपको विवश होना पडा.

आपके पिता श्रीकेशव ठाकुरजी जामसाहबके यहां प्रधानमंत्री थे और आपका कुल योग्य शासकके रूपसे प्रसिद्ध था. दो वर्ष तक ही मन्त्रीका कार्य करनेके बाद अपने गुरुजीके स्मरण करने पर आप जामनगर चले आये. वहां आने पर श्री निजानंद स्वामीने आपको अपना सुयोग्य शिष्य समझ धार्मिक उत्तराधिकारी नियुक्त कर अपनी ऐहिक लीला समाप्त कर दी. सांसारिक कार्योंसे अन्यमनस्क होने पर भी अपने पिताके देहान्तके बाद कुल परम्परागत जामनगरके प्रतिष्ठित मन्त्री पद पर आपको नियुक्त होना पड़ा.

Shri Prannath Ji Pustkalay

किन्तु चिरकाल तक इस कार्यभारको आप न सम्भाल सके, क्यों कि मायाकी ममतासे तो आपका मन पहले ही विरक्त हो चुका था. आपकी आत्मामें बैठी हुई दिव्य शक्तिने आपको प्रेरणा दी और आपने धार्मिक ज्ञानके प्रचारकी ओर अपना मन लगाया.

परमात्माको जाननेका सबसे बड़ा सरल साधन शब्द है. शब्दके द्वारा ही उसका बोध होता है. इसीलिए सृष्टिके आदिकालमें सबसे प्रथम नाद (शब्द) की उत्पत्ति हुई. वेद, पुराण आदि ग्रन्थोंमें शब्द द्वारा ही माया, जीव, ईश्वर और सांसारिक कर्त्तव्य पालनका बोध कराया गया है. अतः प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द प्रमाणोंमें शब्द प्रमाणको ही श्रेष्ठ समझकर आपने शब्द रचना द्वारा ही जिज्ञासु जनोंको उपदेश देना प्रारम्भ किया.

सर्वप्रथम आपने माया तत्त्वको समझाया कि किस प्रकार इसने सारे ब्रह्मांडको अपने वशमें कर रखा है. इसकी उत्पत्ति कहांसे हुई और इसका वास्तविक स्वरूप क्या है ? उसके बाद आपने रासलीलाके साथ–साथ श्रीकृष्णतत्त्वका वर्णन किया. श्रीकृष्णके वास्तविक स्वरूपको समझनेके लिए शारीरिक इन्द्रियां, मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष और तृष्णा आदि दुर्गुणोंको वशीभूत कर परमात्माके स्वरूपमें लगानेका सरल मार्ग बतलाया. परमात्माके प्रेममें विरह उत्पन्न हुए बिना परमात्माकी प्राप्ति नहीं होती. अतः आपने परमात्मासे मिलनेके पहले प्रेमीकी क्या अवस्था होती है इसका वर्णन किया. इसके बाद आप धर्म प्रचारके लिए जामनगरसे जूनागढ़की तरफ चले गये. वहां आपके हजारों शिष्य हुए. जूनागढ़से जामनगर आये. वि.सं. १७२२ में अहमदाबाद होते हुए आप दीव गये. आपके उपदेशसे प्रभावित

Shri Prannath Ji Pustkalay

होकर और आपकी ज्ञानगर्भित वाणी सुनकर हजारों नर–नारी आपकी शरणमें आने लगे. दीवमें अनेकों जिज्ञासु जनोंको माया बन्धनसे मुक्त होनेका मार्ग बतलाकर आप ठट्ठानगर (सिन्ध प्रदेश) पहुंचे.

ठट्ठानगरमें कबीर सम्प्रदायके प्रसिद्ध महन्तसे भी मिले. उनका नाम चिन्तामणि था. चिन्तामणिसे धार्मिक चर्चा करते हुए आपने कबीरदासजीके कथन किये हुए एक शब्दका अर्थ पूछा. उसका संतोष पूर्ण उत्तर चिन्तामणिजी नहीं दे सके. पुनः श्रीजीके खुलासा करने पर हजारों शिष्योंके साथ वे स्वामीजीके शिष्य हो गये. शब्दवाणी निम्नलिखित है –

एक पलकतें गंगजो निकसी, ह्वै गयो चहुंदिशि पानी ।
उहि पानी द्वै पर्वत ढापे, दरिया लहर समानी ।।
उड मक्खी तरुवर पर बैठी, बोलत अमृत बानी ।
उहि मक्खीके मक्खा नाहीं, बिन पानी गर्भानी ।।
तेहि गर्भ ते गुण तीनों जाये, वह तो पुरुष अकेला ।
कहै कबीर या पदको बूझै सो सतगुरु मैं चेला ।।
अब शब्द भयो जबद इक, दो पर्वत की सांध ।
एक सकस ऐसो भयो, गयो निरंजन फांद ।।
अक्षर पुरुष एक वृक्ष है, निरंजन ताकी डार ।
त्रिगुन सरूप शाखा भये, पत्र भयो संसार ।।

वहांसे आप मसकत बन्दर और अबासी बन्दर होते हुए सूरत पहुंचे. सूरत गुजरातका एक प्रसिद्ध शहर है. प्राचीन कालमें भारतवर्षका वह प्रधान व्यापार केन्द्र था. विद्याकी दृष्टिसे भी वह अग्रगण्य था. आज भी वहां अच्छे–अच्छे विद्वान रहते हैं. सूरतमें भीमभट्ट और श्यामभट्ट नामक वेदान्त दर्शनके उद्भट विद्वान रहते

Shri Prannath Ji Pustkalay

थे. उन्होंने स्वामीजीके साथ जोरदार शास्त्रार्थ किया, किन्तु अन्तमें स्वामीजीके ब्रह्मज्ञान (तारतम्यज्ञान) से प्रभावित होकर स्वामीजीके शिष्य हो गये. भीमभट्ट और श्यामभट्टके शिष्य हो जानेसे स्वामीजीकी आत्मिक शक्तिका पता लोगोंको चल गया और हजारोंकी संख्यामें नर–नारियोंने स्वामीजीका शिष्यत्व स्वीकार किया. स्वामीजीके जो शिष्य आत्म–ज्ञान होनेके कारण घरसे विरक्त होकर सदा स्वामीजीकी शरणमें ही रहना चाहते थे और नित्यप्रति स्वामीजीका दर्शन कर सत्संगका लाभ उठाना चाहते थे, स्वामीजीने उनको सुन्दरसाथ जमातमें शामिल किया. क्योंकि उनकी आत्मा ब्रह्मज्ञानके प्रकाशसे प्रकाशित होकर सुन्दर बन चुकी थी. उनमें किसी प्रकारका विकार या अशुद्धता अवशेष न रही. स्वामीजीका यह सिद्धांत था कि जो भी ब्रह्मानन्दरसका पान करता है और जिसकी आत्मा परमात्माके प्रेममें तन्मय हो जाती है वह निर्मल और सुन्दर हो गया. वास्तवमें वही सुन्दर कहलानेका अधिकारी है. मायिक पदार्थोंके विकारोंसे विकृत आत्मावाले तो असुन्दर ही रहेंगे. अतः शुद्ध परिष्कृत आत्मावाले महापुरुषोंका समुदाय सुन्दरसाथके नामसे ही संसारमें विख्यात हो, ऐसा सोचकर स्वामीनीने इस भक्त मंडलीका नाम सुन्दरसाथ रखा. अथवा तो निजानन्द स्वामी सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीके अन्दर परमधामकी आत्मा सुन्दरबाईकी वासना थी ऐसी पवित्र सुन्दरबाईके साथी होनेसे इस धर्मके अनुयायीको सुन्दरसाथ कहा गया. यह प्रथा आज तक इस संप्रदायमें चली आई है.

स्वामीजीका शिष्य समुदाय जो स्वामीजीके पास उपस्थित था, उसने सोचा कि जो दिव्य ज्ञान स्वामीजी प्रदान कर रहे हैं, वह

Shri Prannath Ji Pustkalay

कभी किसीसे सुना नहीं गया. स्वामीजीके अन्दर जो शक्ति है, वह सर्वज्ञ परमात्माके समान है. इनके अंग–अंगसे ब्रह्मज्ञानकी आभा फूट रही है. इनका बुद्धि–विकास, इनकी अलौकिक प्रभा और इनकी आत्मिक शक्ति अद्वितीय है. अतः ये प्रच्छन्न रूपसे परमात्मा हैं. अपने दिव्य ज्ञानसे संसारको प्रकाशित करते हुए जनकल्याणके लिए विचरण कर रहे हैं. अपनेसे भिन्न परमात्माके स्वरूपका निर्णय कर सबको समझाते हैं, ऐसे महान आत्मा और परमात्मामें कोई खास भेद नहीं होता अतः परमात्मा यही हैं और परमात्मा चराचर जगतके प्राणोंके नाथ हैं. अतः ये हमारी आत्माको पहचान करा रहे हैं इसलिए ये हमारे प्राणोंके नाथ–स्वामी है. इसी विचार धारासे सूरतके निवासी शिवजीभाईने आपको साक्षात् पूर्णब्रह्म परमात्मा जानकर अपने घर सिंहासन पर स्थापित कर आपकी आरती की और शेष सुन्दरसाथने भी आरती उतारी. सूरतमें १७ महीने तक धार्मिक प्रचारका कार्य सम्पादन कर आप वहांसे आगरा, मथुरा होते हुए हरिद्वार पहुंचे.

हरिद्वारमें विक्रम सं. १७३५ में कुम्भका मेला था. वहां प्रत्येक सम्प्रदायोंके आचार्य और लाखोंकी संख्यामें उनके अनुयायी उपस्थित थे. इनके अतिरिक्त बडे बडे उद्भट विद्वान एकत्रित थे. स्वामी श्री प्राणनाथजीने सब सम्प्रदायवादियोंकी एक सभाका आयोजन किया. और उनसे प्रश्न किया कि आप लोग अपने–अपने सम्प्रदायकी पद्धतिका वर्णन कीजिए. सभीकी साम्प्रदायिक पद्धति ज्ञान सुन लेनेके बाद आपने कहा कि जो कुछ भी आप लोगोंकी पद्धतिमें

Shri Prannath Ji Pustkalay

वर्णित है, वह तो चतुर्दश लोकके अन्दरकी बात है. संसारके महाप्रलयके बाद आपकी आत्माका नित्य स्थान कौन–कौन है ? क्यों कि महाप्रलयमें तो यावत् ब्रह्मांड प्रलयको प्राप्त हो जाता है, फिर परमात्मा जिसको आप नित्य और विभु मानते हैं, उसका कौन–सा स्थान अवशिष्ट रह जाता है. किसीके पास इस प्रश्नका कोई उत्तर न था. अतः सबको अपनी हार स्वीकार करनी पड़ी. अन्तमें दार्शनिकोंने भी अपने अपने सिद्धांनोंका प्रतिपादन किया किन्तु उनके सिद्धान्तोंमें भी विरोधाभास देखकर स्वामीजीने उनको भी निरुत्तर कर दिया. सब सम्प्रदाय वालोंने मिलकर स्वामीजीसे भी प्रश्न किया. स्वामीजीने सभी सम्प्रदायवादियोंके समक्ष समस्त शास्त्रोंके प्रमाणके साथ विश्वधर्म स्थापनाकी बात रखते हुए निजानन्द सम्प्रदायकी पद्धतिका वर्णन कर शास्त्रोंके गूढार्थोंको भी स्पष्ट कर दिया. स्वामीजीके प्रवचनों और इनके तात्विक सर्वोत्तम सिद्धान्तोंको सुनकर विद्वानोंने इनको बुद्धनिष्कलंकावतारका स्वरूप समझा और सभी लोग नतमस्तक हो इनके गुणानुवाद गान करते हुए अपने–अपने स्थानोंको लौट गये. स्वामीजीने वहां दिग्विजय प्राप्त कर दिल्लीकी ओर प्रस्थान किया. वहां जाकर स्वामीजीने मुसलमानोंके द्वारा हिन्दुओं पर हो रहे अत्याचारोंको अपनी आखोंसे देखा जो एक महा भयानक और कारूणिक दृश्य था. इस समय दिल्लीके तख्त पर औरंगजेब आसीन था. वह अत्यन्त ही क्रूर शासक था. हिन्दुओं पर जजिया नामका टैक्स लगा रखा था. जो टैक्स नहीं दे सकते थे उनको जबरन मुसलमान बना लेनेकी आज्ञा थी. कोई भी हिन्दू अपने धर्म पालनमें स्वतन्त्र नहीं था. हिन्दुओंके यज्ञोपवितोंको तोडकर उन्हें जातिच्युत कर देना तो मुसलमानोंके

Shri Prannath Ji Pustkalay

लिए बायें हाथका काम था. हिन्दुओं पर जुल्म करनेमें मुसलमान सवाबका अनुभव करते थे. स्वामीजीने इस अत्याचारको बन्द करा देनेकी प्रतिज्ञा ली.

इस प्रकार स्वामीजीने धर्म प्रचारके साथ साथ हिन्दू संस्कृतिकी रक्षाका भी प्रण लिया. सबसे पहले उन्होंने औरंगजेबसे मिलकर उसको समझानेकी चेष्टा की, लेकिन औरंगजेबसे एक हिन्दूका मिलना कठिन ही नहीं असंभव भी था. अतः स्वामीजी पर कुरानके सिद्धांतोंके अनुसार कुछ वाणी अवतरित हुई. जिसका भाव यह था कि हजरत मुहम्मद साहेबने अत्याचार करनेका उपदेश नहीं किया है. तुम लोग कुरानके सिद्धान्तोंको भी नहीं समझते हो. मुहम्मद साहेबने लिखा है कि कयामतके समय खुदा स्वयं आकर सबकी कजा करेगा. वह खुदा आ गया है. आंखें खोलकर देखो और मेरी बातों पर अमल करो. हजरत मुहम्मद भी मुझमें आ मिले हैं. मेरे आने पर उनकी शक्ति मेरे ही अन्दर मौजूद है. मैं ही इमाम मेहदी हूं. मेरी बातों पर गौर नहीं करोगे तो तुमको दोजखकी आगमें जलना पडेगा. इस प्रकारके भाव वाले पदोंको स्वामीजीने अपने शिष्योंमें–से कुछ लोगोंको जामा मस्जिदकी सीढियों पर गानेके लिए नियुक्त कर दिया. औरंगजेब वहां निमाज पढ़नेके लिए आया करता था. लेकिन मौलवी और काजियोंने उसको सुननेसे रोक दिया. काफी प्रयत्नके बाद स्वामीजीके शिष्य औरंगजेबसे मिले. उन्होंने उससे पूछा कि गरीबों पर जुल्म करना कहांका न्याय है ? बेगुनाहोंको कत्ल कराकर क्या सवाब हासिल करोगे ? सावधान हो जा नहीं तो अब तेरी खैरियत नहीं रहेगी. मुल्ला–मौलवियोंने उसे गुमराह कर दिया. सराका पैबन्द औरंगजेब अत्याचार करने पर

Shri Prannath Ji Pustkalay

तुल गया. स्वामीजीने समझा कि यह शास्त्र (ज्ञान) का पात्र नहीं किन्तु शस्त्रका पात्र है. तब स्वामीजीने राजपूतानाकी तरफ दृष्टिपात की और आप राजाओंको संगठित करनेका प्रयत्न करने लगे. प्रत्येक राजाके पास जाकर आपने औरंगजेबके विरूद्ध तलवार उठानेके लिए उत्तेजित किया, किन्तु औरंगजेबके सैन्य बलके सामने राजाओंको उससे लड़नेकी हिम्मत नहीं पड़ी. लड़ना तो दूर रहा पारस्परिक मतभेदके कारण राजा लोग एक झंडेके नीचे एकत्रित भी नहीं हो सकते थे. हिन्दू जातिका इस प्रकार पतन देखकर स्वामीजीने सब राजाओं महाराजाओं और विद्वानोंको सम्बोधित करते हुए कहा कि –

राजा ने मलोरे राणे रायतणो, धर्म जाता रे कोई दौड़ो ।
जागो ने जोधा रे उठ खड़े रहो, नींद निगोड़ी रे छोड़ो ।।
छूटत है खडग छत्रियोंसे, धरम जात हिन्दुआन ।
सत न छोडो सतवादियो, जोर बढ़यो तुरकान ।।
कुलिये छकाये दिलड़े जुदे किये, मोह अहं के मदमाते ।
असुर माते रे असुराई करे, तो भी न मिलो रे धर्म जाते ।।
त्रिलोक में उत्तम खंड भरत को, तामें उत्तम हिन्दू धरम ।
ताके छत्रपतियोंके सिर, आय रही इत सरम ।।
पन ने धारी पन इत ले चढया, कोई उपज्यो असुर घर अंस ।
युद्ध ने करने उठया धर्म सों, सब देखें खड़े राज वंस ।।
भरत खंड रे हिन्दू धरम जानके, मांगे विष्णु संग्राम अरथ ।
फिरत आप ढंढेरा पुकारता, है कोई देवे रे समरथ ।।
असुर सत रे धरम युद्ध मांगहीं, सुर कहलाय जो ना दीजे ।
पूछो रे पंडितो ने जुध दिये बिना, धर्मराज कैसे कहीजे ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

राज कुली रे रखन रजवट, जो न आया इन अवसर ।
धर्म जाते जो न दौडिया, ताय सुर कहिये क्यों कर ।।
वेद ने व्याकरणी रे पंडित पढबैयो, गच्छ दीन इष्ट आचार ।
पीछे रे बल कब करोगे, होत है एकाकार ।।
सिद्ध ने साधो रे सन्तों महन्तो, वैष्णव भेष दरसन ।
धरम उच्छेदे रे असुरें सबनके, पीछे परचा देओगे किसदिन ।।
सुनियो पुकार रे स्याने सन्त जनो, जो ना दौड़या जाते सत ।
गये ने अवसर पीछे कहा करोगे, कहां गई करामत ।।
लस्कर असुरों का चहुंदिस फैलया, बाढयो अति विस्तार ।
बनने जंगल हिन्दू रहें पर्वतों, और करलिये सब धुंधकार ।।
हरद्वार ढहाये रे उठाये तपसी तीरथ, गोवध कैयों विधन ।
ऐसा जुलुम हुआ जगमें जाहिर, पर कमर न बांधी किन ।।
सुरने कहलाये रे सेवा करे असुरकी, जो दास्वाय उड़वे देहुर ।
हिन्दू नाम रे सेना तिनकी होय खड़ी,
ऐसा कुलिये किया रे केहेर ।।
प्रभु प्रतिमा रे गज पांव बांध के, घसीट के खंडित कराय ।
फरस बन्दी ताकी करके, तापर खलक चलाय ।।
असुरे लगाया रे हिन्दुओं पर जजिया, वाको मिले नहीं खानपान ।
जो गरीब ना दे सके जेजिया, ताय मार करे मुसलमान ।।
बात ने सुनी रे बुन्देले छत्रसालने, आगे आय खड़ा ले तलवार ।
सेवाने लई सारी सिर खैंचके, सांईए किया सेनापति सिरदार ।।

अन्तमें बुन्देलखंड केसरी महाराजा छत्रसालजीने स्वामीजीकी आज्ञाके अनुसार औरंगजेबका मुकाबला किया. अनेक युद्धोंमें औरंगजेबकी सेनाको परास्त कर मुगल राज्यकी जड़ें हिला दी.

Shri Prannath Ji Pustkalay

राजपूतानासे होकर महाप्रभु श्री प्राणनाथजी अनूप शहर और औरंगाबाद आदि नगरोमें होते हुए रामनगर पहुंचे. रामनगरमें छत्रसालजीके भतीजे दिवान देवकरणजी रहते थे. स्वामीजीके अलौकिक ज्ञानकी कथासे प्रभावित होकर देवकरणजीने स्वामीजीका शिष्यत्व स्वीकार कर लिया. स्वामीजीने देवकरणजीके उत्साह और बलपौरूषको देखकर औरंगजेबके विरूद्ध हिन्दू नौजवानोंका एक संयुक्त मोर्चा बनानेके लिए प्रेरित किया. देवकरणजीने स्वामीजीसे प्रार्थना की कि प्रभो ! मेरे चाचा छत्रसालजी इस योग्य हैं, वे आपके ब्रह्मज्ञानके अधिकारी बनकर आपके आशीर्वादसे मुगल शासकोंकी पाशविक वृत्तिको नष्ट भी कर सकते हैं. उनमें क्षात्र तेजका अभाव नहीं है, किन्तु योग्य मार्ग दर्शनके साथ धन, जनसे रहित होनेके कारण वे इस कार्यको पूर्ण करनेमें असमर्थ हैं. आत्मिक शक्तिके बिना केवल शारीरिक शक्तिसे सफलता नहीं प्राप्त हुआ करती है. यही कारण है कि छत्रसालजी मुसलमानोंको ध्वस्त करनेके लिए अनवरत परिश्रम कर रहे हैं फिर भी विधाता उनके विपक्षमें है. आपकी दयादृष्टिसे केवल छत्रसालजी ही सफल नहीं होंगे किन्तु हिन्दुओंका भाग्य सूर्य भी निकल आयेगा. अतः आप कृपाकर मऊ पधारनेका कष्ट करें.

बुन्देल केशरी श्री छत्रसालजी :–

मध्यभारतके एक प्रान्त बुन्देल खंडमें ओड़छा एक छोटा–सा राज्य था. वहांके राजा थे जुझारसिंह. ओड़छा तो अब भी है, लेकिन अंग्रेजोंने अपने शासन कालमें तात्कालिक राजाको हटाकर उसकी बागडोर स्वयं संभाल ली थी. तबसे वह राजधानी नहीं है.

जुझारसिंह आराम पसन्द होनेके कारण अधिकतर मुसलमानोंकी

Shri Prannath Ji Pustkalay

गुलामी ही पसन्द करते थे और दिल्लीमें ही रहते थे. उनका छोटा भाई हरदौल ही ओडछा पर शासन करता था. हरदौल सत्यप्रिय, न्यायनिष्ठ, चरित्रवान और वीर राजा था. कुछ द्वेषी मनुष्योंने जूझारसिंहकी रानी और हरदौलका अनुचित सम्बन्ध स्थापित कर हरदौलके प्रति जुझारसिंहके मनमें घृणा उत्पन्न कर दी. जुझारसिंहने दिल्लीसे आकर अपनी रानीके हाथों जहरका प्याला दिलवाकर हरदौलको मरवा डाला. अपनी मातृतुल्य भौजाईके धर्म रक्षार्थ हरदौलने उस जहरके प्यालेको अमृत समझकर पान कर लिया था. यही कारण है कि आज भी बुन्देलखंडी लोक–गीतोंमें हरदौलका भी निजी अस्तित्व है. शुभ कार्यमें हरदौलका स्मरण गणेश वन्दनाके समान ही किया जाता है. यथा –

इतनी रही भाभीसों प्रीत, जितनी सब दुनियांकी रीत ।
तुमने करी न कछु अनरीत,
जैसी उने निबाही लाल ऊंसई सबैं निभइयो ।।

हरदौलके मर जाने पर औरंगजेबकी क्रूर दृष्टि ओड़छे पर गई और उसने मुहब्वतखां, खांजहां और ख्वजह अबदुल्लाके अधीन एक बडी सेना ओड़छे पर चढ़ाईके लिए भेज दी. ओड़छाके पास ही महोबाके जागीरदार दिवान चम्पतरायजी रहते थे. चम्पतरायजी स्वतन्त्रताके प्रिय शूरवीर योद्धा थे. इन्होंने औरंगजेबको चम्बल नदीका रास्ता बताकर उसकी बहुत बडी सहायता की थी. यदि सत कहा जाय तो चम्पतरायजीके ही पराक्रमसे औरंगजेबको दिल्लीका तख्त नसीब हुआ था. लेकिन नीच मनुष्य किसीके उपकारको कब मानता है. चम्पतरायजीको मुसलमानोंकी नीतिसे घृणा हो गई थी. इसलिए उन्होंने जुझारसिंहको औरंगजेबके विरूद्ध खड़े होनेके लिए

Shri Prannath Ji Pustkalay

उत्तेजित किया. किन्तु जुझारसिंह चम्पतरायजीके साथ सहमत नहीं हुआ. चम्पतरायजी कापुरूष व्यक्तियोंमेंसे नहीं थे. उन्होंने बुन्देलखण्डी कुछ नौजवानो के साथ औरंगजेबकी फौजका मुकाबला किया और उसको दिल्ली लौटनेके लिए विवश कर दिया. इसलिए लाल कविने लिखा है कि –

प्रलय पयोधि उमंडमें, ज्यों गोकुल जदुराय ।
त्यों बूडत बुन्देल कुल, राख्यो चम्पतराय ।।

चम्पतरायजीकी वीरता उत्साह और लगनको देखकर औरंगजेबने इनके साथ सन्धि कर लेना ही उचित समझा. इसलिए बारह लाखकी जागीर देकर इनको दिल्ली बुला लिया. चम्पतरायजीकी धर्म पत्नी विदुषी और वीरांगना लालकुंवरी चम्पतरायजीके साथ ही युद्ध भूमिमें जाया करती थी. उनको वह बारह लाखकी जागीर विष तुल्य मालूम होती थी. वह स्वतन्त्रताके साथ गरीबीके जीवनको परतन्त्रताके साथ सुखी जिन्दगीसे अच्छा समझती थी. इसलिए वह दासत्व जीवनसे ऊब कर सदा उदास रहती थी.

एक युद्धमें बहादुरखां सेनापतिके घायल होने पर उसके चंचल और शोख घोड़ेको इन्होंने ही पकड कर बांध लिया था. बहादुरखांने स्वस्थ होने पर इनके एकाकी पुत्रसे वह घोड़ा छीन लिया. उस समय नंगी तलवार लेकर वह स्वयं औरंगजेबके भरे दरबारमें जाकर गरज उठी थी. इन्होंने बहादुरखांको सम्बोधित करते हुए कहा कि खां साहब– घोड़ा मुझे वापस दे दो वर्ना तुम्हारी जानकी खैरियत नहीं. उस समय रानीके तेजस्वी रूपको देखकर औरंगजेब भी डर गया था. लेकिन रानीकी परीक्षा लेनेके लिए उसने कहा कि रानी साहिब घोड़ा तो आपको मिल जायेगा, लेकिन उसके लिए

Shri Prannath Ji Pustkalay

बारह लाखकी जागीर छोड़नी पड़ेगी. रानीने कहा कि घोड़े और जागीरकी कोई बात नहीं बात तो आनकी है. मैं सर्वस्व त्याग कर भी अपनी आनको छोड़नेके लिए तैयार नहीं हूं. इसलिए घोड़ा लेकर इन्हें जागीर छोड़नी पड़ी. चम्पतरायजी अपनी वीरांगना स्त्रीके साथ स्वदेश लौट आये, किन्तु औरंगजेबको रानीकी आनवाली बात सदा खटकती ही रही. उसने रानीकी आनको मिटानेके लिए अपनी सारी शक्ति लगा दी. फलस्वरूप चम्पतरायजीको अपना घर छोड़कर रानीके साथ जंगलों और पहाडोंमें जानेके लिए विवश होना पड़ा. दिनको पहाड़ोंमें छिपकर रहना और रातको मुसलमानी फौजोंसे युद्ध करना इनका नित्य नियम हो गया था. चम्पतरायजीके चार पुत्र सारवाहन, अंगदराय, रतनशाह और गोपालराय थे. सारवाहन, युद्ध करते हुए मारे गये थे और उनके बाद छत्रसालजीका जन्म हुआ था. इतिहासकारोंने लिखा है कि सारवाहनने मृत्युके बाद अपनी माताको स्वप्न दिया था कि मैं दुबारा तुम्हारी पुनीत कोखसे पैदा होकर मुसलमानोंसे अपनी मौतका बदला लूंगा.

चित चिते सांचे भये, सुवन माइके चारु ।
प्रगटयो चम्पतरायके, छत्रसाल अवतारु ।।

भूषण कविने लिखा हैं कि पन्नासे कुछ दूरी पर मोर नामक एक पहाड़ है. उसी पर संवत् १७०६ जेष्ठ शुक्ला तृतीयाको छत्रसालजी अवतीर्ण हुए थे.

* ६ ० ७ १

शास्त्र शून्य सागर अलेख, विक्रम प्रचलित साल ।
जेष्ठ शुक्ल तिथि तीजको, प्रगटे नृप छत्रसाल ।।

---

* शास्त्रादि शब्दोंके ब्योरेमें दिये अंकोंको उलट देने से १७०६ सं. होता है. वही छत्रसालका जन्म दिन है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

छत्रसालजीके जन्म समयमें वनदेवता और वन देवी ही उनके रक्षक थे. पशु पक्षी ही परिवार. मुसलमानोंको यह भी अच्छा न लगा . और उन लोगोंने चम्पतरायजीका पता लगाकर समयको अनुकूल समझ कर पहाड़को घेर लिया. उस समय भी चम्पतराय भयभीत नहीं हुए किन्तु उन्होंने बड़े धैर्य और वीरतासे शत्रुका मुकाबला किया. उस समयका भूषण कविने निम्न प्रकारसे वर्णन किया है –

रानीके उदर माँझ भई जब गर्भपीर ।
होयके अधीर लगी कृष्णको मनावने ।।
इतनेमें आय एक न्योला धर गयो लाय ।
रानीके निकट पाँच मुहरें दृग सामने ।।
इते पुत्र भयो प्रगट बुला ये उत चम्पतराय ।
लगे सुघर कामिन सो नरा छिनवावने ।।
भूषण भनत तौलों आई है यवन सैन ।
देखके कामिन मन लागो डरपावने ।।
दौरो है आय ककर कंचनके हारमें ।
चम्पतराय नाहर सो विकट रोष खाय के ।।
दाव नहीं निकरे को देखो द्वि भूषण जबै ।
कीन्हों है तब उपाय धीरज मन लायके ।।
रानी ले कन्धे चढाय पुत्रको हिये लगाय ।
झपटके टहलनी की बांह गही धाय के ।।
मारके छलांग अधर कूद चले चम्पतराय ।
मोरकी पहाड़ियासे गये मोर से उडाय के ।।

छत्रसालजीके अन्दर परमात्माकी शक्ति विद्यमान थी. जिस

Shri Prannath Ji Pustkalay

प्रकार अर्जुन और कृष्ण नर–नारायणके अवतार थे, उसी प्रकार स्वामी श्री प्राणनाथजी पूर्णब्रह्म परमात्माके और छत्रसालजी उनकी शक्तिके अवतार थे. छत्रसालजीके जन्म समयमें ही एक न्योला (नकुल) पांच सोनेकी मुहरे जिन पर स्वामी श्री प्राणनाथजीका नाम अंकित था, उनकी माताके पास रख गया. उनकी माताने उन मुहरोंको सुरक्षित रख छोडा था और छत्रसालजी स्वामीजीकी प्रतीक्षामें रहते थे. जन्मके समयमें छत्रसालजीकी शक्तिने ही चम्पतरायजीको प्रेरणा और ताकत दी थी, जिससे चम्पतरायजी रानी, नौकरानी और छत्रसालजीको उठाकर एक पहाड़से दूसरे पहाड़ पर कूद गये. मुसलमानी फौज हताश होकर पीछे लौट गई.

छत्रसालजीका लालन – पालन भी जंगली फल – फूलोंसे ही होने लगा और बचपनमें ही प्राकृतिक सृष्टिको देखकर वे स्वतन्त्रता प्रिय हो गये. पांच वर्षकी अवस्था होने पर इनको सावनसिंह धँधेरे जो इनके मामा थे, के यहां भेज दिया गया. वहां रहकर छत्रसालजीने अल्पकालमें ही घुड़सवारी, तलवार, तीर, भाला आदि शस्त्र और संस्कृत आदि विद्याओंमें निपुणता प्राप्त कर ली.

पूरब पुन्य प्रताप ते, सकल कला अनायास ।
बसी आय छत्रसाल उर, दिनदिन बढै प्रकास ।।

बचपनसे ही भगवान पर इनकी श्रद्धा अटूट थी, जहां कहीं भी मन्दिर दिखालाई देते थे, ये अधिकतर उन्हींमें खेलने जाया करते थे और मूर्तियोंके साथ ही प्रायः खेला भी करते थे. मूर्तियां भी इनके साथ तन्मय होकर खेलती और नाचती थीं.

चेतन तन नाचे हते, व्रजवनितन के संग ।
छत्रसालको प्रेम लखि, नचे अचेतन अंग ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

ज्योतिषियोंने छत्रसालजीकी जन्मकुण्डलीमें लिखा है कि –

उदय में राजें अग्र मंगल विराज,
जहां बल को शुक्र शनि सहित विहार है ।
बुद्ध अरि नाशें रवि राहु प्रजा को प्रकाशें,
लाभ करें सुर गुरु अमित अपार है ।।
सत्रह सै छ को विलंबी नाम सम्वत् जेठ,
तिथि तीज सित पक्ष सितवार है ।
शिव के नक्षत्र में बखतबली छत्रसाल,
लीन्हों नरनाह आय करके अवतार है ।।

चम्पतरायजीको मुसलमानी फौजोंके साथ युद्ध तो करना ही पड़ता था, साथमें बुन्देलखंडी राजाओंसे भी सदा आशंका बनी रहती थी. वे लोग चम्परायजीकी सुयश पताकाको उन्नत होते देख कोई न कोई षडयन्त्र रचा करते थे. जुझारसिंहके बाद ओड़छाकी गद्दी पर पहाड़सिंहको चम्परायजीने ही बैठाया था, किन्तु वही इनका दुश्मन बन बैठा और जहर देकर इनको मार डालनेका विचार करने लगा. उस समय चम्पतरायजीके छोटे भाई भीमसिंहजीने उन विषमिश्रित मिष्ठान्नको खाकर चम्पतरायजीका प्राण बचाया था. चम्पतराजीके विरूद्ध मोर्चा तैयार करनेमें रानी हीरादेवी, शुभकरण और पहाडसिंहका विशेष हाथ रहता था. हिन्दू जातिको फूटने ही सदा नुकसान पहुंचाया है.

एक दूसरेकी उन्नतिसे जलनेवाली हिन्दू जातिने देश, धर्म सभ्यता और संस्कृतिका बेड़ा गर्क कर दिया. यही कारण था कि चम्पतरायजी अथक परिश्रम करने पर भी सफलता न प्राप्त कर सके वे ही क्यों, भारत वर्ष पर जब कभी विदेशी शासकोंका

Shri Prannath Ji Pustkalay

शासन हुआ तो उनकी प्रधान सहायिका फूट ही थी.

चम्पतरायजी बुन्देलखंडमें विजय तो प्राप्त न कर सके लेकिन उनका सारा जीवन संघर्षमें ही व्यतीत हुआ. अपने जीवनके अन्तिम कालमें किसी युद्धमें विशेष घायल हो जानेके कारण उनको सहाराके किलेमें आश्रय लेना पड़ा. सहारा एक सुरक्षित स्थान था जहां वे कुछ दिनों तक विश्राम कर अपनेको स्वस्थ बना सकते थे. लेकिन विधिका विधान विचित्र है. **नर चेती नहीं होत है, प्रभु चेती तत्काल.** परमात्माकी इच्छाके सामने पुरुषार्थ करने पर भी मनुष्य असफल हो जाता है. मुसलमानोंको गुप्तचरों द्वारा चम्पतरायजीका पता चल गया और उनको उसी रूग्णावस्थामें वह स्थान भी छोड़नेके लिए विविश होना पडा. केवल स्थान छोड़ देनेसे छुट्टी नहीं मिली, किन्तु मुसलमानोंने युद्ध करनेके लिए भी बाध्य कर दिया. अपनी आन पर जान देनेवाले चम्पतरायजी दस–पन्द्रह साथियोंको साथ लेकर ही मुसलमानी फौजसे लोहा लेनेमें प्रवृत्ति हो गये. किन्तु वह कब तक चल सकता था. मृत्यु सन्निकट समझकर उन्होंने अपनी पति परायणा प्रिय–पत्नीसे कहा कि – रानी ! तुमने आजतक मेरी समस्त आज्ञाओंका पालन किया है, अब मेरी अन्तिम इच्छा भी पूरी करो. मुसलमानोंका नापाक हाथ मेरे शरीरका भी स्पर्श न कर सके इसलिए तुम अपना और मेरा अन्त कर दो. रानीको यह आज्ञा भी लाचार होकर माननी ही पड़ी. रानीके इस महान् साहसको देखकर मुसलमान सेनापतिने झुककर रानीके चरणोंमें प्रणाम किया और रानीके इच्छानुसार ही हिन्दू सिपाहियोंके हाथों दम्पतिका अग्नि संस्कार कराकर दिल्ली लौट गया.

चम्पतरायजीकी मृत्युके बाद छत्रसालजी निस्सहाय हो गये.

Shri Prannath Ji Pustkalay

उनके हृदयमें मुसलमानोंसे बदला लेनेकी तीव्र ज्वाला जल रही थी. लेकिन अकेले क्या कर सकते थे. चम्पतरायजीके मित्र महाराज जयसिंहजी उस समय औरंगजेबकी फौजके कमाण्डर थे और दक्षिणमें लोहागढ जीतनेके लिए डेरा डाले पड़े थे. छत्रसालजीने सोचा कि महाराजा जयसिंहके पास चलनेसे एक तो युद्ध करनेका मौका मिलेगा और दूसरे मुगलोंकी सैन्य गति विधिका भी ज्ञान हो जायेगा. इसलिये वहीं चले गये. महाराज जयसिंह छत्रसालजीको पाकर बहुत प्रसन्न हुए और अपने पास रख लिया. छत्रसालजीने अपनी वीरताका वहां अच्छा परिचय दिया. जो किला छ महीनेसे जयसिंहजीके हाथमें नहीं आ रहा था उसको तीन दिनमें उनके हवाले कर दिया. जयसिंहजी छत्रसालजीको साथ लेकर दिल्ली पहुंचे. उनका ख्याल था कि छत्रसालजीको उनकी वीरताका उचित मूल्य मैं औरंगजेबसे दिलवा दूंगा. लेकिन उस समय उनकी आशा पर पानी फिर गया जब उन्होंने विजयकी खुशीमें बहादुरखांको पुरस्कृत होते देखा. छत्रसालजीका तो एक बार नाम भी नहीं लिया गया. छत्रसालजीके मनमें मुसलमानोंके प्रति अधिक घृणा उत्पन्न हो गई और उन्होंने अकृतज्ञ मुसलमानोंके पास अधिक ठहरना उचित नहीं समझा. इसलिये वे दक्षिणमें मराठासिंह वीर शिवाजीसे मिलनेके लिए चल पड़े. शिवाजीसे मिलकर छत्रसालको बड़ी प्रसन्नता हुई. नीति कुशल शिवाजीने छत्रसालको हृदयसे लगा लिया. कुछ दिनों अपने पास रखकर युद्धनीतिकी शिक्षा दी और तलवार देकर बुन्देलखंडके स्वतन्त्रता संग्राममें प्रवृत्त होनेके लिए वापस भेज दिया. छत्रसालजीने बुन्देलखंड पहुंचकर स्वतन्त्रता प्रिय नौजवानोंको एकत्रित किया और मुगलोंके साथ युद्ध करनेमें लग

Shri Prannath Ji Pustkalay

गये. लेकिन धनके बिना अधिक फौज रखना मुश्किल था. केवल तीन हजार वीर सिपाहियोंको साथ लेकर ही उन्होंने इस कठिन कार्यको प्रारंभ किया था. दिनको पहाड़ोंमें छिपकर रहना और रातको मुसलमान सिपाहियों पर आक्रमण कर उनको लूट लेना यही उनकी दिन चर्या थी. लेकिन इससे सफलता होती नजर नहीं आती थी और कोई प्रबल सहायक भी नहीं था, जिससे मिलकर युद्धका शीघ्र निपटारा कर लेते. ऐसी ही विषम परिस्थितिमें महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीका आगमन सुनकर और अपने पास सुरक्षित पांच मुहरों पर प्राणनाथ प्रभुका नाम अंकित देखकर छत्रसालजीकी आंखे प्रसन्नतासे चमक उठीं. उस समय छत्रसालजी मऊमें मुसलमानोंके साथ युद्ध करनेमें प्रवृत्त थे. अतः वहीं स्वामीजीका स्वागत कर अपना सिर उनके चरणोंमें रख दिया. स्वामी श्री प्राणनाथजीने छत्रसालजीको उठाकर अपने हृदयसे लगा लिया और अपना वरदहस्त उनके सिर पर रखकर कहा कि–

करौ राज छत्रसाल महीकी, रन में होई सदा जय टीको ।
तव बल नृपति होंहिं अनियारे, लैहें समर अरिन सो भारे ।।
वंश अखंड चले छिति माहीं, जाको मेटि सके अरि नाहीं ।
जो तव वंश ही मेटन चाहे, ताको धनी अनीयुत ढाहैं ।।
यह महि तुम्हें दई तब रानी, जहां प्रगट हीरनकी खानी ।
तुम दरपुस्त लहों सिर मौरे, तव कुल बिना फले नहिं औरे ।।
इहि विधि वह वरदान दे, कुल अखंड़ बल राखी ।
राजतिलक छत्रसाल उर, दयौ साखि दर साखि ।।
ये साखी मुखते कही, तिलक भाल करि आप ।
दीनी खड्ग उठाये के, पाग दई सिर थाप ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

महाराज अधिपति भये, महाराजा छत्रसाल ।
राजन में राजा भये, असुरन केरे काल ।।
खड्ग प्रकट असि ज्ञान की, द्वै विध दी बंधाई ।
सेनापति सरदार करि, दयो प्रताप कंधाई ।।

महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने छत्रसालजीको आशीर्वादके साथ साथ अपने हाथोंसे तलवार भी प्रदान कर दी जिससे छत्रसालजीने मऊमें पड़ी हुई मुगल सेनाको अल्पकालमें ही नष्ट कर दिया था. मऊसे स्वामीजी पन्ना आ गये. पन्नाके पास ही एक अमरावती नामकी नदी बहती है. उसका जल इतना जहरीला था कि उसकी हवा लगनेसे भी मृत्यु हो जाती थी. जब स्वामीजीको यह मालूम हुआ तो आपने अपने चरण स्पर्शसे उसको अमृतके समान शुद्ध कर दिया.

छत्रसालजीने स्वामीजीको पालकीमें बैठाया और उसे स्वयं उठाकर अपने निवास स्थान पर ले गये. वहां पहुंचकर रानियोंके साथ स्वामीजीकी आरती की और मंत्रदीज्ञा लेकर उनके शिष्य हो गए. जिस स्थान पर छत्रसालजीने दीक्षा ग्रहणकी थी वह स्थान आजकल चौपड़ा मन्दिरके नामसे प्रसिद्ध है. स्वामीजीने अपने दोनों चरण कमलोंको दो स्थानों पर रखकर पानीको दो प्रवाहमें प्रवाहित कर दिया था, जिनमें एकको गंगा ओर दूसरेको जमुना कहते हैं और उन्हींके नामसे उस स्थानकी प्रसिद्धि है.

एक रोज छत्रसालजीने स्वामीजीसे प्रार्थना की कि प्रभो ! मेरे पास धन नहीं है. इसलिए मैं पर्याप्त सैन्य–संगठन नहीं कर सकता फिर औरंगजेबकी विशाल सेनाके सामने किस प्रकार सफलता प्राप्त कर सकूं ! स्वामीजीने कहा– चिन्ताकी कोई बात नहीं है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

कल प्रातःकाल तुम घोड़े पर सवार होकर जितनी पृथ्वीका चक्कर लगा लोगे उतनी पृथ्वी हीरामयी हो जायेगी. स्वामीजीकी आज्ञानुसार छत्रसालजीने चौदह कोशका चक्कर लगाया और तभीसे वह पृथ्वी रत्नगर्भा हो गई. उस सयम तो लोग झाड़ूसे बुहार कर हीरा उठाते थे. आज भी उस प्रकारसे हीरा उठाकर ले आने वालोंके वंशज काशीमें मौजूद हैं, जिन्होंने लेखकसे स्वयं बात की है. पन्नामें आज भी लाखों रूपयोंका हीरा प्रति वर्ष निकलता है. अनन्त धनराशि और स्वामीजीका आशीर्वाद मिल जाने पर छत्रसालजीने औरंगजेबसे खुलकर युद्ध करना शुरू कर दिया. स्वामीजीने अपने हाथसे जो तलवार दी थी, उसका नाम जलपुकार था. उसमें यह विशेषता थी कि प्रहारके समय सैकडों शत्रुओंके सिरको एक ही बारमें कतल कर देती थी. औरंगजेबकी फौज नदीके वेगकी तरह चलती थी, किन्तु छत्रसालजीके कोप ज्वालामें जलकर भस्म हो जाती थी. इस प्रकार एक दो बार नहीं, किन्तु बावनबार तहवरखां, अनवरखां, सुतरुद्दीन, हमीदखान, सैयदलतीफ, अब्दुलसमद और बहलोलखान आदि सेनापतियोंने बुन्देलखंड पर चढ़ाई की, लेकिन हर बार मुंहकी खानी पड़ी. औरंगजेबने छत्रसालजीकी वीरतासे डरकर एक बार मनसबदारीका लालच देना चाहा, किन्तु छत्रसालजीने जवाबमें लिखकर भेज दिया कि –

जाकि मानि हुकुम सुभानु तमनाश करें ।
चन्द्रमा प्रकाश करे नखत दराजको ।।
कहैं छत्रसाल राज राज है भंड़ारी जासु ।
जाकी कृपा कोर राज राज सुरराज को ।।
युग्म कर जोर जोर हाजिर त्रिदेव रहे ।
देव परिचार गहें जाके गृहकाज को ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

नरकी उदारता में कौन है सुधार ।
मैं तो मनसबदार सरदार वृजराजको ।।

अन्तमें स्वयं औरंगजेब छत्रसालजीकी वीरता देखने युद्धभूमिमें आया. उस समय महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजी भी हाथी पर सवार होकर छत्रसालजीके साथ युद्धके मैदानमें गए. दक्षिण जानेका बहाना लेकर औरंगजेब उस युद्धमें नहीं गया. छत्रसालजीका यश चारों तरफ फैल गया. छत्रसालजीके नामसे बड़े–बड़े वीर थर्राने लगे. लाल कविने लिखा है कि –

इत जमुना उत नर्मदा, इत चम्बल उत टौंस ।
छत्रसाल सों लरन की, रही न काहूं हौंस ।।

चारों तरफसे राजाओंको परास्त कर छत्रसालजीने अपने राज्यका काफी विस्तार कर लिया. महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने छत्रसालजीको राजतिलक कर महाराजाकी पदवी प्रदान कर दी और जनताने बुन्देलखंड केशरीके पदसे विभूषित किया. उस समयका वर्णन कवि मुरलीधरजीने निम्न प्रकारसे किया है –

कवि को समान प्रभु हूर देख्यो आन पै,
निदान दान युद्ध पै न कोऊ ठहरात है ।।
पंचम प्रचंड भुजदंड को बखान सुन,
भागवे को पक्षी लो पठान थहरात है ।।
शंका मान सूखत अमीर देहली वाले,
जब चम्पत के नन्दके नगाडे घहरात है ।।
चहूं ओर चकित चकत्ता के दलन पर,
छत्ता के प्रताप के पताके फहरात है ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

ब्रह्म गुन बांधो एक नाम ही सो नांधो,
कुल आलमकी शोभा जग जालिमको शाल है ।।
रहें देख छबिदल चुम्बनकी देव,
मुरलीधर कवि याको याचक निहाल है ।।
बल को बहिद्र मंत्र जोंति सरहद्दनको,
क्षत्रिन को हद एक चम्पतको लाल है ।।
जेते महीपाल तेते देखियत विचमाल,
ताय फेर फेर देखो तो सुमेर छत्रसाल हैं ।।

दूसरे इतिहासकारोंने भी लिखा है कि यद्यपि पंजाबमें गुरु गोविन्दसिहंजी और दक्षिणमें शिवाजीने भी औरंगजेबका डटकर मुकाबला किया लेकिन औरंगजेबने सिवाय छत्रसालजीके और किसीसे हार नहीं मानी. हार क्या मानी, छत्रसालजीके युद्धसे मुगल राज्यका ही अन्त हो गया. यह सब श्री प्राणनाथजीका ही प्रताप था. औरंगजेबने महाप्रभु प्राणनाथजीकी आज्ञा नहीं मानी थी उसका परिणाम तो उसको भोगना ही था. औरंगजेबने भी इस बातको समझा, लेकिन अन्तमें, जब उसका सर्वनाश सन्निकट था. इसलिये औरंगजेबके युद्धसे विरत हो जानेके बाद उसके पुत्रोंने भी छत्रसालजीसे एक बार अपनी वीरताका प्रदर्शन करना चाहा, लेकिन औरंगजेबने रोक दिया. शहजादोंके यह पूछे जाने पर कि क्या छत्रसाल हमसे अधिक बलवान है ? जिससे हम युद्ध नहीं कर सकते. उस समय औरंगजेबने जवाब दिया था कि नहीं उनके घर खास–खुदा मौजूद हैं. इसलिये तुम लोग उनसे युद्धमें विजयी नहीं हो सकते.

आयो तो रण मस्तखां, सो लीन्हों मुरकाय ।
सहजादे बुलावाय के, दीन्हों मंत्र सुनाय ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

आये जुरि सहजादे सबहीं, कहि साहिने तिनसों तब हीं ।
छत्रसाल पर जिन चढ़ि जाओ, अपने जिन उमराव पठाओ ।।
पूछत सहजादे तब ऐसे, हमको मने करत यह कैसे ।
हैं वह बड़ो जमैयत धारी, के वह देश पराक्रम भारी ।।
बोल्यो साहि तहां वह बानी, वाकी तुमको कहौं निशानी ।
देश सेन कह तुमरे आगे, का करतूत साहि सम लाग ।।
पर इक भेद और है भारी, सुनौ विचारी लेहु उरधारी ।
करो आई दीदार सुरब्बको, आम खास खुद चेहरा सबको ।।
तहां नृपति को पायो जोई, लखौ आपके आगे सोई ।
तातें छत्रसाल सम दूजो, या समये तुम और न बूझो ।।
(भूषणकवि)

इस प्रकार छत्रसालजी चारों तरफसे निश्चिन्त होकर निष्कंटक राज्य करने लगे. लेकिन राज्यभार वहन करनेसे स्वामीजीकी भक्तिमें बाधा पडती थी. क्यों कि हर समय श्री प्राणनाथजीकी सेवामें उपस्थित होनेका समय नहीं मिलता था. इसलिए छत्रसालजीने राज्यकी कुंजी स्वामीजीके चरणोंमें अर्पण कर प्रार्थना की प्रभो ! यह राज्य आपका है और इसे आप ही संभालिए. मुझे तो अपने चरणोंकी सेवा ही प्रदान कीजिए. महाप्रभुने उनके सिर पर हाथ रखकर कहा वत्स ! इस राज्यको तुम अपना न समझो. आजसे यह राज्य मेरा हो गया. आजसे तुम अपने ममत्व भावको छोडकर प्रबन्धकके रूपमें कार्य करो. प्रजा पालन तो क्षत्रियोंका धर्म ही है. छत्रसालजीने सतगुरुकी आज्ञा शिरोधार्य की और उनकी सेवामें भी तत्पर रहने लगे.

छत्रसालजी एक महान कवि भी थे. महाप्रभुके दर्शन होनेसे

Shri Prannath Ji Pustkalay

पहले आपने रामचन्द्रजीकी भक्तिमें कई कवित्त लिखे हैं, जो प्रकाशित भी हैं. स्वामीजीकी प्रार्थनामें आपने बड़े सुन्दर पदोंकी रचना की है.

पूरण ब्रह्म ब्रह्म से न्यारे, आनन्द अखंड अपार ।
शिव सनकादिक आदि के इच्छित, शेष न पावें पार ।।
अगम जानिके निगम कहाए, खोजि खोजि पचिहार ।
जानि के मूलधनी अंगना अपनी, सो घर आए हमार ।।
श्री ठकुरानीजी सखियन सूदो, लीन्हें संग पधार ।
त्रिगुण फांस के फन्द परे थे, सो फन्दा निरवार ।।
वारी वारी जाऊं मैं अपने पिया पर, शोभा मुख से न आवे ।।
सिंहासन आसन बैठारूं, छत्रसाल गुन गावे ।।

महाप्रभुके ज्ञानसे विभूषित होनेके बाद तो छत्रसालजीने ब्रह्मज्ञानके सम्बन्धमें बड़े ही महत्त्वपूर्ण कवित्त लिखे हैं. उनकी रचनाओंका कुछ दिग्दर्शन कीजिए–

गौतम कहें न्याय में त्रिदेह परिरूप ब्रह्म,
जैमुनि मीमांसा में कर्म विध गाथी है ।
कपिलदेव सांख्य विषे प्रकृति पुरुष कहें,
शेष पातांजलि में ज्योति करि नाथी है ।।
कर्णदेव वैशेषिक मांहि काल,
शिवबानी वेदान्त सर्वत्र करि भाषी है ।
पूर्ण श्री प्राणनाथ सो सतगुरु पाये बिन,
षट् दर्शन ज्यों षट् अन्धन में हाथी है ।।
छन्द के प्रबन्धक को अनेक गति व्यंजन हैं,
नैना बीच घस ज्ञान अंजन लगावहीं ।

Shri Prannath Ji Pustkalay

भरम रूप धुन्धकर करले तूं मुकुट साफ,
आतम के परे पर आतम सिधावहीं ।।
परम पुरुष सो तो अगम निगम परे,
अनुभव अमित निज धर्म को बढावहीं ।।
कहत छत्रपति श्रीकृष्णचन्द प्राणनाथ,
निर्विकार काम क्रोध मोक्ष पद पावहीं ।।

नीतिके सम्बन्धमें उनकी बनाई हुई एक कविता पढिए और उसका मनन कीजिए.

जस सो न भूषण विचार सो न मन्त्री कहूं,
साहस सो सूरवीरीं ज्योतिषींले सगुन सो ।
संयम सी औषध न विद्या सो अटूट धन,
नेह ऐसो बन्धु औ दया सो पुन्य कौन सो ।।
सील सो न हितुआ आलस सो न बैरी कहूं,
अन्न सो न प्यारो न मीठो कछु नोनसो ।
शोक ऐसी चोट है न भक्ति ऐसी ओट है,
न राज ऐसो जप है न तप और मौन सो ।।

महाराजा छत्रसालजीने इस कवित्तमें मानव जीवनका सार भर दिया. इसके अनुसार आचरण करने वाला मनुष्य कभी दुःखी नहीं हो सकता. अन्तमें छत्रसालजीके स्वरूपको छत्रसालजीके ही कवित्तमें पढ़िए –

ध्यानिन में ध्यानी अरू ज्ञानिनमें ज्ञानी अहौं,
पंडित पुरानी प्रेम बानी अरथाने का ।
साहेब सों सच्चा कूर कर्मनि में कच्चा,
छत्ता चंपति को बच्चा शेर सूरवीर बाने का ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

वीर मित्रन को छत्ता दिये शत्रुन को कत्ता,
सदा ब्रह्म रस रत्ता एक कायम ठिकाने का ।
नाही परवाही न्यारा नौकिया सिपाही,
मैं तो नेही चाह चाही एक प्राणनाथ पानेका ।।

इस प्रकार प्रभु भक्ति और ब्रह्मज्ञान रस पानमें निमग्न महाराजा छत्रसालजीको किसी बातकी कमी नहीं थी. धन, धान्य, ऐश्वर्य, यश, सुख, समृद्धि, ज्ञान और ध्यानसे सम्पन्न होकर राज्यकी रक्षा और सद्गुरुकी सेवामें निमग्न वे अपने जीवनके चरम लक्ष्यको प्राप्त कर चुके थे और उनका समय बड़े सुन्दर रूपमें व्यतीत होने लगा.

चौपडा मन्दिरसे कुछ दूरी पर परना नामका एक छोटा–सा गांव था. उसमें जंगली भील निवास करते थे जिसका भग्नावशेष अंश अभी तक मौजूद है. महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने एक नयां पन्ना बसानेकी इच्छा कर महाराजा छत्रसालजीको साथ लिया और एक ऊंचे स्थान पर पहुंच गये. वहां एक समतल भूमि देखकर अपने कर कमलोंसे झंडा स्थापित किया. जिस श्रीकृष्ण प्रणामी निजानन्दीय धर्मध्वजको सद्गुरु श्री देवचन्द्रजीने विक्रम सम्वत् १६८७ अर्थात् १६३० इ. को जामनगरमें लहराया था. उसी ध्वजके प्रतीकको श्री प्राणनाथजी अपनी जागनी यात्रामें लहराते हुए आ रहे थे. उसे अपने कर कमलोंसे पन्नामें भी स्थापित किया और कहा कि यह झंड़ा समस्त संसारका मुक्ति प्रदाता होगा. यह अचल झंड़ा है. वास्तविक ज्ञानकी प्राप्ति इस झंड़ेके नीचे आनेसे ही प्राप्त हो सकती है. स्वामीजीके हाथसे आरोपित किया हुआ वह झंड़ा अविचलित भावसे आज भी उसी प्रकार खड़ा है और श्री प्राणनाथजीके प्रतापकी याद दिलाता है. आज भी भिन्न–भिन्न देशोंसे लाखों नर–

Shri Prannath Ji Pustkalay

नारी आकर उस झंड़ेके दर्शनसे अपनेको कृतकृत्य समझते हैं. झंड़ेके बहुत ही सन्निकट महाराजा छत्रसालजीने स्वामीजीका निवास स्थान बनवाया, जिसको बंगलाजी कहते हैं, जहां पर सिंहासनारूढ़ होकर स्वामीजी भक्तोंको उपदेश दिया करते थे. बंगलाजीके पास ही स्वामीजीके समाधिस्थ होनेका स्थान बना है जिसको गुमटजी कहते हैं. यहां पर उन्होंने जीवित समाधि ली थी. यह स्थान अत्यन्त ही रमणीय और चित्तवृत्तिको शान्त करने वाला है. मन्दिरके चारों तरफ महाप्रभुके शिष्य समुदायके आवास बनाये गये थे. स्वामीजीके साथ हजारों शिष्य थे और सभी परमात्माके स्थान परमधामके पारदर्शी थे. इसलिये उस स्थानका नाम धाम मुहल्ला पड गया, जो आज भी उसी नामसे पुकारा जाता है. धाममुहल्लेके पास महाराजा छत्रसालजीका सुन्दर महल बना हुआ है. कहते हैं कि महाराजा छत्रसालजीकी सत्रह रानियां और बावन पुत्र थे. जिनमें जगतराज और हृदयशाह प्रमुख थे.

महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने नौ वर्ष पन्नामें और दो वर्ष चित्रकूटके राजा वसन्तसुरखीके आग्रह पर चित्रकूटमें निवास किया. महाप्रभु प्राणनाथ प्रणीत श्रीतारतम सागर (कुलजम स्वरूप) नामक ग्रन्थ है. जिसके चौदह स्कंध हैं. जिनके नाम हैं– रास, प्रकाश, षटऋतु, कलश, सनन्ध, कीर्तन, खुलासा, खिलवत, परिक्रमा, सागर, सिनगार, सिन्धी, मारफत और क्यामतनामा. इसमें १८७५८ चौपाईयां संकलित हैं. जिनमें वेद, शास्त्र, पुराण और कुरानके सिद्धांतोंके साथ – साथ परमात्माके वास्तविक रूपका वर्णन है. ग्रन्थकी भाषा गुजराती, जाटी, सिन्धी, हिन्दुस्तानी और हिन्दी है, किन्तु लिपि देवनागरी है. धर्म प्रचारार्थ जिन जिन प्रान्तोंमें स्वामीजी

Shri Prannath Ji Pustkalay

गये, उसी भाषामें वहांकी जनताको उपदेश दिया. सभी ग्रन्थ छन्दोबद्ध हैं. गूढ ज्ञानसे भरा हुआ यह ग्रन्थ अवश्य ही मननीय है. इसमें परमात्माके स्वरूप और उसकी प्राप्तिका सरल मार्ग एवं भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार आदिका बड़ा ही सुन्दर वर्णन है.

महाप्रभु श्री प्राणनाथजीके आशीर्वाद और महाराजा छत्रसालजीके पुरुषार्थसे जमुनासे लेकर नर्मदा तक और चम्बलसे लेकर टौंस तक चारों तरफ शान्ति हो चुकी थी. किसी भी प्रकारका उपद्रव अवशेष नहीं रह गया था. औरंगजेब दक्षिण भारतके किसी कोनेमें बैठा हुआ अपनी मौतके दिन गिन रहा था. हिन्दुत्वके गौरवरूपी सूर्यकी किरणें पृथ्वीके चारों तरफ फैल चुकी थी. हिन्दू प्रजा अपने धर्म–कर्ममें व्यस्त आनन्द मना रही थी. महाराजा छत्रसालजी अपनी तलवारें म्यानमें रखकर सांसारिक कार्योंसे निवृत्त हो स्वामीजीकी सेवामें निमग्न थे. कथा, भजन–कीर्तन, पूजनके अतिरिक्त और कोई कार्य नहीं था.

एक रोज प्रसन्नवदन महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीके चरणोंमें प्रणाम कर महाराजा छत्रसालजीने पूछा कि प्रभो ! यह माया क्या है ? इसकी उत्पत्ति कहांसे और किस प्रकार हुई ? विस्तारपूर्वक समझानेकी कृपा कीजिये.

महाप्रभुने अपने मुख कमलको विकसित करते हुए कहा – वत्स ! तुमने ठीक ही प्रश्न किया है. तुम्हारा यह प्रश्न जन साधारणके लिए लाभदायक सिद्ध होगा. सावधान होकर सुनो.

सतको असत और असतको सत समझ लेनेका नाम ही माया है. शरीरको आत्मा और आत्माको शरीर जान लेना, जड़में चेतन और चेतनमें जड़का अध्यारोप कर लेना ही माया कहलाती है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

जगतको ब्रह्म और ब्रह्मको जगत्मय जानकर सांसारिक पदार्थोंके लिए प्रयत्न करते रहना मायाका वास्तविक रूप है.

मैं अरू मोर तोर ते माया, जेहि वस कीन्हें जीव निकाया ।
गो गोचर जहं लग मन जाई, सों सब माया जानेहु भाई ।।

सांसारिक पदार्थोंमें ममत्व बुद्धि ही माया है, इससे भिन्न कुछ नहीं. वास्तवमें भ्रमात्मक ज्ञान ही मायाका स्वरूप है. भ्रमात्मक ज्ञान अज्ञानका ही दूसरा नाम है. उसमें वास्तविकता कुछ नहीं होती है. इसलिए मायाको स्वप्नवत् कहा गया है. क्योंकि इसकी मूलभित्ति कुछ नहीं है. श्री प्रकाशानन्दजीने सिद्धान्त मुक्तावलीमें लिखा है–

प्रतीतिमात्रमेवैतत् भाति विश्वं चराचरम् ।
ज्ञानज्ञेयप्रभेदेन यथा स्वप्नं प्रतीयते ।।

जड़ चेतनात्मक सारा संसार जो देखनेमें आ रहा है, वह केवल प्रतीति मात्र है. जिस प्रकार स्वप्नावस्थामें मन ही ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय सब प्रकारसे भासता है और जैसे रेगिस्तानमें चमकती हुई रेतको देखकर मृग अपनी प्यास बुझानेके लिए दौड़ते हैं किन्तु उनका भ्रमात्मक ज्ञान उनकी मृत्युका ही कारण होता है. प्यास बुझानेका नहीं. वहां जैसे जलकी केवल प्रतीति होती है और उनका आधार भी भ्रमात्मक ज्ञान ही है. उसी प्रकार मायाका आधार भी भ्रमात्मक ज्ञान ही है. इसलिए श्री कृष्णजीने भागवत (११–१३–३४) में कहा है –

ईक्षेत विभ्रममिदं मनसो विलासं,
दृष्टं विनष्टमति – लोलमलातचक्रम् ।
विज्ञानमेकमुरुधेव विभाति माया,
स्वप्नस्त्रिधा गुणविसर्गकृतो विकल्पः ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

हे उद्धव ! यह विभ्रम रूप जो कुछ भी संसार दृष्टिगोचर होता है, सब मनका विलास है. जिस प्रकार किसी लकड़ीमें जलती हुई अग्नि घुमाने पर जल्दी ही बुझ जाती है, उसी प्रकार यह भी एक स्वप्न है, जो मायासे मिथ्या होनेके कारण नाना प्रकारसे भासता है. किन्तु अन्तमें नष्ट हो जानेवाला है. उन्होंने गीता (७/४) में भी कहा है –

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं में भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ।।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार ये आठ मेरी अपरा प्रकृति हैं और इसीका नाम माया है. ये सब दृश्य पदार्थ मायाके ही रूप हैं ––

तत्व पांचों जो देखिये, यामें न कोई थिर ।
प्रलय होसी पल में, वैराट सचराचर ।।

निराकारसे लेकर पाताल पर्यन्त चतुर्दश भुवनात्मक संसार मायाका ही रूप है और सब नाशवान् है.

माया बलवती ब्रह्मन् दुष्त्यजाह्यकृतात्मभिः ।
अरूपा च निरालम्बा ज्ञानिनामपि मोहनी ।। (देवी भागवत)

आत्माके वास्तविक रूपको जाने बिना मायासे छुटकारा मिलना असम्भव है, क्योंकि यह बडी बलवती है. निराकार और निराधार होने पर भी यह ज्ञानियोंको भी मोहित कर लेती है. काम, क्रोध, लोभ, मोह छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेष, मद, मत्सर, अहंकार रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्दादिक ही इस मायाके शस्त्र हैं जिनसे यह समस्त संसारको वशीभूत कर चक्कर खिला रही है. इसीलिए श्री कृष्णजीने (गीता ७/ १४)में कहा है –

Shri Prannath Ji Pustkalay

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ।।

सत, रज और तमोगुणमयी मेरी माया बड़ी ही दुस्तर है. जो मेरी शरणमें आता है, वही इसका पार पा सकता है, अन्यथा इससे निकलना असम्भव है. जिस प्रकार स्वप्न–द्रष्टा पुरुष स्वप्नमें महल–मकान, बाग–बगीचे, धन–दौलत, स्त्री–पुत्र, गाडी–मोटर सब कुछ देखता है, किन्तु जागृत होने पर कुछ भी नहीं रह जाता है. केवल स्वप्नावस्थामें ही सब पदार्थोंकी प्रतीति होती है, लेकिन उसकी वास्तविकता कुछ नहीं है. उसी प्रकार यह संसार भी स्वप्नवत् है. आत्मज्ञानके बिना ही इसकी भी प्रतीति होती है आत्मज्ञानके बाद यह भी काफूर हो जाता है. प्रतीत होनेसे यह सत्यकी तरह भासता है, किन्तु है असत्य. इसलिये शंकराचार्यजीने इसको अनिर्वचनीय कहकर सन्तोष कर लिया है.

छत्रसालजी – प्रभो ! परमात्माके अंशरूप आत्माको ऐसा भ्रमात्मक ज्ञान क्यों होता है ?

स्वामीजी – जिस प्रकार ऊपरसे बरसने वाला पानी स्वच्छ और सुन्दर होता है, किन्तु मृत्तिकाके संयोगसे मैला–गन्दा हो जाता है. और उस समय पानीका अपना रूप विकृत हो जाता है. शरदकालीन हवाके संयोगसे जब मिट्टी नीचे बैठ जाती है, तब पानी अपने असली रूपमें आ जाता है. उसी प्रकार पांचतत्त्व, पंचतन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध), इन्द्रियां, मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार आदिके सम्बन्धसे आत्माके अन्दर भी भ्रमात्मक ज्ञान हो जाता है. जब वह ज्ञानकी हवा लगनेसे आत्मा अपने स्वरूपको पहचान कर शारीरिक ममत्वसे पृथक हो जाती है, तब

Shri Prannath Ji Pustkalay

परमात्माको प्राप्त कर लेती है. जिस प्रकार अग्निके ढेरको गड्ढेमें रखकर मृत्तिका या राखसे आच्छादित कर दिया जाय तो उसकी दाहकत्व शक्ति अन्तर्निहित होने पर भी असमर्थ हो जाती है उसी प्रकार पांच तत्त्वोंके आवरणसे आत्मा अपनी शक्तिको प्रस्फुटित करनेमें निर्बल हो जाती है. और जिस प्रकार मकड़ी अपने ही शरीरसे जाला उत्पन्न कर और उसमें उलझकर मृत्युको प्राप्त हो जाती है, उसी प्रकार यह जीवात्मा भी अपनेसे ही मायिक पदार्थोंका विस्तार कर उसमें उलझा हुआ चौरासी लाख योनियोंके आवागमनमें पड़ा रहता है.

छत्रसालजी – शास्त्रोंमें चौरासी लाख योनियां बतलाई हैं. क्या मनुष्य जीवनके बाद इनमें भ्रमण करना जीवके लिए अनिवार्य है ?

स्वामीजी – नहीं, कर्माधीन ही योनियां प्राप्त होती हैं. नरक–स्वर्गके दुःख सुखादि भोगनेके बाद जिन योनियोंमें प्रवेश करनेका कर्म होता है उन्हीं योनियोंमें भ्रमण करनेके बाद पुनः मनुष्य शरीर मिल जाता है.

अब मायाकी उत्पत्ति कहांसे और किस प्रकार हुई, इसका वर्णन सुननेसे पहले, ब्रह्मके स्वरूपको समझो. क्योंकि कार्यके ज्ञानके लिए कारणका ज्ञान आवश्यक है.

परमात्माके अनेक नामोंमें सच्चिदानन्द मुख्य नाम है. सच्चिदानन्दमें सत्, चित् और आनन्द तीन पद हैं. सत् नाम अखण्डका है और चित् नाम चेतनका है. चेतन ज्ञानको कहते हैं और ज्ञान नाम अनुभवका है. अनुभव करने वाला परमात्मा है. किस पदार्थका अनुभव करता है, तो आनन्दका. वह आनन्द उससे भिन्न पदार्थ हो तो द्वैत हो जायेगा किन्तु परमात्मा अद्वैत है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

इसलिए वह अपने ही आनन्दका अनुभव करता है. क्योंकि वह आनन्द स्वरूप है. **आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्** इत्यादि श्रुतियां इस बातकी साक्षी हैं. उसने अपने आनन्द अंगसे ब्रह्मसृष्टि, महल, बाग, पशु, पक्षी, वन, सागर, नद–नदी, सबकी रचना कर रखी है, किन्तु उसके आनन्द अंगसे आविर्भूत सभी पदार्थ नित्य और चेतन हैं. **लोकवत्तु लीला कैवल्यम** (वेदान्त सूत्र) परमात्माकी लीला भी लोकवत् है. इसलिये परमात्मा स्वलीलाद्वैत है अर्थात् अपनी लीलाके साथ वह अद्वैत है. उसके स्थानका नाम ब्रह्मधाम, परमधाम, दिव्यब्रह्मपुर आदि शास्त्रोंमें वर्णित है. वह अखण्ड, अविनाशी, चेतन, अनन्त, सर्वरस पूर्ण और सर्व शोभा सम्पन्न है. वहां जाकर आत्मा सर्वदाके लिए आवागमनसे मुक्त हो जाती है. वहां चन्द्रमा सूर्य और अग्निके प्रकाशकी आवश्यकता नहीं है. वह परमात्माके प्रकाशसे ही सर्वदा प्रकाशित रहता है.

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ।।

(मुण्डक २/२/१०)

सूर्य, चन्द्र, तारा, विजली किसीकी भी पहुंच वहां नहीं हैं, क्योंकि वहां सब ब्रह्मरूप ही है. ब्रह्मसे प्रकाशकत्व शक्ति लेकर ही सूर्य आदि देवता प्रकाश करते हैं, फिर ब्रह्मधाममें सूर्यका प्रकाश क्या कर सकता है. श्रीकृष्णने भी गीता (१५.६) में कहा है कि –

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ।।

उस परमधाममें जाकर ही आत्मा फिर इस संसारमें नहीं आती क्योंकि वही मुक्तिका सर्वोत्तम स्थान है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

ब्रह्ममैवेदममृतं पुरस्ताद् ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण ।
अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम् ।।
(मुंडक २.२.११)

ब्रह्मका श्रेष्ठ स्थान ब्रह्मसे ही परिपूर्ण है. आगे–पीछे, ऊपर–नीचे, दक्षिण–उत्तर, पूर्व–पश्चिम जहां भी देखो सब परमात्मा स्वरूप ही दिखाई देता है. इसलिए उसकी लीला भी आनन्दमयी है.

तस्माल्लीला रसमयी रसो लीलामयः स्मृतः ।
तादात्म्यादेकरूपत्वाल्लीला ब्रह्ममयी सदा ।।
आनन्दरूपा सामग्री सर्वाऽखंडसुखात्मिका ।
कैवल्या सच्चिदानन्दा ब्रह्मरूपा रसात्मिका ।।
(माहेश्वरतंत्र)

परमात्मा रस रूप है. **रसो वै सः** इसलिए उनकी लीला भी उसीकी अंगभूता होनेसे रसमयी है. उस परमात्माकी आनन्दरूपी जो सामग्री है, वह अखंड और सुख देने वाली है. अपने आनन्दके लिए वह स्वयं भिन्न–भिन्न रूप धारण कर आनन्द रस भोगता है. उसका स्थान दिव्य सर्वगुणसम्पन्न और शब्दातीत है.

अतः परमात्मा सच्चिदानंद धर्मयुक्त शुद्ध साकार नित्य विग्रह, दिव्य किशोर स्वरूप, स्वलीलाद्वैत अर्थात् अखंड धामलीलादि अनन्त सामग्री एवं अनन्त शक्ति सम्पन्न है.

सच्चिदानंद परमात्माके आनंद अंगसे परमधामकी यावत् सामग्री हैं और चिद्घन स्वरूप वह स्वयं है, एवं उसके सत अंगसे अक्षरब्रह्म हैं जो इस मायाको उत्पन्न और नाश करते हैं.

सदंशविश्वरूपाय चिदंशाक्षररूपिणे ।
आनन्दांशस्वरूपाय सच्चिदानन्दरूपिणे ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

उस परमात्माका सदंश ही अक्षरब्रह्म हैं. चिद्घन परमात्मा अपने चेतन तत्त्वसे सदा उनको प्रकाशित करते हैं. श्रीकृष्णने गीता (१५.१६) में कहा है कि –

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ।।
उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।।

लोकमें क्षर और अक्षर नामके दो पुरुष हैं. जितना जड–चेतनात्मक जगत है वह सब क्षर है और अक्षर ब्रह्म कूटस्थ हैं अर्थात् नित्य हैं. इन दोनोंसे पुरुषोत्तम परमात्मा भिन्न हैं.

अक्षरं ध्रुवमेवोक्तं पूर्णब्रह्म सनातनम् ।
कूटस्थ चैव नित्यं च यद् वदन्ति पुराविदः ।।

विद्वान लोग अक्षरब्रह्मको ही पूर्णब्रह्म, कूटस्थ, सनातन और नित्य आदि नामोंसे पुकारते हैं.

अक्षरः परमात्मा च पुरुषोत्तम संज्ञकः ।
उभावप्येक एवार्थो लीलाभेदन सुन्दरि ।।
एकमेवाद्वयं ब्रह्म द्विधालीला विभेदतः ।।

अक्षरब्रह्म और परमात्मा दोनों एक ही हैं. केवल लीलाका भेद है, क्योंकि परमात्माका सदंश होनेसे वह भी परमात्मा स्वरूप ही हैं.

सत चिद आनन्द भावमें, विविध भाव बहु भेद ।
गुप्त गुप्तचर गूढतर, कछु कछु जानत वेद ।।
सत्य सच्चिदानन्दमय सेवा विभव अभंग ।
शब्दातीत अनन्त सब, एक रूप एक अंग ।।

उसी सदंश अक्षरब्रह्मसे संसारकी रचना होती है. यथा –

Shri Prannath Ji Pustkalay

यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च यथा पृथिव्यामोषधयः संभवन्ति ।
यथा सतः पुरुषाद् केशलोमानि तथाक्षरात्सम्भवतीह विश्वम् ।।
(मुंडक १.१.७)

जिस प्रकार मकड़ी अपने शरीरसे जाला उत्पन्न कर स्वयं समेट लेती है, जिस प्रकार पृथ्वीसे लता, वृक्ष आदि उत्पन्न होते हैं और जिस प्रकार पुरुषके शरीरसे केश और लोम (बाल) उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार अक्षरब्रह्मसे यह संसार उत्पन्न होता है.

तदेतद् सत्यं यथा सुदीप्तात्पावकाद्
विस्फुल्लिंगाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः ।
तथाऽक्षराद्विविधाः सोम्यभावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापि यान्ति ।।
(मुंडक २.१.१)

यह सिद्धांत सिद्ध है कि जिस प्रकार अग्निसे हजारों चिनगारियां उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार अक्षर ब्रह्मसे अनन्त ब्रह्मांड उत्पन्न होकर अन्तमें उसीमें लय हो जाते हैं. इसी बातको भागवत भी पुष्ट करता है –

अंडोकोशो वहिरयं पञ्चाशत्कोटिविस्तृतः ।
दशोतराधिकैर्यत्र प्रविष्टः परमाणुवत् ।।
लक्ष्यन्तेऽन्तर्गताश्चान्ये कोटिशो ह्यंडराशयः ।
तमाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम् ।
विष्णोर्धाम परं साक्षात्पुरुषस्य महात्मनः ।।
(श्रीद्भागवत् तृतीयस्कन्ध)

पचास करोड योजन विस्तार वाले जिस ब्रह्मांडके चारों तरफ एक दूसरेसे दस गुना अधिक पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकारका आवरण है, वह और उससे भिन्न

Shri Prannath Ji Pustkalay

करोडों ब्रह्मांड जिस ब्रह्मके स्वरूपमें परमाणुके समान मौजूद हैं, वही सब कारणोंका कारण अक्षरब्रह्म है और वह विष्णु भगवानका मूल घर है अर्थात् विष्णु भगवान भी उसीसे उत्पत्ति और लयको प्राप्त होते हैं.

अक्षर सरूप के पल में, ऐसे कई कोटि इंड उपजे ।
पल में पैदा कर के, फेर वाही पल में खपें ।।

ऐसे शतशः प्रमाण वेदों, उपनिषदों और पुराणोंमें हैं. जिनसे यह सिद्ध होता है कि सृष्टिके कर्ता अक्षरब्रह्मके चार अन्तःकरण हैं. मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार. अक्षरब्रह्मके मनका नाम सत्स्वरूप, बुद्धिका नाम केवलब्रह्म, चित्तका नाम सबलिकब्रह्म और अहंकारका नाम अव्याकृत ब्रह्म है. इसी कूटस्थ अक्षर ब्रह्मके हृदयसे सुमंगला नामकी शक्ति उत्पन्न हुई और उसने महामोह रूप निद्राको उत्पन्न किया. इस नींदको वेदान्तमें अज्ञान कहा है जिसने अव्याकृत अक्षरको ढक दिया. जिस प्रकार नींद मनुष्यको घेर लेती है और स्वप्न चालू होता है उसी प्रकार अव्याकृतका मन मोहरूप नींदसे घिरकर उसी मोहरूपी जलमें हजारों वर्ष तक अंडाकार रूपमें तैरता रहा.

निःप्रवेशे निरालोके सर्वतस्तमसावृते ।
ब्रह्मांडमभूदेकमक्षरस्य कारणं परम् ।। (वि.पु.)

उसके अनन्तर अक्षरब्रह्मने उसे चेतन शक्ति प्रदान की. इससे वह अंड फूटा और उससे नारायण उत्पन्न हुए. जलमें निवास करनेसे ही उनका नाम नारायण हुआ. क्योंकि नार नाम जलका है और अयन घरको कहते हैं. जिसका घर जलमें है, वही नारायण है और वह जल मोह रूप अन्धकारसे भिन्न कुछ नहीं था. नारायण भगवानके मनमें इच्छा हुई कि – **एकोऽहं बहुस्याम् प्रजायेम**

Shri Prannath Ji Pustkalay

मैं एक हूं बहुत हो जाऊं. तब ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि देव उत्पन्न हुए. फिर पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश पांच तत्व और रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द ए पांच तन्मात्राएं उत्पन्न हुए. ब्रह्माजीसे मैथुनी सृष्टि उत्पन्न होकर चौरासी लाख योनियां और चौदह लोक बन गए. अंडसे उत्पन्न होने वाला पुरुष ही हिरण्यगर्भ और विराट पुरुष कहा जाता है. **हिरण्यगर्भ समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् (ऋग्वेद)** उस विराट् पुरुषके अंगोंमें चौदह लोकोंकी कल्पना की गई है. इन लोकोंको घेरकर क्रमशः पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन और बुद्धिके आठ आवरण हैं.

पृथ्वीके आवरणके बाद पृथ्वीसे दश गुना जल है. तीस हजार योजन नीचे जलमें एक कछुआ है. उसी कछुआ पर शेषनाग है. उन्हीं शेषनागकी शय्या बनाकर नारायण भगवान विराजमान हैं और लक्ष्मीजी उनकी सेवामें निमग्न हैं. शेष नागके हजार सिर हैं. और उन्हीं पर यह पृथ्वी फूलके समान स्थित है. शेषनागके सिर पर जहांसे पृथ्वी प्रारम्भ होती है, वहां सबसे प्रथम पाताल लोक है, सर्प जातिके जीव निवास करते हैं और मणियोंके प्रकाशसे वह लोक सदा प्रकाशित रहता है. पातालसे दश हजार योजन ऊपर रसातल है. यहां पर दैत्य–दानव आदि निवास करते हैं. यहां पर भी सुखोपभोगकी सब सामग्री मौजूद हैं और वह भी मणियोंके प्रकाशसे ही प्रकाशित रहता है. रसातलसे दस हजार योजन ऊपर महातल है. इस लोकमें भी सर्प जातिके स्त्री–पुरुष निवास करते हैं और यहां भी मणियोंका ही प्रकाश होता है. महातलके दश हजार योजन ऊपर तलातल है. इसमें मय नामक राक्षस राज्य करता है. इसमें भी नाना प्रकारकी सुख सामग्री मौजूद हैं और प्रकाश

Shri Prannath Ji Pustkalay

मणियोंका ही है. तलातलसे दश हजार योजन ऊपर सुतल लोक है. यहां राजा बलि राज्य करते हैं. यहां सब सांसारिक दुःखसे मुक्त होकर गए प्राणी निवास करते हैं. सुतललोकसे दश हजार योजन ऊपर वितल लोक है. यहां पर भी अनेक सुख साधनसे सम्पन्न दानव राक्षस आदि निवास करते हैं. यहांके पुरुष दश हजार हाथीके समान बल धारण करते हैं. वितल लोकसे दश हजार योजन ऊपर अतल लोक है. इसमें मय दानवके पुत्र बलका राज्य है. यहां पर भी अनन्त सुख–सामग्री समेत यहांके प्राणी निवास करते हैं. इन सातों लोकोंकी लम्बाई–चौडाई तो सौ–सौ योजनकी है किन्तु इनमें सुख स्वर्गसे भी अधिक है. यहां सब ऋतुओंमें सब प्रकारका सुख प्राप्त होता रहता है.

अतल लोकसे दस हजार योजन ऊपर यह मृत्युलोक है. इसमें सात द्वीप माने गए हैं. हम लोग जम्बूद्वीपके नीचे भाग भरतखंडमें रहते हैं. इसमें चौरासी लाख योनियोंका निवास है इस मृत्युलोकको कर्मभूमि माना गया है. जो प्राणी यहां पर जैसा कर्म करता है, उसी प्रकार इसी लोक अथवा दूसरे लोकोंमें जाकर अपने किये हुए कर्मोंका फल भोगता है. सब लोकोंमें इस लोकको उत्तम जानकर यहां आनेके लिए देवता भी इच्छा रखते हैं. क्योंकि यहीं निवासकर मनुष्य अनन्य भक्तिसे परमात्माको प्राप्त करनेमें समर्थ हो सकता हैं. भगवानके सबसे अधिक अवतार भारत वर्षमें ही हुए हैं. अवतार, तीर्थकर, देवता, ऋषि, मुनि और तीर्थकी संख्या सबसे अधिक यहीं है. इसलिये हिमालय और विन्ध्याचलके मध्य भागकी पृथ्वी ही विश्वके सम्पूर्ण स्थानोंमें उत्तम मानी जाती है. इसमें आने वाला मनुष्य बडा ही भाग्यवान है. जो इस अवसरको चूक जाता

Shri Prannath Ji Pustkalay

है वह अन्तमें नाना क्लोशोंको भोगता है. इसलिये मनुष्य जीवनकी सफलताके लिए सतत प्रयत्न करते रहना ही बुद्धिमानी है.

मृत्युलोकसे दस हजार योजन ऊपर भुवर्लोक है. उसमें पितृगण यक्ष, भूत, प्रेत, पिशाच, सिद्ध, विद्याधर आदि अनेक योनियां निवास करती हैं. भुवर्लोकसे ऊपर स्वर्ग लोकमें तैंतीस कोटि देवता निवास करते हैं. आठ लोकपालोंकी आठ पुरियां भी इसमें हैं. इनका राजा इन्द्र है. मृत्युलोकमें रहकर जो दान, पुण्य, तीर्थ, व्रत, यज्ञ आदि करते हैं, उनको स्वर्गका सुख प्राप्त होता है. स्वर्गमें अनेकों प्रकारके सुख प्राप्य हैं. वहां कल्पना मात्रसे सम्पूर्ण पदार्थ उपस्थित हो जाते हैं. किन्तु वह सुख भी क्षणिक सुख है, पुण्य नष्ट हो जाने पर फिर मृत्यु लोकमें आकर चौरासी लाख योनियोंमें जीवको भ्रमण करना पडता है.

स्वर्गके ऊपर महर्लोक है. जिसका विस्तार एक करोड योजन है. इसमें भरद्वाज, अंगिरा, कौत्स, भृगु आदि ऋषि निवास करते हैं. यहीं पर धर्मराजकी पुरी है. जहां निवास कर धर्मराज सबके पाप–पुण्यका निर्णय करते हैं. महर्लोकसे ऊपर दो करोड योजनका विस्तार वाला जनलोक है. उसमें ब्रह्माजीके मानसी पुत्र सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार आदि निवास करते हैं. यहां स्वर्गसे लाखों गुना अधिक सुख है और यह स्वयं प्रकाशमय स्थान है. इसमें सदा प्रकाश बना रहता है. जनलोकसे आठ करोड योजन ऊपर तपोलोक है. इसमें योगी, तपस्वी, मुनि आदि दिव्य स्वरूप धारण कर निवास करते हैं. इसमें भी अनन्त सुख हैं, जिनका उपयोग करते हुए चिरकाल तक यहां उत्तम कर्म वाले सिद्ध परुष रहते हैं. तपोलोकसे बारह करोड योजन ऊपर सत्यलोक है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

इसमें ब्रह्मा, विष्णु, महादेव इन देवताओंकी तीन पुरी हैं. यहां जरा, दुःख, रोग, व्याधिसे मुक्त होकर दिव्य रूप धारण करने वाले तेजोमय पुरुष निवास करते हैं. तीनों देवताओंकी भक्ति करनेवाले यहीं पर सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य इन चारों प्रकारकी मुक्तियोंको प्राप्त करते हैं.

इस प्रकार चौदह लोकोंका वर्णन विस्तार पूर्वक भागवतादि ग्रन्थोंमें किया गया है. किन्तु चौदह लोक भी महाप्रलयमें नाशको प्राप्त हो जाते हैं. जब तक संसारका प्रलय नहीं होता, तब तक किसी भी लोकमें जाकर उत्तम सुखोंको भोगा जा सकता है. महाप्रलयके बाद फिर चौरासी लाख योनियोंमें भ्रमण करना पडता है. इसलिये इन लोकोंका सुख चिरस्थायी होने पर भी स्थायी नहीं है. इन कोई भी लोकमें अखंड मुक्तिका स्थान नहीं है. अखंड मुक्तिके लिए तो पूर्णब्रह्म परमात्माकी ही भक्ति करनी पडेगी.

छत्रसाल – महाराज ! शास्त्रोंमें नरकोंका वर्णन भी है. वे कहां पर हैं ?

स्वामीजी – शास्त्रोंके अनुसार पातालमें जलके ऊपर और पृथ्वीके नीचे मध्य भागमें दक्षिण दिशाकी तरफ नरककुंड हैं. इनमें नीच कर्म करने वाले पापी भेजे जाते हैं. उन नरक कुंडोंमें निवास करने वाले जीवोंको महान कष्ट भोगना पडता है. मृत्युके बाद नारकीय शरीरकी रचना होती है. जिससे नरकका दुःख प्राप्त होता है. उस शरीरके साथ भी इसी शरीरमें निवास करने वाली इन्द्रियोंकी शक्तियां और इसी शरीरके मन, बुद्धि और जीव आदि रहते हैं. जिन–जिन इन्द्रियों अथवा मन, बुद्धि आदिसे पापोंका आचरण मनुष्य करता है उन–उन इन्द्रियोंको नरकमें महान दुःख प्राप्त होता

Shri Prannath Ji Pustkalay

है. भागवतमें नरकोंका विस्तार पूर्वक वर्णन है. यहां विस्तार भयसे नरकोंका और चौदह लोकोंका दिग्दर्शनमात्र करा दिया गया है. इन चौदह लोकोंका नाम ही ब्रह्मांड है. इसी प्रकारके करोडों ब्रह्मांड अक्षर ब्रह्मके एक रोममें परमाणुके समान दिखाई पडते हैं. शास्त्रोंमें तो यहां तक लिखा है कि जिस प्रकार धूलके कणोंकी संख्या कोई करना चाहे तो असंभव है उसी प्रकार ब्रह्मांडोंकी संख्या करना भी असंभव है. शायद कोई धूलके कणोंको गिन भी लेवे तो भी ब्रह्मांडकी गिनती नहीं हो सकती है. उसी प्रकार प्रत्येक ब्रह्मांडमें रहनेवाले ब्रह्मा, विष्णु आदि देवोंकी भी संख्या नहीं हो सकती है.

इन असंख्य ब्रह्मांडोंके ऊपर ज्योति स्वरूपका स्थान है. यहींसे प्रत्येक ब्रह्मांडके लिए जीवोंकी संख्या निश्चित कर हर एक ब्रह्मांडमें भेजा जाता है. जीवोंको चेतन शक्ति भी यहींसे प्राप्त होती है. अतः इस ज्योतिस्वरूपको ईश्वर, शब्दब्रह्म, मृत्युंजय, व्यापकब्रह्म आदि नामोंसे पुकारा है. ज्योति स्वरूपका मंडल एक अरब योजनका विस्तार वाला है. इससे पचास करोड योजनकी दूरी पर गायत्री नामकी शक्ति निवास करती है, जो वेदोंकी माता कही जाती है. इसी ब्रह्मांडमें इसी गायत्रीके द्वारा चारों वेदोंका ज्ञान आता है. गायत्रीसे ऊपर महतत्त्वका स्थान है जिसको महद्ब्रह्म निराकार, निरंजन, मोहतत्त्व, शून्य आदि नामोंसे पुकारा जाता है. मोहतत्त्वसे ऊपर सात शून्य हैं. उनका विस्तार एक खरब योजन है. इसको शक्ति भी कहते हैं. इसमें अनन्त दिव्य लीलाएं मौजूद हैं. अनेकों योगीपुरुषों द्वारा इसी शून्यमें समाधि लगाई जाती है. ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गायत्री, ज्योतिस्वरूप और धर्मराज सबको शक्तियां यहींसे प्राप्त होती हैं. सात रागोंका स्थान भी यहीं है. इसको शास्त्रोंमें

Shri Prannath Ji Pustkalay

प्रकृति, मायाब्रह्म, इच्छाशक्ति आदि विविध नामोंसे पुकारा जाता है. इस सात शून्यसे ऊपर महाविष्णु आदि नारायणका स्थान है. इन्हीं महाविष्णुसे असंख्य ब्रह्मांडोंका उदय लय हुआ करता है. पातालसे लेकर यहां तक जितने स्वरूपोंका वर्णन किया गया है, महाप्रलयमें वे सब जीव इसी महाविष्णुमें लयको प्राप्त होते हैं.

इन महाविष्णुके चारों तरफ अपार विस्तृत महाशून्य है. जिसमें असंख्य ब्रह्मांड उदय–लयको प्राप्त होते हैं. इस महाशून्य स्थानको परमाकाश, महाविष्णु, महामाया, शब्दब्रह्म आदि अनेक नामोंसे पुकारा जाता है. अष्टावरण सहित विराट, महतत्त्व, इच्छाशक्ति, अहंकार आदि सब महाविष्णुके अन्दर मौजूद हैं और महाविष्णु इस महाशून्यमें विराजमान हैं. महाप्रलयके समय अष्टावरण सहित विराट ज्योतिस्वरूप, गायत्री, सातशून्य, निरंजन, निराकार और महाशून्यके सहित महाविष्णुका लय हो जाता है. इसीको शास्त्रोंमें क्षर पुरुष कहा है. **क्षरतीति क्षरः** जिसका नाश होता है, उसे क्षर कहते हैं.

छत्रसालजी – महाराज ! प्रलय कितने प्रकारके होते हैं ?

स्वामीजी – नित्यप्रलय, नैमित्तिकप्रलय, प्राकृतिकप्रलय और आत्यन्तिकप्रलय अथवा महाप्रलय भेदसे प्रलय चार प्रकारके होते हैं. प्रतिदिन प्राणियोंके निरन्तर ह्रास (क्षीण) होते रहने अथवा रात्रिके समय सो जानेका नाम ही नित्य प्रलय है. सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि इन चार युगोंको एक चतुर्युगी कहते हैं. जब एक हजार चतुर्युगी व्यतीत हो जाते हैं तो ब्रह्माजीका एक दिन होता है. और इतने ही समय ब्रह्माजीकी रात होती है. ब्रह्माजी अपने दिनके अन्तमें जब रात्रिको शयन करते हैं तो शेषशायी नारायण, पातालसे स्वर्ग लोक

Shri Prannath Ji Pustkalay

अर्थात् दश लोकोंको अपने अन्दर लीन कर सो जाते हैं. उस समय दश लोकोंका नाश हो जाता है. उसीको नैमित्तिक प्रलय कहते हैं. उनके सोकर उठने पर फिर ये लोक जैसेके तैसे बन जाते हैं. इस प्रकार ब्रह्माजी जब सौ वर्षके होते हैं तो उनकी आयु समाप्त हो जाती है उस समय रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द ये पांच तन्मात्रा, अहंकार, महतत्त्व, ब्रह्मा, विष्णु, महादेव और शेषजी जितने भी विराटके देवता हैं, सब अपने मूलमें लय हो जाते हैं. इसीको प्राकृतिक प्रलय कहते हैं. भागवतमें लिखा है कि –

जीवात्माके सांसारिक कर्मोंके बन्धन जब ज्ञानके द्वारा नष्ट हो जाते हैं और जब वह परमात्माके अखंड स्वरूपको प्राप्त कर सर्वदाके लिए आवागमनसे छुटकारा प्राप्त कर लेता है तो उस जीवका आत्यन्तिक प्रलय अथवा महाप्रलय हो जाता है. ब्रह्मवैवर्त पुराणमें लिखा है कि – ब्रह्मा, विष्णु, नारायण, शम्भु आदि जितने भी देवता हैं वे सब अपने–अपने अधीन लोकोंको अपनेमें लीनकर प्रकृतिमें और प्रकृति जब अपने मूल स्वरूप ब्रह्ममें लीन हो जाती है तो उसे महाप्रलय कहते हैं. अर्थात् अक्षरब्रह्मसे उत्पन्न अनन्त समष्टिरूप जगत जब अपने मूलरूप अक्षरब्रह्ममें लीन हो जाते हैं तो उसे ही महाप्रलय कहते हैं. उस समय अक्षरब्रह्म और अक्षरातीत पुरुषोत्तम पूर्णब्रह्मके अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रह जाता है.

क्षर पुरुषके ऊपर अक्षरब्रह्मका स्थान है. अक्षरब्रह्मके चार अन्तःकरण हैं. मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार. अहंकार रूप अन्तःकरणको अव्याकृत कहते हैं. इसी अव्याकृतको सांख्यशास्त्रमें प्रकृति पुरुष कहा गया है उसीको न्यायशास्त्र ईश्वरके नामसे पुकारता है. सारे विश्वोंका उदय और लय यहींसे होता है. यह अव्याकृत है, इसमें

Shri Prannath Ji Pustkalay

कभी विकार उत्पन्न नहीं होता. यह सदा एक रस अखंड और अविनाशी है. इसमें प्रणव (ओंकार) का नित्य स्थान है. वेदोंका मूल स्थान भी यही है. इसमें गोलोक और रासलीलाका प्रतिबिम्ब है. वन, उपवन, नदी, तालाब, महल आदि अनेकों सुख सामग्रीसे यह संयुक्त है. इसमें सात महाशून्यका भी स्थान है.

अव्याकृतके ऊपर अक्षरब्रह्मका चित्तरूप अन्तःकरण है. जिसे सबलिक ब्रह्म कहते हैं. सबलिक ब्रह्मकी शक्तिका नाम कालमाया है. इसीको सुमंगलाशक्ति भी कहते हैं. इसीके द्वारा अक्षरब्रह्म अनन्त मायिक सृष्टियोंकी रचना करते हैं. इसलिये इसको मूल प्रकृति भी कहते हैं. इसी सबलिक ब्रह्मके स्थानमें चिदानंद लहरी नादशिव, सदाशिव, और शिवका मंच बनाकर और ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र, ईश्वरका पाया बनाकर विराजमान है. यह अनन्त शक्ति संपन्न है. सबलिक ब्रह्मके स्थानमें नित्य गौलोकी लीला होती है. उसमें नन्द, यशोदा, गोपी, ग्वाल, गौ–वत्स, जमुना गोवर्धन आदि सब स्थान नित्य और चेतनके रूपमें अवस्थित हैं. इसी नित्य गौलोकीय लीलाका प्रतिभास अव्याकृतमें पडता है और अव्याकृतकी लीलाका प्रतिभास नारायणके शरीरसे ही इस मृत्युलोकके व्रजमंडलकी लीलामें उतरा था. सबलिक ब्रह्मके आगे जमुना नदी बह रही है. जमुना नदीके उस पार अक्षरब्रह्मकी बुद्धिरूप अन्तःकरण है जिसे केवलब्रह्म कहते हैं.

कर्मी योगी च विद्वांसोऽन्तराले यत्सुरालयम् ।
सत्यवैकुंठ कैलाशः क्षीराब्धिभैरवस्तथा ।।
विश्वरूपं च चैतन्यमेतन्मायास्वरूपकम् ।
माया परं भवेद्ब्रह्म तत्परं ब्रह्म केवलम् ।।

(वज्रसूचि)

Shri Prannath Ji Pustkalay

केवलब्रह्मकी शक्तिका नाम योगमाया है. इसी योगमायाने अखंड वृन्दावन तैयार किया था जिसमें –

स्थानं नित्यविहारस्य ख्यातं वृन्दावनं वनम् ।
यत्र नित्यं विहरति कृष्णो राधिकया सह ।।

जिस अखंड वृन्दावन स्थानमें श्रीकृष्ण और राधा नित्य रास लीलामें निमग्न रहते हैं. गर्गसंहितामें भी लिखा है कि –

एकं वृन्दावनं नाम वैकुंठाच्च परात्परम् ।।

वृन्दावन एक ऐसा स्थान है, जो वैकुंठके परसे भी पर है. इसलिये नित्य अखंड महारास सदा ही केवल धाममें होती रहती है. यहां नौ रसकी नौ भूमिका है. केवलब्रह्मको शास्त्रकारों और महात्माओंने पूर्णब्रह्म परमात्मा करके वर्णन किया है. वास्तवमें परमधाममें निवास करनेवाले पूर्णब्रह्म परमात्माके समान ही यहां लीला होती है. परमधामके समान ही जमुना, सातघाट, कुंज–निकुंजवन, महल, मंदिर, वन, उपवन आदि चैतन्यरूपमें अवस्थित हैं और यहांके सुख सामग्रीका कोई पार नहीं है.

केवल ब्रह्मके ऊपर अक्षरब्रह्मका मनरूप अन्तःकरण है. जिसे सत्स्वरूप ब्रह्म कहते हैं. इसमें सच्चिदानन्द परमात्माके सदंश, चिदंश और आनन्दांशकी सब लीलाओंका समावेश है. मनसे ही सारा कार्य सम्पन्न होता है.अक्षरातीत पूर्णब्रह्म परमात्माका आनन्दांश अक्षर ब्रह्मके मन पर ही आता है. मनसे बुद्धिमें, बुद्धिसे चित्तमें चित्तसे अहंकारमें आकर सारे विश्वमें आनन्दका प्रवेश हो जाता है. इसलिये संसारके प्रत्येक प्राणियोंकी आत्मा आनन्द अन्वेषणमें ही तत्पर रहती है. किन्तु वास्तविक आनन्द तो परमात्माके घरमें ही है. यहां तो आनन्दके इच्छुक होने पर भी आत्मा क्षुद्रानन्दके अन्दर

Shri Prannath Ji Pustkalay

ही मस्त है. अविनाशी और अखंड आनन्दके लिए तो प्रभु भक्ति ही करनी चाहिए.

इसी अक्षर ब्रह्मके मनसे उत्पन्न चौबीस हजार कुमारिकाओंने व्रजमंडलमें प्रकट होकर कात्यायनी व्रत किया था. जिनको श्रीकृष्णजीने रासलीलामें रास खेलाकर संसार बन्धनसे मुक्त कर दिया था. सत्स्वरूप अक्षर ब्रह्मके स्थानका सुख शब्दातीत है. यह स्थान सर्व रस और सब सामग्री संयुक्त है. इनके आगे साढे चार लाख कोशकी चौडी और नव लाख कोसकी लम्बी जमुना नदी बहती है. जमुना नदीके उस पार पूर्णब्रह्म परमात्माका निवास स्थान है, जिसे परमधाम कहते हैं. वहीं पहुंचकर आत्मा सदाके लिए आवागमनसे रहित हो जाती है. यह अखंड और असीम आनन्दका स्थान है. इसलिये मुक्ति चाहने वाले पुरुषोंको इसी स्थानका ध्यान करना चाहिए. इस परमधामके अतिरिक्त दूसरा कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां जाकर आत्मा नित्य रूपमें ब्रह्मानंद सुख ले सके. अतः यही सर्वोत्तम स्थान अनन्त सामग्री और सुखका घर है. इससे पर कुछ नहीं है. **सा काष्ठा सा परा गतिः.**

छत्रसालजी – प्रभो ! परमधामका भी संक्षिप्त वर्णन कर दीजिए, जिससे उस शोभाको हृदयमें ग्रहण किया जा सके.

स्वामीजी – वत्स ! यद्यपि वह स्थान मन, वाणीके पहुंचसे परे है और संसारमें कोई भी पदार्थ उसके तुल्य नहीं जिसका दृष्टांत देकर समझाया जा सके. फिर भी ध्यान लगानेके लिए संक्षेपमें उसका वर्णन करता हूं, सुनो.

परमधामकी शोभा अनुपम, अलौकिक, असीम और अनन्त है, परमधामके मध्य भागमें परमात्माका निवास स्थान रंग महल है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

जिसकी दश भोम हैं. वह दो सौ एक हांसके बने हुए, एक पहलदार चबूतरे पर स्थित है. सौ हाथका एक हांस होता है. चबूतरा परमधामकी जमीनसे सौ सीढी ऊंचा है. रंग महलका प्रधान प्रवेश द्वार पूर्व दिशामें है. द्वारमें लगे हुए हेम, हीरा और पुखराज आदि रत्न करोडों सूर्यको लज्जित करनेवाली शोभाको धारण करते हैं. प्रवेश द्वारके अन्दर अठाईस थम्भोंका बना हुआ एक विशाल चबूतरा है उसके आगे चार–चार चौरस महलोंकी कतारें हैं जो सर्व सुखोंसे परिपूर्ण हैं. चौरस महलोंके आगे पहलदार गोल महल है. जिनमें प्रथम महलके मध्य भागमें एक अत्यन्त रमणीय चबूतरा है. उस चबूतरेके किनारे पर चौसठ थंभ लगे हुए हैं. मध्यमें रत्न जड़ित पशमीनाका गलीचा बिछा है और गलीचेके मध्यमें रत्नोंके प्रकाशसे प्रकाशमान सिंहासन है. उस पर पूर्णब्रह्म परमात्मा अपनी शक्ति श्यामाजीके साथ विराजमान हैं. और चारों तरफ गलीचे पर उनकी शक्तियां, जिन्हें ब्रह्मसृष्टि, ब्रह्ममुनि आदि नामोंसे शास्त्रकारोंने उल्लेख किया है, बैठी हैं. इसी स्थानको मूल मिलावा कहते हैं.

चतुः षष्ठया मणिस्तम्भैश्चतुर्दिक्षु विराजितम् ।
तत्र सिंहासने ध्यातेत् कृष्ण कमललोचनम् ।।

मणि जडित चौसठ स्थंभोंसे आवृत्त सिंहासन पर विराजमान कमल लोचन परमात्मा स्वरूप श्री कृष्णका ध्यान करना चाहिए.

अथ यदिदमस्मिन् ब्रह्मपुरे दहरं पुंडरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तरा ।
काशस्तस्मिन्यदन्यदन्वेष्टव्यम् तद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति ।।
(छान्दोग्य ८.१.१)

इस परमधाममें आत्मस्वरूप कमल फूलके समान गोलाकार मूल मंदिर है और इसमें अवस्थित सिंहासन पर विराजमान पूर्णब्रह्म

Shri Prannath Ji Pustkalay

परमात्माका ही अन्वेषण और जिज्ञासा करनी चाहिए.

दूसरी भोममें बारह हजार भूलवनीके मन्दिर हैं, जहां नाना प्रकारके रस, रंग लीला होती हैं. तीसरी भोममें दस मन्दिरकी लम्बी और चार मन्दिरकी चौडी एक बैठक है. जहां सिंहासनारूढ होकर परमधामके प्रत्येक पशु, पक्षी और अक्षरब्रह्मको दर्शन देकर श्रीराजजी कृतार्थ करते हैं. चौथी भोममें नृत्यस्थली, पांचमी भोममें शयनकक्ष, छटी भोममें सुखपाल, सातवीं और आठमी भोममें हिंडोले, नवमी भोममें दूरदर्शक छज्जे और दशमी भोममें वाटिका जल प्रपात और सिंहासन आदि अपार शोभासे संयुक्त चांदनी रंग महलकी विशेषता है. इसी उपरोक्त शोभाको माहेश्वर तन्त्र स्पष्ट करता है–

मूलमन्दिरमेतत्तु ह्यद्भुतं सुरसुन्दरि ।
नवभूम्यात्मकं यच्च दशमी चित्रशालिका ।।
मूलभूमिस्तु प्रथमा द्वितीया मतिविभ्रमा ।
तृतीय भोगरूपा च नृत्यभूमिश्चतुर्थिका ।।
पंचमी शयनाख्या च षष्ठी वैमानिकीति च ।
सप्तमी ह्यष्टमी चोभे दोलाभूमि निरूपिते ।।
नवमी दूरलक्षा च दशमी चन्द्रभूमिका ।
इत्येता दश चाख्याताः भूमयो निजवेश्मनः ।।

रंग महलके सामने चबूतरेके नीचे चांदनी चौक है. प्रातःकाल इसी जगह खडे होकर अक्षरब्रह्म श्रीराजजीके दर्शन कर अपनेको कृतकृत्य समझते हैं. रंग महलके सामने पूर्व दिशामें केला, निम्बू अनार, अमृत, जाम्बू, नारंगी और वट नामके सात बन हैं. इन सातों बनोंके नाम पर ही जमुनाजीके सात घाट हैं. वनोंके आगे जमुनाजीकी

Shri Prannath Ji Pustkalay

अमृतमयी स्वच्छ धारा प्रवाहित हो रही है. जिसकी लंबाई अठारह लाख कोसकी है. रंगमहलके दक्षिण तरफ वट पीपल की चौकी, महानद और मानिक पहाड हैं. छान्दोग्य उपनिषद्में भी इसके प्रमाणमें लिखा है –

ब्रह्मलोके तृतीयस्यामितिदिवि । तदैरं मदीयं सरस्तदश्वत्थः सोमसवनः उस परमधाममें अनन्तवन, सबकी आत्माको प्रसन्न करने वाला तालाब और पीपलका एवं अमृतका वन है. रंगमहलके पश्चिम तरफ फूलबाग, नूरबाग, अन्नवन दूब दुलीचा एवं पश्चिमका चौगान है. रंगमहलके उत्तर तरफ लाल चबूतरा, खडोकली (बावडी) बडोवन, मधुवन, महावन और पुष्पराज पर्वत हैं. पुष्पराज पर्वत ही जमुनाजीका मूल स्थान है. यहींसे निकलकर जमुनाजी बंगला, मूल कुण्ड और ढपी चबूतरासे होती हुई साढे चार लाख कोस तक पूर्व जाकर केलके घाटसे दक्षिण तरफ घूम जाती हैं. और नव लाख कोश दक्षिण प्रवाहित होकर पश्चिम तरफ साढे चार लाख कोश पर स्थित हौजकौसर (तालाब) में सम्मिलित हो जाती है. इसके चारों तरफ चौबीस हांसका महल, वनकी नहरें और जवेरोंकी नहरें हैं. इन स्थानोंकी शोभा इस मायाजन्य स्थानमें बैठकर इस असत्य जिह्वासे नहीं हो सकती है. वह तो आत्मिक दृष्टिसे ही देखा जा सकता है क्यों कि वह स्थान अनुभवगम्य है. परमधामकी चारों तरफ नूरसागर, नीरसागर, क्षीरसागर, घृतसागर, मधुसागर, रससागर और सर्वरससागर नामके आठ सागर है. जो आग्नेयकोणसे प्रारम्भ होकर पूर्व तक वर्तमान हैं. इन आठ सागरोंके मध्यमें समुद्रोंकी लम्बाई चौडाईके बराबर ही आठ भागोमें विभक्त जमीन है. समुद्रोंके चारों तरफ गगनचुंबी महल, घाट, बागबगींचे मौजूद हैं.

Shri Prannath Ji Pustkalay

जो रत्नजडित, चेतन, सर्वगुण सम्पन्न प्रकाशमय और आत्मरूप हैं. इनको बडा दुर्ग भी कहा जाता है.

छत्रसाल ! यद्यपि परमधामका वर्णन मैंने समझनेके लिए थोडेमें कह दिया है और सांसारिक पदार्थोंके समान ही नाम भी बताये हैं, किन्तु यह ध्यानमें रखनेकी बात है कि परमधाममें कोई भी वस्तु जड नहीं है. अपितु वह चेतन अविनाशी, नित्य, अखंड, विभू सर्वान्तर्यामी सर्वज्ञ और सर्वशोभा–सम्पन्न हैं. क्योंकि वहांका यावत् पदार्थ परमात्माका ही स्वरूप है. परमधाममें निवास करने वाली ब्रह्मसृष्टियां ही उसको तत्त्वतः जाननेमें समर्थ हैं. क्योंकि सच्चिदानंदमयी ब्रह्मसृष्टियां ही सच्चिदानंदमय जल, स्थल, बाग, वृक्ष और पशु–पक्षियोंके वास्तविक रहस्यको अनुभव गम्य कर सकती है. परमधामका विशेष विस्तार देखना चाहो तो तारतमसागर ग्रन्थमें नवम स्कन्ध परिक्रमामें देख सकते हो.

छत्रसाल – परमात्मन् ! श्रीराज शब्दका क्या अर्थ है ?

स्वामीजी – परमात्माके असंख्य नाम हैं. इनमें श्रीराज यह भी एक नाम है. राज शब्दका शब्दार्थ तो यह है कि – **राजते स्वयं प्रकाशते यः स राजः** जो स्वयं प्रकाशमान है जिसके प्रकाशसे सारा विश्व प्रकाशित होता है, जो सबका स्वामी है, उसको राज कहते हैं.

छत्रसालजी – प्रभो ! आपने परमात्माको शुद्ध साकार, स्वलीलाद्वैत वर्णन किया है. और वेदों, उपनिषदों आदि ग्रन्थोंमें परमात्माका साकार निराकारके रूपमें वर्णन मिलता है और प्रत्येक संप्रदायवादी उसको साकार या निराकारके रूपमें मानकर ही उसकी उपासना करते हैं. इसका क्या कारण है ?

Shri Prannath Ji Pustkalay

स्वामीजी – वेदों और उपनिषदोंमें तो उसको शुद्ध साकार वर्णन किया है, किन्तु जिसकी बुद्धि जहां तक पहुंचती है वह वहीं तक वर्णन करता है. जो लोग वेद, शास्त्र, पुराणोंका अच्छी तरह मंथन नहीं करते, वे ही परमात्माको साकार या निराकार कह दिया करते हैं. विचारदृष्टिसे देखने पर साकार और निराकार तो अपने आप ही विलीन हो जाते हैं. निराकार तो शून्य वस्तुका नाम है. जिसमें आकार ही नहीं होगा, उसमें कर्तृत्व शक्ति कहांसे आयेगी. निराकार पदार्थ तो निर्गुण होता है उसमें आनन्द भी नहीं है और न ही वह ध्यान करने योग्य है. वह मन, वाणीसे अगोचर है, दिखाई नहीं पडता. इसलिये लोग निराकार कह कर ही सन्तोष कर लेते हैं. और जो लोग ईश्वरको निराकार कहते हैं उनके भी ग्रन्थोंको देखो तो उनमें परमात्माके स्वरूपको मान रखा है. कहनेके लिए निराकार–निराकारका प्रचार करते हैं. साकार तो नाशवान होता है. संसारमें जो भी साकार या निराकार पदार्थ हैं, वे सब महाप्रलयमें नष्ट होने वाले हैं. इसलिये परमात्मा तो शुद्ध साकार ही है. आदि शंकराचार्यजीने भी साकार निराकार दोनोंका खंडन कर दिया है. **साकारस्य विनाशोऽस्ति निराकारस्य शून्यत्वाच्छून्यस्यचावस्तुत्वादुभयपक्ष विभिन्नं वस्तुज्ञानं मोक्षः (वज्रसूची)**. साकार पदार्थोंका नाश अवश्यम्भावी है और निराकार शून्य है. जो शून्य है वह अवस्तु है अर्थात् कुछ नहीं है वह ब्रह्म कैसे हो सकता है ? अतः साकार निराकार दोनोंसे भिन्न जो परमात्माका चिन्मय स्वरूप है, वही मोक्ष है. मुक्तिका स्थान है. इसीलिये पुराणोंमें लिखा है कि –

चिदादित्यं किशोराङ्गं परेधाम्नि विराजितम् ।
स्वरूपं सच्चिदानन्दं निर्विकारं सनातनम् ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

परमधाममें निवास करने वाला वह पूर्णब्रह्म परमात्मा चेतन, तेजोमय, किशोरांग, सच्चिदानंद स्वरूप, निर्विकार और सनातन सदा एक रस नित्य अविनाशी है.

सर्वे नित्या शाश्वताश्च देहास्तस्य परात्मनः ।
हानोपादानरहिता नैव प्रकृतिजाः क्वचित् ।।

उस परमात्माके सब अंग अनादि और चेतन हैं. नाश और उत्पत्तिसे रहित हैं. प्रकृतिसे उत्पन्न नहीं किन्तु अनादि सिद्ध हैं. इसलिए वेदोंमें भी लिखा है कि–

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।

(यजुर्वेद अ. ३१.१८)

इस माया रूप अन्धकारसे प्रकाशमय उस परमात्माको मैं जानता हूं. उसको जान लेने पर ही जीवात्मा मृत्युका अतिक्रमण कर सकता है. मुक्तिका दूसरा कोई रास्ता नहीं.

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम् ।
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्विदाम देवं भुवनेशमीड्यम् ।।
न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके
न चेशिता नैव च तस्य लिंगम् ।
स कारणं करणाधिपाधिपो न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः ।।

(श्वेताश्वतरोपनिषद् ६.७ तथा ९)

वह सब ईश्वरोंका महान ईश्वर है. सब देवोंका परमदेव है. सब पतियोंका परम पति है. उसका कोई पति नहीं है. न उसका कोई शासक है. वही सबका कारण है, करण है, मालिक है. जो

Shri Prannath Ji Pustkalay

कुछ भी है वही है. किन्तु उसके रूपको धीर आत्मसंयमी पुरुष ही देख सकते हैं. **तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीराः** (वेद) इस प्रकार वेद, शास्त्र, पुराणोमें परमात्माके स्वरूपके सम्बन्धमें शतशः प्रमाण लिखे हैं किन्तु अल्पमेधा पुरुषोंने उसकी मनमानी कल्पना कर ली है.

हां, विश्वका कारण रूप जो ब्रह्म है, उसके दो रूप हैं– मूर्त और अमूर्त. मृत्युको प्राप्त होने वाला और सदा रहने वाला, स्थिर और चर, साकार और निराकार.

द्वे वाव ब्रह्मणो रूपे मूर्त चैवामूर्त च मर्त्य चामृतं च ।
स्थितं च यच्च सच्च त्यच्च ।। (बृहदारण्यक २.३.१)

इसलिए संसारका कारण रूप ब्रह्म ही संसारमें व्यापक बनकर साकार और निराकार रूपमें स्थित है. उसीको परमात्मा समझकर लोगोंने साकार और निराकार मान रखा है. लेकिन परमात्मा तो साकार निराकार दोनोंसे पर चिन्मय शुद्ध साकार है.

एवं विदित्वा परमात्मरूपं गुहाशयं निष्कलमद्वितीयम् ।
समस्तसाक्षिं सदसद्विहीनं प्रयाति शुद्धं परमात्मारूपम् ।।
(कैवल्योपनिषद्)

परमधाममें स्थित अद्वैत, ह्रासरहित, सबका साक्षी रूप सतसे पर उस परमात्माके शुद्ध रूपको जानकर जो उसका भजन करता है, वही उसको प्राप्त कर सकता है.इस प्रकार पातालस लेकर अष्टावरण सहित विराट, आदि नारायण, ज्योति स्वरूप, गायत्री, प्रणव, निराकार, अक्षरब्रह्म, परमधाम और परमधाममें विराजमान पूर्णब्रह्म परमात्माके शुद्ध स्वरूपका वर्णन इस छोटेसे ग्रन्थमें संग्रहीत करनेका प्रयत्न किया गया है. जो जिज्ञासु सज्जन विस्तारपूर्वक

Shri Prannath Ji Pustkalay

इसको समझना और जानना चाहें, उन्हें विराट पट दर्शन ग्रन्थ पढ़नेका अवश्य कष्ट करना चाहिए.

अष्टावरण सहित ब्रह्मांडसे लेकर परमधाम तकका वर्णन महात्मा मुकुन्ददासजीने बडे सुन्दर पदोंमें किया है. उन पदोंको भी यहां उद्धृत कर देते हैं, ताकि सर्व साधारण जनता उससे लाभ उठा सके. पद्य निम्न प्रकार है –

वह घर सतगुरु मोही लखाया, जहां बसे पुरुष पुराना ।
अगम अगोचर सबसे न्यारा, परम हंस मन माना ।।
सात पाताल सात स्वर्ग ऊपर, तहां वैकुण्ठ रचाना ।
तहां चतुर्भुज विष्णु विराजै, चार मुक्ति परवाना ।।
तिन के आगे आठ आवरण, तिनका सुनो उनमाना ।
आठ आवरण आठों रंगा, एकते एक दस गुना ।।
तिन के आगे आदिनारायण, महाविष्णु तिन नामा ।
चार वेद हैं जिन की श्वासा, तिन में जग उरझाना ।।
तिन के आगे ओंकार है, नाद बिन्दु को थाना ।
मोह माया की उत्पति कहिये, सतगुरु शब्द से जाना ।।
तिन के आगे ज्योति सरूपी, निर्गुन रूप बखाना ।
पांच देव की उत्पति कहिये, तिन सब सृष्टि रचाना ।।
तिन के आगे काल निरंजन, जिन खाय सृष्टि के प्रान ।
सतगुरु सब्द वचे नर सोई, जिन निजनामहि जाना ।।
ताके आगे सात शून्य है, तिन का सुनो परनामा ।
सात शून्य हैं सातों रंगा, उठत राग बहुताना ।।
कोटि कोटि सक्ति तिन मांही, काल माया नींद निदाना ।
एक एक शून्य खरब विस्तारा, मकरी तार निसाना ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

ओहं सोहं अजपा कहिये, महाशून्य प्रगटाना ।
सात सुरति को उत्पति कहिये, सो प्रलय तर आना ।।
तिनके आगे पुरुष जो कहिये, जाको कबीर धरे ध्याना ।
उन सात लोक अमर कर गाया, चार द्वीप तिन थाना ।।
सौ सौ कोटि सखी तिन माहीं, तिनका सुनो परमाना ।
षोडश वर्ष को रूप जो कहिये, सोभा षोडश भाना ।।
ता आगे गौलोक जो कहिये, श्याम सरूप बखाना ।
सौ सौ कोटि सखी तिन माहीं, कर क्रीडा विध नाना ।।
तिनके आगे अखण्ड वृन्दावन, न जाने खलक जहाना ।
बारह सहस्र सखी तहां कहिये, जोगमाया परमाना ।।
तिन के आगे सबलिक ब्रह्म हैं, सतगुरु दई पहचाना ।
कोटि असंख्य सखी तहां कहिये, योगमाया उतपाना ।।
तिन आगे केवलब्रह्म कहिये, निर्मल पद अस्थाना ।
बारह हजार सखी संग राजे, केवल रूप निदाना ।।
तिन के आगे अक्षर ब्रह्म कहिये, यह पद है निरवाना ।
और भये सब याके अंगा, यह अजर अमर अस्थाना ।।
बारह हजार सखी संग राजे, को करि सकत बखाना ।
झलके भूमि किरन परकासा, मानो कोटि कोटि ससिभाना ।।
तिन के आगे पूर्णब्रह्म जो कहिये, सतगुरु दई सहिदाना ।
सब कर्तन को कर्ता कहिये, वेद कतेब नहीं जाना ।।
अगणित धाम भूमिवन सोहे, निज परमधाम अस्थाना ।
जहं झलके भूमि होय झलकारा, तेज पुंज आसमाना ।।
बारह हजार सखी तहं राजे, चिदानन्द परमाना ।
तिन की सोभा कहत न आवे, कोटिन सूर्य लजाना ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

बिन सतगुरु पहुंचे नहीं कोई, अनेक कथे जो ज्ञाना ।
प्राणनाथ सतगुरु की दया, दास मुकुन्द उर आना ।।

छत्रसालजी – सद्गुरो ! शास्त्रोंमें परमात्माके नाम लिखे हैं और सब नामोंका महत्त्व भी लिखा है. क्या उन नामोंमें और उनकी उपासनाके स्वरूपोंमें कुछ अन्तर है ?

स्वामीजी – वत्स ! तुम्हारा प्रश्न बहुत सुन्दर है और तुम्हारी धार्मिक भावना बहुत ऊँची है. तुम जो भी प्रश्न करते हो वह जन साधारणको ध्यानमें रखकर करते हो. इसलिये मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूं. अच्छा सुनो !

शास्त्रोंमें परमात्माके अनेक नामोंका जो महत्त्व लिखा है, वह सब सत्य है. उन नामोंका फल समान है. सच पूछो तो परमात्माका नाम तो कोई लिखा ही नहीं है. जो शब्द परमात्माके स्वरूपका ज्ञान करानेवाले हैं, वे सब शब्द विशेषण हैं, परमात्माकी विशेषता बतलाने वाले है. क्योंकि परमात्माका वास्तविक नाम यही है, ऐसा निश्चय करना असम्भव है. फिर भी अन्वर्थक संज्ञायें हैं. उन्हींके आधार पर परमात्माको याद किया जाता है. उनमें सच्चिदानन्द, पूर्णब्रह्म, श्रीकृष्ण, श्रीराज, धामधनी, अक्षरातीत, सनातन आदि संज्ञायें ही अन्वर्थक संज्ञा हैं और इन्हीं नामोंसे परमात्माको याद करना चाहिए. इसमें आपत्तिकी कोई बात नहीं है. किन्तु जो लोग भ्रममें आकर परमात्माके स्वरूप अथवा नामका दूसरे देवोंमें अध्यारोप कर लेते है, उन्हें वास्तविक फलकी प्राप्ति नहीं होती.

जैसे देहाती लोग थानेदार अथवा दूसरे राजकर्मचारीकी हुकूमतको देखकर उसे ही राजा समझ लेते और उसकी सेवामें तरह–तरहकी भेंट उपस्थित करना एवं उसकी आज्ञाका पालन करना अपना परम

Shri Prannath Ji Pustkalay

कर्तव्य समझते हैं, किन्तु उनका वह ज्ञान भ्रामक ही कहा जायेगा. इसी प्रकार जो परमात्मा नहीं हैं, उसे ही परमात्मा जानकर जो लोग उसे परमात्माके नामसे सम्बोधन करते यां सेवा करते हैं, वे उसी प्रकार वास्तविक फलसे वंचित रह जाते हैं.

पूर्णब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत उत्तमपुरुष हैं. वे सच्चिदानन्द हैं. सत् चिद् और आनन्द इन तीनों अंगोंमे अक्षरब्रह्म सद्अंग कहलाते हैं जो समस्त विश्वकी रचना करते हैं. उन अक्षरसे ही नारायण आदि देव तथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि उत्पन्न होते हैं. अल्पज्ञ इन देवी देवताओंको ही पूर्णब्रह्म मानने लगते हैं. क्योंकि –

सो तेता ही बोलिया, जो गया जहांलों चल ।

जिसकी पहुंच जहां तक हो सकी उसने वहीं तकका वर्णन किया और उसीको परमात्मा मानकर पूजा करना प्रारम्भ कर दी. इसलिए वास्तविक फलसे लोग आज तक वंचित ही रह गए. परमात्माके वास्तविक स्वरूपको जानकर की गई उपासना ही अभीष्ट फलको प्रदान करती है.

छत्रसालजी – प्रभो ! संसारमें सैकडों धर्म प्रचलित हैं और उनका उद्देश्य एक होने पर भी साधनोंमें भिन्नता क्यों है ? क्या उनके लक्ष्य ही भिन्न है ? या वे साधक ही लक्ष्य पहचाननेमें असमर्थ हैं ?

स्वामीजी – छत्रसाल ! दुनियांमें जो सैकडों धर्म, मजहब या मतमतान्तर प्रचलित हैं, उन सबका समावेश हिन्दू, यदूही, पारसी, ईसाई और इस्लाम इन धर्मोंमें ही होता है. सभी सम्प्रदाय, संस्था, धर्म–मजहब, मत, पन्थ, दीन आदि इन धर्मोंके ही अन्तर्गत हैं. सब धर्मोंका उद्देश्य एक ही जैसा है. इनमें थोडा ही मतभेद है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

विचार करने पर अन्य देशवासियोंमें और भारतीय साम्प्रदायिक सिद्धांतोंमें कोई खास अन्तर नहीं मालुम होता है. वेदका विद्युत पुरुष, पुराणोंका ज्योतिर्लिंग, मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्रोंका सुवर्णमय अंड, मुसलमानोंका खुदाईनूर, क्रिश्चियनोंका उजाला सब एक ही पदार्थके भिन्न–भिन्न नामान्तर हैं. शास्त्र, कुरान और महात्माओंकी वाणीका सिद्धान्त भी एक ही है.

कुरानके **सूरे अन्तरमें** खुदाकी कुदरत और उसकी स्तुतिको पढने पर ऋग्वेदकी ऋचायें याद आने लगती हैं. कुरानमें ईश्वरका सबसे बडा नाम अल्लाह है. ऋग्वेदमें ईश्वरके नामोंमेंसे एक नाम ईला भी है, जिसका अर्थ स्तुति करना होता है. ऋग्वेदका पूरा एक सूक्त ईला नाम पर है. कुरानका रब्ब ऋग्वेदकी सारी दुनियाको पालन करने वाला है. कुरानकी सबसे शुरूकी दुआ **एह देन स्सेरातल मुस्तकीम** याने हमें सीधे रास्ते पर ले चल है. और ऋग्वेदका **अग्नेनय सुपथा** उसी अर्थको प्रकट करता है. वेदोंका **एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म** और कुरानका **वहद हू लाशरीकलहू** एक ही अर्थ रखते हैं. कुरानका **ला इलाह इल्लिल्लाह** और **जेन्द अवेस्तांका नेस्त ऐजिद मगर यजदान** एक दूसरेका तरजुमा है. जिस प्रकार गीतामें सब काम ईश्वरार्पण करनेका विधान है, उसी प्रकार कुरानमें **फीसिविलिल्लाह** यानी अल्लाहके लिए करनेका हुक्म है. गीतामें जिस तरह ईश्वरको **ज्योतिषामपि तज्ज्योतिः** और **प्रभास्मि शशिसूर्ययोः** कहा गया है उसी प्रकार कुरानमें अल्लाहको बार–बार **नुरून अलानूर** यानी रोशनी पर रोशनी और **नूरस्समा बाते वल अर्ज** यानी आसमानों और जमीनकी रोशनी कहा गया है. जिस तरह गीतामें ईश्वरको **विश्वतो मुखम्** लिखा है, उसी प्रकार

Shri Prannath Ji Pustkalay

कुरानमें **फ एनमा तबल्लू फसम वज हुल्लाह** यानी जिधरको भी तुम मुड़ो उधर ही अल्लाहका मुंह है. ऐसा लिखा है. गीतामें ईश्वरको सत्य लिखा है. कुरानमें **अल्लाह बलहक्को** यानी अल्लाह सत्य है. ऐसा लिखा है. गीतामें बार–बार ईश्वरको अपने अन्दर देखनेका उपदेश है. इस पर एक मुस्लिम सूफी कहता है–

गाफिल तू किधर भटके है, कुछ दिल की खबर ले ।
शीशा जो बगल में है, उसीमें तो परी है ।।

गीतामें लिखा है कि– **यह सारा जगत मुझमें व्याप्त है और सब प्राणी मेरे ही अन्दर रहते हैं.** और कुरानमें लिखा है कि – **"वल्लाहो वेल्लेश अइम्मुहीत"** यानी अल्लाह हर चीजको घेरे हुए हैं. इस पर मुसलमान सूफी कहता है –

कावेमें कलीसामें हमने तो जहां देखा ।
ए कस्त्रे वफा तेरी तामीर नजर आई ।।

गीताकी आज्ञा है –

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोसि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ।।

हे अर्जुन ! जो करते हो, जो खाते हो, जो हवन करते हो, जो देते हो और जो तप करते हो सब मुझको ही अर्पण कर दो. कुरानमें लिखा है –

"कुल इन्ना सलाती व नुसोकी व मेहयाया व ममातिलिल्ला हे रब्बिल आलमीन" यानी कहो कि मेरी नमाज, मेरी पूजा, मेरी जिन्दगी और मेरी मौत सब अल्लाहके लिए जो सब दुनियांको पालने वाला है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

गीतामें लिखा है जो मेरी भक्ति करते हैं वे मुझमें रहते हैं और मैं उनमें रहता हूं. सूफी कहता है –

ऊदर दिले मनस्त व दिले मनबदस्तेऊ ।
चू आइना वदस्ते मनो मन दर आइना ।।

यानी वह मेरे दिलमें है और मेरा दिल उसके हाथमें है, जिस तरह शीशा मेरे हाथमें है और मैं शीशोंमें हूं. गीतामें लिखा है –

मैं सब प्राणियोंका आदि मध्य और अंत हूं. कुरान कहता है– **"हो वल अव्वल वल आखिर वल जाहिर वल बातिन"** यानी वही शुरु है. अव्वल है, वही आखिर है, वही जाहिर है और वही छिपा हुआ है. गीतामें भी लिखा है कि–

न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत् प्राप्यचाप्रियम् ।।

अर्थात् प्रिय वस्तुके मिलने पर प्रसन्न न हो जाओ और अप्रिय वस्तुके मिलने पर दुःख मत करो. कुरानमें लिखा है कि – जो तुम्हें नहीं मिले उस पर रंज मत करो और जो तुम्हें मिलता है उस पर फूलो मत. अल्लाह घमंड करने वाले और डींग मारने वालेको प्यार नहीं करता. कबीरदासजी भी लिखते हैं कि –

दुई जगदीस कहां ते आये, कहु कौने भरमाया ।
अल्ला राम करीम केसव हरि, हजरत नाम धराया ।।
गहना एक कनक ते गहना, तामे भाव न दूजा ।
कहन सुनन का दुई कर व्यापै, इक नेवाज इक पूजा ।।
वही महादेव वही मुहम्मद, ब्रह्म आदम कहिए ।
कोई हिन्दू कोई तुरुक कहावैं, एक जमी पर रहिए ।।
वेद किताब पढे वे कुतवा, वे मौलाना वे पांडे ।
विगत विगत के नाम धरायो, एक माटी के भांडे ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

कहै कबीर वे दोनों भूले, रामहि किनहूं न पाया ।
वे सखिया वे गाय कटावैं, वादे जनम गवाया ।।

और भी

हिन्दू तुरुक की एक राह है, सतगुरु इहै बताई ।
कहै कबीर सुनो हो सन्तो, राम न कहेउ खोदाई ।।

नानकदेवजीने भी लिखा है कि –

जुज महि जोल छली चन्द्रावल, कान कृष्ण यादव भया ।
पार जात गोपी ले आया, वृन्दावन मांही रंग किया ।।
कलि महि वेद अथर्वण हुआ, नाम खुदाई अलह भया ।।

इस प्रकार शास्त्रों, वेदों, पुराणों, भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों और महात्माओंके सिद्धान्त एक जैसे ही हैं, किन्तु सभी सम्प्रदायवादी चतुर्दश भुवनके अन्दर निवास करने वाले देवताओंको ही परमात्मा मानकर उपासना करते हैं, परमात्माके स्वरूपका बोध कराने वाली जो अन्वर्थक संज्ञायें हैं उनको इन्हीं देवताओंमें अध्यारोपित कर लेते हैं, किन्तु वे देवता चतुर्दशभुवनके साथ अन्तमें नाशको प्राप्त हो जाते हैं. इसलिये इन देवताओंके उपासकोंको अखंड मुक्ति नहीं प्राप्त होती. हां, तपोलोक और सत्यलोकमें जानेवाले महात्मा चिरकाल तक उन लोकोंके सुख भोगते हैं, फिर भी उनको आवागमनके चक्रमें पड़ना ही पड़ता है. इसलिये श्रीकृष्णने गीतामें कहा है –

येऽप्यन्य देवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ।।

हे अर्जुन ! जो अन्य देवताओंके भक्त श्रद्धापूर्वक अन्य देवताओंकी पूजा करते हैं, वे भी मेरी ही पूजा हैं किन्तु उनकी की

Shri Prannath Ji Pustkalay

हुई पूजा विधिपूर्वक नहीं होती है. इसलिए परमात्माको जानकर जो पूजा की जाती है, वही पूजा विधिपूर्वक कही जा सकती है. और परमात्माकी की हुई पूजा ही अखंड मुक्ति प्रदान करती है.

इतना सुनाकर महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने कहा कि छत्रसाल ! मेरे इस कथनसे तुमको ज्ञात हो गया होगा कि संसारके लोग भ्रममें पडे हुए हैं और उनका भ्रमात्मक ज्ञान ही उनको संसारसे पर परमात्माकी जानकारी प्राप्त करने नहीं देता. यद्यपि शास्त्र, वेद, पुराणोंमें श्री कृष्ण नामका ही महत्त्व सबसे अधिक बताया है और श्री कृष्ण नामसे संसारका मानव समाज परिचित भी है किन्तु श्री कृष्ण तत्त्वके ज्ञाता संसारमें बहुत कम लोग हैं. इसलिये मैं तुम्हारे सामने श्री कृष्ण नामके माहात्म्यको और उनके स्वरूप रहस्यका वर्णन करता हूं. ध्यान पूर्वक सुनो. श्री कृष्णके रहस्यको जानकर भक्ति करनेसे ही आत्मा सदाके लिए संसार बंधनसे छूट सकती है. इसलिए लिखा है – **कलौ केशव कीर्तनात् – कलौ तु केवला भक्ति ब्रह्मसायुज्यकारिणी** और नामोंके महत्त्वको छोडकर केवल कृष्णनामसे ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है वेद व्यासजीने लिखा है –

मधुर–मधुर गीतं मंगलं मंगलानां
सकलनिगमवल्ली सत्फलं चिद्स्वरूपम् ।।
सकृदपि परिगीतं श्रद्धया हेलया वा
भृगुवर ! नवमात्रं तारयेत् कृष्णनाम ।।

सब मंगलोंका मंगलरूप, सम्पूर्ण वेद–शास्त्रोंका सत्यफल, चिद्घन स्वरूप श्री कृष्ण परमात्माका नाम एक बार भी श्रद्धासे अथवा किसी प्रकार मुखसे निकला हो तो वह मनुष्य मात्रको

Shri Prannath Ji Pustkalay

भवसागरसे पार कर मुक्ति प्रदान कर देता है . क्योंकि–

यस्मिन् सर्वाणि तेजांसि विलीयन्ते स्वतेजसि ।
तं वदन्ति परे साक्षात् परिपूर्णतमं स्वयम् ।।
परिपूर्णतमः साक्षात् श्रीकृष्णो नान्य एव हि ।। (गर्ग संहिता)

जिसके स्वरूपमें सब तेज राशियोंका तेज सम्मिलित हो जाता है, उसीको साक्षात् परिपूर्णतम ब्रह्म कहते हैं. श्री कृष्ण ही साक्षात् परिपूर्णतम ब्रह्म हैं. दूसरा कोई नहीं है. इसी लिए गर्ग मुनि यशोदाजीसे कहते हैं कि –

पूर्णब्रह्मस्वरूपोऽयं शिशुस्ते मायया महीम् ।
आगत्य भारहरणं कर्ता धात्रा च सेवितः ।।
गोलोकनाथो भगवान् श्री कृष्णो राधिकापतिः ।
नारायणो यो वैकुंठे कमलाकान्त एव च ।।
श्वेतद्वीपनिवासी य पिता विष्णुश्च सोप्यजः ।
कपिलोऽन्ये तदंशाश्च नरनारायणावृषि ।।
सर्वेषां तेजसां राशिः मूर्तिमानागतः किमु ।।

(ब्रह्म वै.कृ.खं. अ. १३.४८–५०)

हे यशोदे ! यह तुम्हारा पुत्र पूर्णब्रह्म परमात्माका स्वरूप है. सृष्टि कर्ता ब्रह्मा आदिसे सेवित यह पृथ्वीका भार हरण करनेके लिए आये हैं. इनके ही स्वरूपमें गोलोकवासी राधाकृष्ण, लक्ष्मीपति नारायण, श्वेतद्वीप निवासी विष्णु भगवान् कपिल और दूसरे अवतार तथा नर–नारायण ऋषियों आदिका समावेश है. सबको प्रकाश देने वाले और सबके मालिक यही है. इसिलिए ब्रह्मवैवर्त पुराणके प्रकृति खंडमें यमराजने पृथ्वीसे कहा है कि–

Shri Prannath Ji Pustkalay

वत्से चतुर्षु वेदेषु धर्मो वै संहितासु च ।
पुराणेष्वेतिहासेषु पंचरात्रादिकेषु च ।।
अन्येषु सर्वशास्त्रेषु वेदांगेषु च सुव्रते ।
सर्वेष्टं सारभूतं च मंगलं कृष्णसेवनम् ।। (२.३१, ९.१०)

हे पुत्री ! चारों वेदोंमें, धर्मग्रन्थोंमें, संहिताओंमें, पुराणोंमें, पंचरात्र आदि ग्रन्थोंमें और दूसरे शास्त्रोंमें जो कुछ भी लिखा है, उन सबका सारभूत और सबका इष्ट एवं मंगल कारक श्री कृष्णकी ही सेवा है. आगे उसी खंडमें लिखा है कि – सात सागरों सहित सात द्वीप पृथ्वी और उनके नीचे सात पाताल एवं सात स्वर्ग इस प्रकारके बहुतसे ब्रह्मांड ब्रह्माने बनाये हैं और प्रत्येक ब्रह्मांडमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि पृथक–पृथक हैं, किन्तु सबके परमात्मा श्रीकृष्ण ही हैं. यही ज्ञान सर्वोत्तम ज्ञान है. श्री कृष्णकी भक्तिसे जो मनुष्य हीन है, वह जीता हुआ भी मरे हुए के समान है. उसी पुराणके कृष्ण खंडमें पृथ्वीने कहा है कि जो मनुष्य कृष्ण भक्तिसे रहित है और जो कृष्ण भक्तोंकी निन्दा करता है ऐसे महापापियोंका भार ढोनेमें मैं असमर्थ हूं. गर्गाचार्यजीने भी लिखा है –

जिह्वां लब्ध्वापि यः कृष्णं कीर्तनीयं न कीर्तयेत् ।
लब्ध्वापि मोक्षनिश्रेणी स नारोहति दुर्मतिः ।।

जीभको प्राप्त करके भी जो कृष्ण परमात्माका नाम नहीं लेता है, वह मूढ मोक्षकी सीढ़ी प्राप्त करके भी उस पर चढ़ नहीं सकता है. इसलिए –

ब्रह्माण्डानां चैव सर्वेषामीश्वरश्चैक एव सः ।
सर्वेषां परमात्मा च श्रीकृष्णः प्रकृतेः परः ।। (ब्रह्म वै.)

सब ब्रह्मांण्डोंके ईश्वर प्रकृतिसे पर परमात्मा श्री कृष्ण ही हैं.

Shri Prannath Ji Pustkalay

जो श्रीकृष्णके दास हो जाते हैं, वे नरकके कुंड, यमराज और उनके दूतोंको स्वप्नमें भी नहीं देखते हैं.

महति प्रलये पातः सर्वेषां वै सुनिश्चितम् ।
न पातः कृष्णभक्तानां साधूनामविनाशिनाम् ।। (ब्रह्म.वै. ३.६.७९)

महाप्रलयमें सबका नाश अवश्यम्भावी है, किन्तु कृष्णभक्तोंका नाश कभी नहीं होता.

सकृदुच्चरितं येन कृष्ण इत्यक्षरद्वयम् ।
बद्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति ।। (गर्गसंहिता)

एक बार भी जिसने कृष्ण इन दो अक्षरोंका उच्चारण कर लिया है. उसकी मुक्तिमें कोई सन्देह नहीं रह जाता है. इस प्रकार जहां भी देखो सब जगह कृष्ण नामका ही महात्म्य लिखा है. इसलिए सब नामोंसे बडा श्रीकृष्ण यही नाम है. किन्तु कृष्ण यह नाम महत्त्वशाली होने पर भी कृष्ण स्वरूपमें अन्तर है. जो कृष्णके स्वरूपको जानकर कृष्ण नामका जाप करता है मुक्ति उसीको मिलती है. कृष्ण स्वरूपका रहस्य बडा ही गूढ है. सर्व साधारणके समझमें जल्दी नहीं आता फिर भी तुम योग्य अधिकारी हो इसलिए मैं तुमसे कहता हूं. मनको एकाग्र करके सुनो.

कृष्ण कृष्ण सब ही कहें, पर भेद न जाने कोय ।
नाम एक विध है सही, पर लीला तीन विध होय ।।
एक भेद वैकुंठका, दूजा है गोलोक ।
तीसरा धाम अखंड का, कहत पुराण विवेक ।।

वैकुंठवासी विष्णु भगवान् गौलोक वासी राधापति और परमधामवासी पूर्णब्रह्म परमात्मा इन तीनों स्वरूपोंको कृष्णनामसे

Shri Prannath Ji Pustkalay

पुकारा जाता है. गर्गसंहितामें ऐसी कथा आती है कि एक बार पृथ्वीने विष्णु भगवानके पास जाकर कहा कि प्रभो ! अब मेरे ऊपर पापका भार अधिक हो चुका है, अतः आप अवतार लेकर मुझे पापके भारसे मुक्त कीजिये. भगवानने कहा पृथ्वी ! इस समय तुम्हारे कष्टको निवारण करनेमें मैं असमर्थ हूं. अब तो गोलोकवासी श्री कृष्णजी आवें तो ही तुम्हारा भार हल्का हो सकता है. पृथ्वीने कहा कि महाराज ! मैं तो आपके अतिरिक्त दूसरे किसीको जानती नहीं. अतः आपसे ही प्रार्थना कर रही हूं. आप गोलोकवासी कृष्णको जानते हैं. आप ही कृपा कर उनको ले आइए. पृथ्वीके इस प्रकार प्रार्थना करने पर ब्रह्मा, विष्णु, महादेव तीनों देवता अपना सूक्ष्म शरीर बनाकर ब्रह्मांडके ऊपर गोलोकके दरवाजे पर पहुंचे. वहां द्वारपालिकाओंने पूछा कि आप कौन हैं ? विष्णु भगवानने कहा कि हम ब्रह्मा, विष्णु, महेश ब्रह्मांडके अधिपति हैं. उन्होंने फिर पूछा कि ब्रह्मांड तो करोडों हैं और ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी करोडों हैं. आप लोग किस ब्रह्मांडके रहने वाले हैं. विष्णु भगवानने बतलाया कि जिस ब्रह्मांडमें वामन, नरसिंह, परशुराम आदि अवतार होते हैं, हम वहींके रहने वाले हैं. द्वारपालिकाओंकी आज्ञासे तीनों देवता अन्दर गये और जाकर देखा कि –

द्विभुजं मुरलीहस्तं रत्नभूषणभूषितम् ।
सर्वाधारं च सर्वेशं सर्वशक्तियुतं विभुम् ।। (ब्रह्म वै. २.२.२१)

रत्नमय भूषणोंसे शोभायमान दो भुजा स्वरूप, मुरली हाथमें धारण किये हुए, सर्वशक्ति सम्पन्न सर्वेश श्री कृष्णजी विराजमान हैं. उस तेजोमय स्वरूपको देखकर तीनों देवताओंने साष्टांग प्रणाम किया और प्रार्थना की कि आप मृत्युलोकमें पृथ्वीके कष्टको दूर

Shri Prannath Ji Pustkalay

करनेकी कृपा कीजिए. श्रीकृष्णजीने कहा कि मैं द्वापरके अन्तमें आऊंगा आप निश्चिन्त हो जाइये.

श्रीकृष्णजीका मृत्युलोकमें आना सुनकर राधाजीने कहा कि प्रभो ! आपके साथ मृत्युलोकमें मैं और गौलोकके गोवर्धनपर्वत, जमुनानदी, गोपी, ग्वाल, गौवें इत्यादि सब चलेंगी. श्री कृष्णने राधिकाजीकी प्रार्थना स्वीकार कर कहा कि ऐसा ही होगा. बल्कि इतना ही नहीं, किन्तु परमधामवासी पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णजीका अंश (आवेश) हमारे अन्दर आवेगा और उन सच्चिदानंद परमात्माकी दिव्य शक्ति श्यामाजीका अंश तुम्हारे अन्दर आवेगा.

स्वामिनी वासना नित्या प्रभविष्यति त्वद् हृदि ।
तदंशभूतं मद्रूपं कृष्णः संपूरयिष्यति ।।

(सनत्कुमार संहिता)

गोलोकवासी श्रीकृष्णजीके मुखारविन्दसे स्वीकृति प्राप्त कर ब्रह्मा, विष्णु और महादेव अपने स्थान पर आ गये और पृथ्वीको सान्त्वना देकर विदा किया. कंस भी गोलोकका रहने वाला श्रीदामा नामका द्वारपाल था जो राधिकाजीके शापसे राक्षस हो गया था. उसको मारनेकी शक्ति भी गोलोक वासी श्रीकृष्णमें ही थी. दूसरा कोई उसको मारनेमें समर्थ नहीं था. अतः गोलोकवासी कृष्णका आना आवश्यक था.

वसुदेव और देवकीने अपने पूर्व जन्ममें तपस्या कर विष्णु भगवानसे यह वरदान मांगा था कि आप पुत्र रूपसे मेरे यहां अवतरित हों. इसीलिए मथुराके कारावासमें पडे हुए देवकीके सम्मुख विष्णु भगवान शंख, चक्र, गदा, पद्म और कुंडल, पीताम्बर आदि अलंकारोंसे विभूषित होकर प्रकट हुए थे. भगवानके उस

Shri Prannath Ji Pustkalay

तेजस्वी रूपको देखकर देवकीने प्रार्थना की कि आप अपने इस रूपका संवरण कर लीजिए अन्यथा कंसके साथ अभी आपका युद्ध प्रारंभ हो जायेगा. देवकीकी प्रार्थना सुनकर भगवानने कहा कि तुमको दिया हुआ वरदान पूर्ण हो चुका. अब मैं अपने इस रूपको अन्तर्हित कर लेता हूं. अब तुम्हारे सामने दो भुजाके स्वरूप श्रीकृष्णजी प्रकट होंगे, उनको व्रजमंडलमें नन्दजीके घर पहुंचा देना. इस प्रकार विष्णु भगवानने अपने दिये वरदानको पूर्ण कर अपने स्वरूपको तिरोहित कर लिया और उसी स्थान पर दो भुजाके स्वरूप गोलोकवासी श्रीकृष्णजी प्रकट हो गये. इनको वसुदेवजीने नन्दके घर पहुंचा दिया. इसी बातको पुष्ट करता हुआ ऋग्वेद (४.७.१..९. में) लिखा है कि–

यदप्रवीता दधतेह गर्भं सद्यचिज्जातो भवसीदुदूतः ।

अर्थात् हे भगवान ! आपको (अप्रवीता) निगड बन्धनमें बद्ध श्री देवकीजीने गर्भमें धारण किया और आप अवतरित होते ही मातासे पृथक् हो गए.

इन्हीं गोलोकवासी कृष्णजीके अन्दर परमधामवासी पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णजीकी शक्तिने प्रवेश किया. जिस शक्तिके साथ गोलोकवासी श्रीकृष्णजीने ११ वर्ष और बावन दिन तक व्रज लीला की. इसी बातको शुकदेवजीने लिखा है कि –

एकादशसमास्तत्र गूढार्चिः सबलोऽवसत् ।।

इन्हीं गोलोकवासी श्रीकृष्णका ध्यान ब्रह्मा, विष्णु और महादेव आदि देवता भी करते हैं.

विष्णुश्चरत्यसावुग्रं तपो वर्षाण्यनेकशः ।
ब्रह्मा हरस्त्रयो देवा ध्यायन्तः कमपिध्रुवम् ।। (देवीभागवत)

Shri Prannath Ji Pustkalay

छत्रसाल – महाराज ! पूर्णब्रह्म परमात्माकी शक्तिके आनेका क्या कारण था ?

स्वामीजी – पूर्णब्रह्म परमात्माकी शक्तिके आनेका यह कारण था कि सृष्टि रचयिता अक्षरब्रह्म प्रतिदिन परमधामके प्रधान प्रवेश द्वार के सम्मुख जाकर परमात्माके दर्शन करते हैं किन्तु उनके हृदयमें यह लालसा रहती थी कि परमात्माकी लीला कैसी होती है, देखनी चाहिए.

कूटस्थ एव तद्धाम्नि कृष्णदर्शनलालसः ।
नित्यं प्रयाति परमः प्रेमपूरितमानसः ।।
नित्यं प्रयाति कूटस्थस्तल्लीलादर्शनोत्सुकः ।
कृष्णक्रीडा गृहाद् दूरे वर्तमानः कृतांजलिः ।। (पु.सं.)

दूसरी बात यह है कि पूर्णब्रह्म परमात्माकी आनन्दरूपा जो शक्तियां परमधाममें निवास करती हैं उनके हृदयमें भी यह उत्कंठा थी कि अक्षर ब्रह्मसे रचित माया जन्य खेलको हम भी देखें.

अक्षरात्मा तु भगवान् या लीला सृजते प्रभो ।
अस्माभिर्नानुभूतास्ता कीदृशी किं विधा इति ।।
तद्दिदृक्षितचित्तानां कामो नः प्रतिवाधते ।
कारयानुभवं तस्याः कारूण्येन कृपानिधे ।। (पु.सं.)

परमधाममें निवास करने वाली आनंदरूपा ब्रह्मसृष्टियोंने प्रार्थना की कि प्रभो ! अक्षरब्रह्मसे बने हुए खेलको देखनेकी हमारी प्रबल इच्छा है, कृपा कर उसका अनुभव हमें कराइये. इसलिए गोलोकसे आने वाली गोपियोंकी आत्माओं पर ब्रह्मसृष्टियोंकी आत्माओंको स्थापित कर दिया और श्रीराजजी अक्षरब्रह्मकी आत्माके साथ

Shri Prannath Ji Pustkalay

अपनी आवेश शक्ति सहित गोलोक वासी कृष्णकी आत्मा पर विराजमान हुए.

छत्रसाल – प्रभो ! कृष्णजीने जो राक्षसोंका वध किया था, वह भी क्या पूर्णब्रह्म परमात्माके ही हाथों हुआ ? क्योंकि संसारके रक्षकके रूपमें तो विष्णु भगवान नियुक्त हैं.

स्वामीजी – छत्रसाल ! तुम ठीक कहते हो. राक्षसोंके वध करनेवाले पूर्णब्रह्म परमात्मा नहीं थे अपितु विष्णु भगवान थे. जब गोलोकवासी श्री कृष्ण परमधामवासी श्रीकृष्णका आवेश लेकर संसारमें उतरे तब भगवान विष्णु भी उनके साथ ही आए. अतः शरीर एक होते हुए भी शक्ति तीनोंकी काम करती थी. भगवान विष्णुके साथ चार व्यूह निवास करते थे. भागवतमें लिखा है कि–

वासुदेवः संकर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयम् ।
अनिरुद्ध इति ब्रह्मन् मूर्तिव्यूहोऽभिधीयते ।। (१२.११.२१)

वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चार व्यूह सदा श्रीकृष्णजीके साथ निवास करते थे. इनमें संकर्षण नामकी शक्ति राक्षसोंका वध करती थी. क्योंकि संकर्षणजी ही संसारका कार्य सिद्ध करते हैं. कंस आदिके वध गोलोकवासी श्रीकृष्ण करते हैं एवं जो भी प्रेममयी लीला है वह सब परमधामवासी पूर्णब्रह्मकी ही है. ग्यारह वर्ष और बावन दिन तक व्रजमण्डलमें अनेकों लीलायें कर श्रीकृष्णजीने ब्रजवासियोंको आनन्दित किया. उसके बाद योगमाया शक्ति द्वारा नये मण्डल (वृन्दावन) की रचना कराकर उसमें महारास लीला की.

भगवानपि ताः रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः ।
वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः । (भाग. १०.२९.१)

Shri Prannath Ji Pustkalay

शरद् पूर्णिमाकी रात्रिको पुष्प विशेषोंसे विकसित देखकर श्रीकृष्णने योगमायामय नया वृन्दावन तैयार कर रासलीला रमण करनेकी इच्छासे वंशी बजाकर गोपियोंको बुलाया. और इस संसारकी अनन्त रात्रियों तक रासलीला की. जिसका वर्णन भागवतमें विस्तार पूर्वक शुकदेवजीने किया है. रासलीला सच्चिदानन्द परमात्माकी आनन्दमयी लीला ही थी. परमात्मा आनन्द रूप है अतः उसकी लीला भी तदाकार ही थी.

तस्माल्लीला रसमयी रसो लीलामयः स्मृतः ।
तादात्म्यादेकरूपत्वाल्लीला ब्रह्ममय्यभवत् ।।

रसो वै सः, ब्रह्म वै रसः इत्यादि श्रुतियां ब्रह्मको रस रूप वर्णन करती हैं. अतः उसकी लीला भी रस रूप होनेके कारण ब्रह्म रूप ही थी. रासलीलाके बाद परमधामसे आने वाली ब्रह्मसृष्टियोंकी आत्मा पूर्णब्रह्म परमात्माका आवेश और अक्षर ब्रह्मकी आत्मा अपने स्थानमें चली गई और योगमायाने अपनेसे विस्तारित वृन्दावन मण्डलको अन्तर्लीन कर लिया.

उसके बाद सात दिन तक गोलोकवासी कृष्णजीने ही गोकुलमें पूर्ववत् लीला की. आठवें रोज अक्रूरजीके साथ मथुरामें जाकर चार दिनके अन्दर धनुष तोड़ना, कुवलयापीड हाथीको मारना, चाणूर और मुष्टिकका संहार कर कंसको नष्ट करना, वसुदेव और देवकीको कारागृहसे मुक्त कर उग्रसेनको राजतिलक करने आदि कार्यको सम्पन्न किया. उसके बाद गोलोकीय शक्ति भी कृष्णजीके शरीरसे निकल कर व्रजमण्डलमें निवास करने वाली गोपियोंकी आत्मामें प्रविष्ट हो गई.

अब कृष्णजीमें केवल विष्णुका ही स्वरूप बाकी रहा. इसलिए

Shri Prannath Ji Pustkalay

जरासन्धके मथुरा घेरने पर –

चिन्तयामास भगवान् हरि कारणमानुषः ।
तद्देशकालानुगुणं स्वावतारप्रयोजनम् ।। (भागवत १०.५०.६)

देश, कालको देखकर मनुष्यावतार स्वरूप उनको चिन्ता करनी पडी चिन्ताके साथ ही वैकुण्ठसे शंक, चक्र, गदा, पद्म आदि शस्त्र और रथ आया और श्रीकृष्ण सोलह कला सम्पूर्ण विष्णु रूप हो गये. उस समय वैकुण्ठमें विष्णु भगवान नहीं थे. क्योंकि शिशुपालकी आत्मा वैकुण्ठ जाकर भी वापस आई और श्रीकृष्णमें ही मिली. वैकुण्ठ गमन पर्यन्त विष्णु भगवानके रूपमें ही महाभारत आदि युद्ध और द्वारकाका राज्य किया. इसीलिए भागवतमें लिखा है कि –

एते चांशकलाप्रोक्तः कृष्णस्तु भगवान्स्वयम् ।

कृष्णावतारके पूर्व विष्णु भगवानके जितने भी अवतार हुए वे सब अंश और कला अवतार थे, कृष्णावतार तो विष्णु भगवानका पूर्ण स्वरूप था.

छत्रसाल ! इससे यह सिद्ध हो गया कि देवकीके गर्भसे जन्म लेनेवाले कृष्ण और जरासन्धके साथ युद्धके प्रारम्भसे वैकुण्ठ गमन पर्यन्त जो कृष्णजी थे वे विष्णु भगवान थे. जिस कृष्णको वसुदेवजी मथुरासे व्रजमण्डलमें ले आये वे कृष्ण और जिसने मथुरामें जाकर कंस आदिका वध किया, वे कृष्ण गोलोकवासी थे एवं जिस कृष्णने व्रज और रासमें लीलाकी वे कृष्ण पूर्णब्रह्म परमात्माकी आवेश शक्तिसे सम्पन्न थे. इसलिए सनत्कुमार संहितामें लिखा है कि –

Shri Prannath Ji Pustkalay

कंसं जघान वासुदेवः श्रीकृष्णो नन्दसूर्न तु ।
द्वारिकायां ययौ विष्णुः कृष्णांशाद्यो जगत्प्रभुः ।।

कंसको मारने वाले वासुदेव थे, नन्दपुत्र कृष्ण नहीं थे. और द्वारिकामें जाने वाले विष्णु भगवान् थे. क्योंकि रासलीला अखण्ड होने के कारण पूर्णब्रह्म परमात्मा तो –

वृन्दावनं परित्यज्य पादमेकं न गच्छति । (गर्गसंहिता)

वृन्दावनको छोडकर एक पग भी कहीं नहीं जाते हैं. इसलिए जब उद्धवजी गोपियोंके पास कृष्णजीका सन्देश ले आए थे तो गोपियोंने कहा था कि –

पढ़ि श्याम की पाती, हमें परतीत अब ऐसी परी ।
वे नन्द के नन्दन नहीं, हम झूठ ही उन पर मरी ।।
हो मस्त कुब्जा रंग में, नहीं जानते व्रज गाथा हैं ।
सच है कि गोपीनाथ नहीं, वे मधुपुरी के नाथ हैं ।।

पद्माकर कविने भी उद्धवके प्रति गोपियोंके उत्तरको इसी रूपमें वर्णन किया है –

प्राणन के प्यारे तनु तापके हरण हारे,
नन्द के दुलारे व्रजवारे उमहत हैं ।
कहैं पद्माकर उरझे उर अन्तर यों अन्तर,
चहेहू जोने अन्तर चहत हैं ।
नैननि बसे है अंग अंग हुलसे हैं,
रोम रोम निरसे हैं निकसे हैं को कहत है ।
ऊधो वे गोविन्द मथुरा में कोऊ और,
मेरो तो गोविन्द मोंहि मोहिं में रहत हैं ।

Shri Prannath Ji Pustkalay

स्वामी प्रेमानन्द भारतीने भी न्यूयोर्कमें बैठकर अपने श्रीकृष्ण नामक ग्रन्थमें लिखा है कि –

This, all love-Krishna, was the Krishna of Brindaban. Also called Brij, the land, where he played and roamed, where he went through his earthly career upto the age of eleven, when he left Brindaban for Mathura. The Krishna of Brindaban, in the fullest manifestation of the Krishna, the fullest representation of his all love-self, hence the Krishna of Brindaban is called the fullest incarnation, which means, all Krishna, the Krishna of love the Krishna of Mathura is called fuller Krishna, which means three quarter the Krishna and one quarter Vishnu In the Krishna of Dwarka half Krishna and half Vishnu is called full Incarnation of Krishna.

इसी बातकी पुष्टी पुराण संहिता में भी मिलती है –

यद्ब्रह्म परमैश्वर्यं नित्यवृन्दावनाश्रयम् ।
तदेव गोकुले प्रोक्तं बाल्यकैशोरभेदवत् ।।
वैकुंठवैभवं यच्च मथुराद्वारिकाश्रितम् ।
एवं गुह्यतरः प्रोक्तः कृष्णलीला रसस्त्रिधा ।।

नित्य वृन्दावनमें निवास करने वाले परब्रह्म परमात्माने गोकुल (व्रजमंडल) में बाल और किशोर स्वरूपकी लीला की थी. मथुरा और द्वारिकामें वैकुंठका वैभव था. इस प्रकार श्रीकृष्णके स्वरूपमें और उनकी लीलामें तीन भेद हैं. व्रज और रासमें लीला करने वाले पूर्णब्रह्म परमात्मा परमधामवासी श्रीकृष्णजी थे और वे ही प्रणामी धर्मकी जनताके इष्ट देव हैं. अखंड मुक्ति चाहने वाले भक्त जनोंका यह कर्तव्य है कि वे श्रीकृष्णके स्वरूपको समझकर ही भक्ति करें तभी मुक्ति प्राप्त हो सकती है.

श्रीकृष्ण स्वरूपके सम्बन्धमें महात्मा मुकुन्ददासजीके पदोंको

Shri Prannath Ji Pustkalay

पढ़ लेने पर सब शंकायें स्वतः निर्मूल हो जाती हैं. पद्य निम्न प्रकार हैं–

कृष्ण नहीं अवतारी साधो, कृष्ण नहीं अवतारी ।। टेक ।।
पूर्णब्रह्म सनतान दोय भुज, कहत है निगम पुकारी ।।
वेद पुराण शास्त्र सब भाषे, साधु सकल संसारी ।
पांच तत्त्व गुन तीन लोकतें, है मथुरा निज न्यारी ।।
लोक चतुर्दश हैं परलेवस, आदि अन्त ओंकारी ।
तब कहां कृष्ण कहां निज मथरा, देखो मन ही विचारी ।।
गोपी कृष्ण अनादि एक हैं, जल–तरंग ज्यों वारी ।
कारण मूल रच्यो एक कारज, आये भई व्रजनारी ।।
तिन गोपिन की पद रज इच्छत, ब्रह्मा विष्णु त्रिपुरारी ।
करि करि कोटि तपस्या बहुविध, त्रिगुण थके पचिहारी ।।
दश अवतार राजा होय वरते, विष्णु माया अनुसारी ।
राम आदि अवतार होत हैं, सो वैकुंठ विहारी ।।
जाय द्वारिका में राज कियो है, व्याही सोलें सहस्र कुमारी ।
सो सम्पूर्ण वैकुंठ के ठाकुर, शंख चक्र गदा धारी ।।
वेद ऋचा तलफत व्रज छोड़ी, विरह दाह में जारी ।
कृष्ण द्वारिका काहे न बुलाई, गोकुल गोप कुमारी ।।
लीला त्रिविध भई नाना विध, बाल तरुण वृध वारी ।
कहत मुकुन्द सतगुरु समरथ बिन, कोई न सके निरबारी ।।

व्रजमंडलसे चले जानेके बाद कृष्णजीने वंशी कभी नहीं बजाई और नहीं प्रेम सागरमें निमग्न गोपियों अथवा नन्द यशोदा आदिसे कभी मिलनेकी चेष्टा ही की. इससे यह सिद्ध होता है कि श्री कृष्ण स्वरूपमें मूलतः अन्तर था, अन्यथा ऐसा कभी न होता.

महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीके मुखारविन्दसे इस प्रकार

Shri Prannath Ji Pustkalay

श्रीकृष्ण तत्त्वका निर्णय सुनकर महाराजा छत्रसालका हृदय गद्‌गद् हो गया. महाराजा छत्रसालजीने प्रेमपूर्ण मनसे महाप्रभुके चरण कमलोंमें अपना मस्तक रखकर कहा कि –

प्राणनाथ के धर्ममें, जो कोई लावे ईमान ।
छत्रसाल तिन ऊपर तन मन धन कुरबान ।।

महाप्रभुने छत्रसालजीको हृदयसे लगाकर कहा कि वत्स ! और क्या सुनना चाहते हो, कहो !

छत्रसालजीने पूछा कि प्रभो ! भक्ति कितने प्रकारकी होती है, उनमें कौन–सी भक्ति श्रेष्ठ है और उसका स्वरूप क्या है ?

स्वामीजी – छत्रसाल ! भक्ति करनेके बहुतसे प्रकार महात्माओंने वर्णन किये हैं. उन सबका संक्षिप्त रूपसे वर्णन कर भक्तिका वास्तविक स्वरूप तुमको समझाऊंगा, प्रेमसे सुनो.

भक्ति शब्दका वास्तविक अर्थ है सेवा करना. क्योंकि संस्कृतमें **भज सेवायाम्** धातुसे भक्ति शब्दकी सिद्धि होती है. जिस किसीकी सेवा की जाती है वह सेवासे प्रसन्न हो जाता है. परमात्माको प्रसन्न करना ही जीवनका चरम लक्ष्य होना चाहिए. इसलिए महर्षियोंने परमात्माकी सेवा करनेमें ही भक्ति शब्दको रूढ कर दिया है. परमात्माको प्रसन्न करनेके लिए भी महात्माओंने अनेक मार्ग बतलाए हैं. जैसे–

(क) पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्यः ।
(ख) कथादिष्विति गर्गः ।
(ग) आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः ।
(घ) नारदस्तुतदर्पिताखिलाचारिता तद्विस्मरणे परम व्याकुलतेति ।

Shri Prannath Ji Pustkalay

(ङ) श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ।। (मनुस्मृति)

परमात्माकी पूजामें प्रेम हो जानेका नाम ही भक्ति है, ऐसा पराशरजी कहते हैं.

कथा श्रवणमें मन लग जाना ही भक्तिका रूप है ऐसा गर्ग ऋषि मानते हैं.

शाण्डिल्य ऋषिके मतमें परमात्माके साथ अभिन्न आत्मिक प्रेम ही भक्ति कहलाती है.

नारदजीका कथन है अपने सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मोंको परमात्माके चरणमें अर्पण कर उनके वियोगमें व्याकुलताका अनुभव करना ही भक्ति है.

मनुजीने श्रवण, कीर्तन, स्मरण, चरणसेवा, अर्चन, वन्दन, दासभाव, सखाभाव और आत्मनिवेदन इन नौ रूपोंमें भक्तिको विभक्त कर दिया है. इनमेसे किसी भी पथको अपना लेने पर मनुष्य परमात्माको प्राप्त कर सकता है, यह मनुजीका सिद्धान्त है.

कुछ महात्माओंने परमात्माके साथ अनन्य प्रेम स्थापित कर लेनेको ही भक्ति बतलाया है. इसको दशवीं भक्ति अर्थात् प्रेम लक्षणा भक्ति भी कहते हैं. इस प्रकारकी भक्ति सब प्रकारकी भक्तियोंमें श्रेष्ठ मानी गई है. श्रीकृष्णजी गीतामें इस प्रकारकी भक्तिका स्वरूप वर्णन करते हुए कहते हैं कि–

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः ।।

जो न किसी प्रिय वस्तुको प्राप्त कर प्रसन्न होता है, न किसीसे

Shri Prannath Ji Pustkalay

द्वेष करता है, न चिन्ता करता है और न किसी वस्तुकी इच्छा रखता है एवं जो शुभ अथवा अशुभसे पृथक् होकर मेरा भजन करता है, वह भक्त मुझे प्रिय है, महात्मा सुन्दरदासजीने भी लिखा है कि–

न लाज तीन लोक की, न वेद को कह्यो करै ।
न शंक भूत प्रेत की, न देव यक्ष ते डरै ।।
सुने न कान और की, दरसै न और इच्छना ।
कहै न बात और की, सुभक्ति प्रेम लच्छना ।।
चित्त वित्त प्रभुसों लग्यो, सावधान कैसे रहे ।
यह प्रेम लच्छना भक्ति है, शिष्य सुनो सुन्दर कहे ।।

इस प्रकार भक्तिके अनेकों मार्ग बतलाए गये हैं, किन्तु इन सबका समावेश दासभाव, वात्सल्य भाव, सखाभाव और माधुर्यभाव इन चार प्रकारकी भक्तियोंमें ही हो जाता है. लेकिन इन चारों प्रकारकी भक्तिमें भी माधुर्य भावकी भक्ति ही श्रेष्ठ है. क्योंकि दास भावकी भक्ति वह है दास (सेवक) अपने स्वामीके चरणोंमें अपना सर्वस्व अर्पण कर देना ही अपना कर्तव्य समझते हैं और अपना सर्वस्व अर्पण करके भी अपने लिए अपने स्वामीसे कुछ प्रार्थना नहीं कर सकते. दास भावके भक्तोंमें प्रधान हनुमानजी हुए हैं. उन्होंने भगवान रामकी बड़ी सेवा की, किन्तु वैकुंठ जाते समय भगवान राम हनुमानजीको अपने साथ नहीं ले गये. इतने बडे प्रधान भक्तको भी भगवानने अपने साथ ले जाना उचित नहीं समझा, यही दास भावकी भक्तिमें कमी है.

दूसरी भक्ति सखाभावकी है. श्रीकृष्णको सखाभावसे भजने वाले अर्जुन और उद्धव थे. उद्धव तो महान ज्ञानी भी थे और भगवानने उद्धवको ही योग्य अधिकारी समझकर अपना पूर्णज्ञान

Shri Prannath Ji Pustkalay

दिया था, फिर भी वैकुंठ जाते समय उद्धवसे कहा कि तुम दश हजार वर्ष तक बद्रीकाश्रममें तपस्या कर फिर मेरे लोकमें चले आना. जीवन पर्यन्त भगवानके साथ रहने वालोंको भी तपस्या करनेकी आवश्यकता रह गई. यही सखाभावकी भक्तिमें कमी है. वात्सल्य भावकी भक्ति वैसी ही होती है जैसे गौ अपने बच्चेके साथ प्रेम करती है. संसारके सब प्रेमियोंमें गौका बच्चेके साथ किया गया प्रेम प्रधान स्थान रखता है. उसी प्रेमके समान ही परमात्मासे प्रेम करनेको वात्सल्य भावकी भक्ति कहते हैं, किन्तु उसमें भी न्यूनता रह जाती है. गौको पहले बच्चेके बाद जब दूसरा होता है तो वह पहले बच्चेकी अपेक्षा दूसरे बच्चेसे अधिक प्रेम करने लगती है. चौथी भक्ति माधुर्यभावकी भक्ति है. माधुर्य भावकी भक्ति वह भक्ति है जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री अपना सब काम पतिको प्रसन्न करनेके लिए करती है. उसके हृदयमें पतिको प्रसन्न करनेके अतिरिक्त दूसरी कोई इच्छा होती ही नहीं है. वह स्वप्नमें भी पर पुरुषका ध्यान करना पसन्द नहीं करती.

उत्तम के अस बस मन मांही, सपनेहुं आन पुरुष जग नांही ।

उसी प्रकार भक्त भी परमात्माके अतिरिक्त दूसरे किसी देवताका ध्यान नहीं करता और न ध्यान करनेकी आवश्यकता ही समझता है एवं उसका कर्तव्य, कर्म परमात्माकी प्रसन्नताके लिए ही होता है, तभी माधुर्यभावकी भक्ति पूर्ण होती है. उसमें तो –

कृष्णपादाब्ज – मधुपाः कृष्णदर्शनलालसाः ।
कृष्णं स्मरन्ति प्राणेशं यथा प्रोषित – भर्तृकाः ।।

जिस प्रकार पतिसे वियुक्ता पत्नी अहर्निश पतिके ध्यानमें ही निमग्न रहती है, उसी प्रकार श्रीकृष्ण चरणकमलोंका भ्रमर बनकर

Shri Prannath Ji Pustkalay

कृष्णके दर्शनके लिए उत्सुक भक्त प्राणेशके रूपमें कृष्णका सदा ध्यान करता है. तभी वह पूर्ण भक्त कहा जा सकता है. इसीलिए वृहद्वामन पुराणमें लिखा है कि–

स्त्रियो वा पुरुषो वापि भर्तृभावेन केशवम् ।
हृदि कृत्वा गतिं यान्ति श्रुतीनां नात्र शंसयः ।।

स्त्री हो अथवा पुरुष जब पति भावसे श्रीकृष्णका हृदयमें ध्यान करता है तभी मुक्ति प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं. यही कारण है कि दण्डकारण्यमें निवास करनेवाले महान तपस्वी भी माधुर्य भावकी भक्तिसे रहित थे इसलिए उनका कठिन तप भी उनके संसार बन्धनको काटनेमें समर्थ नहीं हुआ. जब रामके दर्शन पाकर उन ऋषियोंने माधुर्य भक्ति करनेकी इच्छा व्यक्त की, तब गोकुलमें गोपी रूप पाकर संसार बंधनसे मुक्त हो सके.

पुरा महर्षयः सर्वे दंडकारण्यवासिनः ।
दृष्टवा रामं हरिं तत्र भोक्तुमैच्छन् सुविग्रहम् ।।
ते सर्वे स्त्रीत्वमापन्नाः समुद्भुताश्च गोकुले ।
हरिः संप्राप्य कामेन ततो मुक्ता भवार्णवात् ।।

(पद्मपुराण)

इसलिए श्रीकृष्णजीने भागवतमें कहा है –

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ।।
मयि निर्बद्धहृदयाः साधवः समदर्शिनः ।
वशेकुर्वन्ति मां भक्त्या सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा ।।

निष्काम रूपसे अथवा मोक्ष–कामनाकी इच्छासे बुद्धिमान पुरुषका कर्तव्य है कि अपनी तीव्र भक्तिसे परम पुरुष परमात्माकी

Shri Prannath Ji Pustkalay

उपासना करे. समदर्शी महात्मा अपने हृदयको मेरेमें लीन कर अपनी भक्तिसे मुझको उसी प्रकार वशमें कर लेते हैं, जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री अपने पतिको वशमें कर लेती है. इस बातकी पुष्टि वेद भी करते हैं–

नव्या नव्या युवतयो भवंतीर्महद्देवानाम् सुरत्वमेकम् ।
(ऋग्वेद ३.५५.१६)

यह भी देवताओंका ही देवत्व है कि जो वे नई–नई युवतियोंके रूपमें परिणत हो सकते हैं.

त्वं काम ! सहसासि प्रतिष्ठितो विभुर्विभावा सख आ सखीयते ।
(अथर्व वेद १९.५२.२)

हे कृष्ण ! आप घट घटमें व्यापक हो एवं विशेष कर हमारे भावोंके ज्ञाता हो अतः सब तरहसे सखीजनकी तरह आचरण कीजिये.

त्वं जामिजं जनानामग्रे मित्रो असि प्रियः ।
सखा सखिभ्य ईड्यः । (ऋग्वेद १.७५.४)

हे तेजस्वी कृष्ण ! आप हम भक्त जनोंके बन्धु मित्र एवं प्यारे हो अतएव हम सखीजनोंके सखा होनेके कारण सर्वथा स्तुत्य हो. इत्यादि शतशः प्रमाण इस बातको पुष्ट करते हैं कि पतिव्रता स्त्रीके समान माधुर्य भावकी भक्ति करने वाले ही परमात्माको प्राप्त करनेमें समर्थ हो सकते हैं. ऐसे भी विचार करके देखा जाय तो संसारके प्राणी मात्रकी आत्माओंका पति परमात्मा ही है. परमात्मा ही प्रत्येक आत्माओंका नाथ–पति, स्वामी और मालिक है. आत्मा तो सब प्राणियोंकी स्त्री रूप ही है. आत्मा शब्द हिन्दीमें स्त्रीलिंग है. इसी बातको गीतामें भी कहा है–

Shri Prannath Ji Pustkalay

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिः विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ! यदेदं धार्यते जगत् ।।

हे अर्जुन ! मेरी दूसरी परा नामकी प्रकृतिको जानो. जो जीव रूपसे इस जगतको धारण किये हैं. इसमें भगवानने अपनी परा प्रकृतिको ही जीव बतलाया है और प्रकृति तो स्त्रीलिंग शब्द है ही. इसलिए चराचर जगतके प्राणियोंकी आत्माओंका पति परमात्मा है. अतः उसकी उपासना पतिव्रता स्त्रीके समान माधुर्य भावसे ही करनी चाहिए. माधुर्य भावकी भक्तिका वर्णन पद्मपुराणमें भी बहुत किया है.

माधुर्य भावकी भक्ति करने वालोंको मृत्यु पर्यन्त चातकके समान पूर्णब्रह्म परमात्माकी ही सेवा, ध्यान, पूजा, प्रणाम और प्रार्थना करनी चाहिए. शरीर छोड़ देने पर वे पूर्णब्रह्मके धाममें पहुंच जाते हैं. ऐसी भक्ति करने वाले भक्त संसारमें बहुत कम होते हैं. गर्गसंहितामें भी कहा है –

कुर्वन्ति सततं राजन् भक्तिः ये प्रेमलक्षणाम् ।
ते भक्ता दुर्लभा भूमौ भगवद्भक्त भावना ।।

क्यों कि ऐसी भक्ति तन्मय हो जाने पर ही होती है. उसमें तो –

प्रीति जो मेरे पीवकी, बैठी पिंजर मांही ।
रोम रोम पिउ पिउ करे, दादू दूसर नांही ।।

बस, वहां तो रोम रोमसे उस परमात्माका नाम ही उच्चारण होता है. दूसरी बातें रह ही नहीं जाती हैं. कबीरदासजी तो एक कदम और आगे बढ़े हुए हैं. उनका कहना हैं कि –

कबीरा काजर रेखहू, अब तो दई न जाय ।
नैननि प्रीतम रमि रहा, दूजा कहां समाय ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

उनकी आंखोंमें तो काजल लगानेकी भी जगह नहीं हैं. वहां तो प्रीतमसे खाली स्थान ही नहीं, जहां कोई दूसरी वस्तु रखी जा सके–

प्रीतम छबि नैननि बसी, पर छबि कहां समाय ।
भरी सराय रहीम लखी, आप पथिक फिर जाय ।।

प्रेम लक्षणा भक्ति करनेवालेकी तो –

जिन्हें है इश्क सादिक, वे कहां फरियाद करते हैं ।
लवों पर मुहर खामोशी, दिलोंमें याद करते हैं ।।

वे तो आत्मासे ही परमात्माके दर्शन करते हैं, बाहरी चेष्टायें उनकी सब बन्द हो जाती हैं. उनकी अवस्था तो –

रोमांचेन चमत्कृता तनुरियं भक्त्या मनोनन्दितं,
प्रेमाश्रुणि विभूषयन्ति वदनं कण्ठं गिरो गद्गदाः ।।
नास्माकंक्षणमात्रमप्यवसरः कृष्णार्चनं कुर्वताः,
मुक्तिद्वारि चतुर्विधापि किमियं दास्याय लोलायते ।।

प्रेममें मग्न होनेसे शरीर रोमांचित रहता है. भक्तिसे मन सदा प्रसन्न रहता है प्रेमके आंसुओंसे मुखारविन्द सुशोभित रहता है और कंठकी वाणी प्रेम जलसे भिगी हुई निकलती है. उनको तो अहर्निश कृष्ण सेवामें निमग्न होनेके कारण क्षण मात्रका भी समय नहीं मिलता कि दूसरी तरफ देख सकें, फिर भी मुक्तियां हाथ जोडे उस भक्तके दरवाजे पर दासीकी तरह खड़ी रहती है. लेकिन भक्त उनकी परवाह नहीं करता. वह तो परमात्मासे मिल चुका है, उसको मुक्तिकी क्या आवश्यकता है !

Shri Prannath Ji Pustkalay

पंथ होवे कोट कलप, प्रेम पहुंचावे मिने पलक ।

श्री प्राणनाथजी

वह तो करोडों कल्पोंके रास्तेको एक पलकमें तय कर अपने प्रियतमसे मिल जाता है. उसके मार्गमें कोई भी रूकावट आ ही नहीं सकती है. संसारमें भी देखा जाता है कि जब भ्रमरी किसी कीड़ेको पकड़ कर ले आती है और उसके चारों तरफ चक्कर लगाना शुरू करती है, उस समय कीड़ा अपने बाहरी ज्ञानको भूलकर उस भ्रमरीके स्वरूपमें तन्मय हो जाता है और उसका परिणाम यह होता है कि कीड़ा स्वयं भ्रमरी रूप हो जाता है. फिर परमात्माके रूपमें तन्मय होने वाले भक्तकी आत्मा परमात्माके स्वरूपमें सम्मिलित हो जाय तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? इसी विचारको लेकर लंकाके अशोक वाटिकामें बैठी हुई सीताने त्रिजटासे कहा था कि –

कीटोऽयं भ्रमरी भवत्यतिनिदिध्यासाद्यथाहं तथा
स्यामेवं रघुनन्दनोऽपि त्रिजटे दाम्पत्यसौख्यं गतम् ।
शोकमावह मैथिलेन्द्रतनये तेनापि योगः कृतः
सीता सोऽपिभविष्यतीतिसरलेतन्मेमतं जानकी ।।

सीताने कहा कि त्रिजटे ! कीड़ा भ्रमरीके ध्यानमें अपना रंग बदल देता है तो मैं भी अहर्निश रामका ही ध्यान करती हूं. इससे मुझे भय है कि मैं भी यदि राम रूप ही हो जाऊं तो दाम्पत्य सुख नष्ट हो जायेगा और संसारमें सीता रामके बदले राम राम हो जायेंगे. त्रिजटाने कहा कि जानकी ! चिन्ताकी कोई बात नहीं तुम्हारे ही तरह राम भी तुम्हारा ध्यान करते हैं, अगर तुम राम बनोगी तो राम सीता बन जायेंगे फिर भी सीताराम तो रहेंगे ही. यह प्रेमका

Shri Prannath Ji Pustkalay

वास्तविक रूप है. प्रेमी प्रेममें आकर अपने अस्तित्वको नष्ट कर देता है. उसकी दृष्टिमें तो –

मुझ में समा जा इस कदर, बाकी रहे ना ठौर है ।
जिस में न कोई कह सके, मैं और हूं तूं और है ।।

वहां तो –

दिया हमने जो अपनी खुदी को मिटा,
वह जो परदा था बीचमें अब न रहा ।
रहा परदे में अब न वह परदानशीं,
कोई दूसरा उसके सिवा न रहा ।
बस जिधर देखता हूं उधर तूं ही तूं है ।।

ऐसी अवस्था हो जाती है. ऐसे भक्तोंके लिए ही श्रीकृष्णने गीतामें लिखा है कि–

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ।।

हे अर्जुन ! मैं सब प्राणियोंमें सम भाव रखता हूं किन्तु जो मेरा प्रेमभक्तिसे भजन करते हैं, उनमें मैं हूं और वे मेरेमें हैं. इसलिये गर्गाचार्यने लिखा है कि –

प्रेमलक्षणया भक्त्या सदा निष्कारणाः पराः ।
लोकानुलंघ्य तद्धाम यान्ति राजन्न संशयः ।।

निष्काम भावसे प्रेमलक्षणा भक्ति द्वारा परमात्माके भजन करने वाले चतुर्दश लोकोंको पार कर उस परमात्माके धाममें पहुंच जाते हैं. इसमें कोई संदेह नहीं है. इसलिए माधुर्यभावकी प्रेमलक्षणा भक्ति द्वारा ही परमात्माकी उपासना करनी चाहिए. इससे बढ़कर

Shri Prannath Ji Pustkalay

परमात्माको प्राप्त करनेका दूसरा कोई सरल साधन नहीं है. इससे भिन्न दूसरे प्रकारकी भक्ति वालोंको भी जब तक इस प्रेम लक्षणा भक्तिका मार्ग नहीं मिलता तब तक उनको मुक्ति नहीं मिल सकती है. क्योंकि–

जा घट प्रेम न संचरे, सो घट जान मसान ।
जैसे खाल लोहारकी, श्वास लेत बिन प्रान ।।

इसलिए छत्रसाल ! तुम इसी मार्गका अवलम्बन कर परमात्माको प्राप्त करनेका प्रयत्न करो, क्यों कि यही सर्वोत्तम मार्ग है.

छत्रसाल – हे प्रभो ! परमात्माको प्राप्त करनेके लिए सब मन्त्रोंमें उत्तम मन्त्र कौन है ? क्यों कि संसारमें जितने भी धर्म या संप्रदाय हैं सबके मंत्र भिन्न भिन्न हैं और सभीका यह दावा है कि उनके मन्त्रके जापसे ही अभीष्ट सिद्धि हो सकती है.

स्वामीजी – छत्रसाल ! मन्त्र शब्दका अर्थ गुप्तविचारका है. मन्त्र गुप्त ही रखा जाता है. परमात्माको प्राप्त कराने वाले विचारोंका सम्बन्ध भी आत्माके साथ है. इसलिए मन्त्र हृदयमें धारण करनेकी वस्तु है. इसीलिए मन्त्र देते समय गुरु शिष्यके दक्षिण कानमें मन्त्रकी उपदेश करता है. जैसा कि मन्त्र दीक्षा तुमको मैंने दिया था. मन्त्र तो संसारमें अनेकों हैं किन्तु सबसे प्रधान और महत्त्वशाली मंत्र वही है जो संसारसे इस आत्माको तार दे. और उस मन्त्रको तारतम अथवा तारतम्य मन्त्र कहते हैं.

तारतम्येन जानाति सच्चिदानन्दलक्षणम् ।

तारतम्य मन्त्रसे ही सच्चिदानंद स्वरूप परमात्माको जाना जा सकता है. इसीलिए उसको तारतम कहा जाता है, क्योंकि सच्चिदानंद

Shri Prannath Ji Pustkalay

परमात्माको जान लेनेके बाद आत्मा संसारसे तर जाती है. तृ **प्लवन तरणयोः** धातुसे तमप् प्रत्यय कर तारतम शब्दकी सिद्धि होती है. जिसका अर्थ संसार सागरसे निश्चित रूपसे तार अर्थात् पार कर देना ही है. श्रुतियोंने इसको तारक शब्दसे याद किया है–

गर्भजन्मजरामरणसंसारसागरमहद्भयात्
संतारयति तस्मात्तारकमिति । (अद्वयावतारोपनिषद्)

गर्भ, जन्म, जरा और मृत्युके भयसे तार देने वाला तारक मन्त्र तारतम मन्त्र ही है.

तस्मादन्तर्दृष्टया तारक एवानुसंधेयः । (अद्वयातारोपनिषद्)

इसीलिए आत्मिक दृष्टिसे तारक मन्त्रका अन्वेषण एवं विचार करना चाहिए ।

तारकं सर्वविषयं सर्वथा विषयमक्रमं चेतिविवेकजं ज्ञानम् ।।
(योग दर्शन)

तारतम मन्त्र सीधा परमात्माके साथ मिलाने वाला है. उसमें क्रम नहीं है. उसमें जन्म – जन्मान्तरका कोई सम्बन्ध नहीं है. क्योंकि यह विवेकपूर्ण ज्ञान देने वाला है. विवेकपूर्ण ज्ञान हो जाने पर आत्माके मुक्त हो जानेमें तो कोई सन्देह ही नहीं रह जाता है.

देहान्ते देवः परमं ब्रह्मतारकं व्याचष्टे । (श्रुतिः)

देहान्तके इच्छुकोंके लिए अर्थात् सर्वदाके लिए जो जन्म – मृत्यु रूप बन्धनसे मुक्त होना चाहता हो उसके लिए परमात्माने संसारमें तारतम महामन्त्रको ही भेजा है. तारतम मन्त्रके बिना मुक्ति नहीं प्राप्त हो सकती है क्योंकि –

तारतम ज्ञान हाथ कर लीन्हों, क्षीर नीर को निर्णय कीन्हों ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

तारतम ज्ञानसे ही माया ब्रह्मका निर्णय हो सकता है. तारतम मन्त्रके अतिरिक्त माया, ईश्वर, जीव और परमात्माका ज्ञान कराने वाला दूसरा कोई मन्त्र नहीं है. छत्रसाल ! जो तारतम मन्त्र तुमको मैंने दिया है वह तो साक्षात् पूर्णब्रह्म परमात्माके मुखसे निकला हुआ परिपूर्णतम ज्ञान है. यही षोडशाक्षर मन्त्र जामनगरमें पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णने श्री निजानन्द स्वामीको दिया था. इसके सम्बन्धमें पद्मपुराणके पातालखंडमें लिखा है कि –

मन्त्रश्चिन्तामणिः प्रोक्तः षोडशार्णो महामनुः ।
ब्रह्मप्रियाणां सान्निध्यं ददात्येव न संशयः ।।

यह सोलह अक्षरका महामन्त्र चिन्तामणि है. इसको परमात्माने ब्रह्मसृष्टियोंके पास भेजा है. वे ब्रह्मसृष्टियां मुक्त आत्मायें ही इस मन्त्रको संसारके प्राणियोंको प्रदान करेगी. संसारमें जिस किसीको भी यह श्री कृष्ण प्रदत्त महामन्त्र प्राप्त होगा, वह संसार बन्धनसे मुक्त होकर सर्वदाके लिए आवागमनसे रहित हो जायेगा. क्योंकि –

तावन्निबद्धः संसारे कारागारे विधेर्जनः ।
न यावत् कृष्णमन्त्रं च प्राप्नोति गुरु–वक्त्रतः ।।

(ब्रह्म वै.पु. २.३६.८८)

इस ब्रह्माके बनाये हुए संसार रूप कारागृहमें तभी तक यह जीवात्मा निवास करता है, जब तक उसको गुरु मुखसे कृष्ण मन्त्र नहीं प्राप्त होता.

कृष्णेति मंगलं नाम यस्य वाचि प्रवर्तते ।
भस्मीभवन्ति सद्यस्तु महापातककोटयः ।।

(ब्रह्म.वै. ४.१११.३८)

कृष्ण यह मंगल कारक नाम जिसकी वाणीसे निकलता है,

Shri Prannath Ji Pustkalay

उसके करोड़ों महापाप क्षणमात्रमें भस्म हो जाते हैं. क्योंकि–

गाणपत्येषु शैवेषु तथा शाक्तेषु सुव्रत ।
सर्वेषु मन्त्रवर्गेषु वैष्णवं श्रेष्ठमुच्यते ।।
वैष्णवेषु च मन्त्रेषु कृष्णमन्त्राः फलाधिकाः ।।

(गौतमतन्त्रे १)

गणेश, शिव, शक्ति इत्यादि देवताओंके मन्त्रोंसे विष्णु भगवानका मन्त्र श्रेष्ठ है, किन्तु वैष्णव मन्त्रसे भी कृष्णका अधिक फल है.

गृहाण मंत्र कृष्णेति कर्ममूलं निकृन्तनम् ।
सर्वेषामेव मंत्राणां सारात्सारं परात्परम् ।।

सम्पूर्ण कर्म बन्धनोंको काटने वाले श्रीकृष्ण मन्त्रको ग्रहण करो, क्योंकि यह परात्पर मन्त्र सब मन्त्रोंका सार है. इसलिए हरिवंश पुराणमें लिखा है कि –

अतः समस्त देवानां पूज्य एव च केशवः ।

सब देवताओंके पूज्य श्रीकृष्ण ही हैं. अतः उन्हींके नामका मन्त्र सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है और वह तारतम मन्त्र ही है. इससे ही पूर्णब्रह्म परमात्मा आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्रका पूर्ण ज्ञान होता है. अध्यात्म तत्त्वके गूढ, कठिनसे कठिन मार्गको सुलभ, सुगम और सुन्दर बनाने वाला तारतम मन्त्र ही है.

पर धामकी निध कही सो तारतम । (श्रीमुखवाणी)

परमधामका धन तो तारतम ज्ञान ही है. इसलिए इस तारतम मन्त्रको ग्रहण कर इसके द्वारा श्रीकृष्ण परमात्माको प्राप्त करनेका प्रयत्न करना ही मुक्त होनेका सबसे श्रेष्ठ साधन है. क्योंकि –

कोट करो नरमेध, अश्वमेध अनन्त ।
अनेक धरम धरा विषे, तीरथ वास बसन्त ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

सिद्ध करो साधना, विप्र मुख वेद वदन्त ।
सकल क्रियासु धरम पालतां, दया करो जीवजन्त ।।
व्रत करो विध विधना, सती थाओ सीलवन्त ।
भेष धरो साध सन्तना, ज्ञानी ज्ञान कथन्त ।।
तपसी बहु विध देह दमो, सर्वा अंग दुख सहन्त ।
पर तोले न आवे एकने, मुख श्रीकृष्ण कहन्त ।।

(श्रीमुखवाणी)

स्वामीजीने कहा कि इस प्रकार श्रीकृष्ण मन्त्र और श्रीकृष्ण नामकी महिमा स्थान-स्थान पर वर्णित है. संक्षिप्त रूपमें मैंने तुमको सुना दिया. इससे तुमको बोध हो गया होगा.

छत्रसालजीने नतमस्तक होकर स्वामीजीसे प्रार्थना की कि प्रभो ! आपके इस उपदेशामृत पान करनेसे मेरा हृदयान्धकार दूर हो गया. आत्मा प्रसन्न हो गई. परमात्मा ओर मायाके स्वरूपको अच्छी तरह जान लिया और परमात्माको प्राप्त करनेका सुगम मार्ग भी मुझे ज्ञात हो गया. अब आप यह बतलानेकी कृपा करें कि क्या मनुष्यमात्रको इस मन्त्रको ग्रहण करनेका अधिकार है ? अथवा किसी विशेष व्यक्तिको ही. क्योंकि कुछ लोग कहा करते हैं कि नीच जातियों और स्त्रियोंको मन्त्र लेनेका अधिकार नहीं है. नीच जाति तो इसका पात्र ही नहीं है और स्त्रियोंके लिए उसका पति ही परमात्मा है. स्त्री तो अपने पतिकी सेवासे ही सब कुछ प्राप्त कर सकती है. क्योंकि उसके लिए वही माता, पिता, गुरु और ईश्वर है. तो क्या स्त्री गुरुके मुखसे मन्त्र ग्रहण करके परमात्माकी भक्ति करनेकी अधिकारिणी नहीं हो सकती है ?

स्वामीजी – छत्रसाल ! ये सब बातें तो स्वार्थी लोगोंकी बनाई

Shri Prannath Ji Pustkalay

हुई हैं. परमात्माकी तो सब पर समदृष्टि है. वह सबसे प्यार करता है उसका द्वार सर्व साधारण जनताके लिये एक जैसा ही खुला हुआ है. चराचर जगतके प्राणीमात्रमें उसका अंश, उसकी शक्ति एक रूपमें ही व्याप्त है. जिस प्रकार सूर्य अपनी रोशनी प्रदान करते समय ऊँच – नीचका विचार नहीं करता, जिस प्रकार पानीकी बूंदे सब स्थानों पर समान ही पडती हैं, जिस प्रकार वृक्ष सबको फल देते हैं और जिस प्रकार पवन प्राणीमात्रको एक सा ही जीवन शक्ति प्रदान करता है, उसी प्रकार परमात्माका ज्ञान भी सबके लिए बराबर है. क्योंकि ज्ञानका सम्बन्ध आत्माके साथ है और आत्मा परमात्माका ही अंश है. हां, शारीरिक सम्बन्ध पालन करनेके लिए ऊंच – नीचका विचार रखना होता है, क्योंकि वर्ण व्यवस्था भी ईश्वरीय नियम है. और उसका उल्लंघन करना श्रेयस्कर नहीं हो सकता. वर्ण व्यवस्था नष्ट हो जानेसे संसारकी व्यवस्था नष्ट हो जाती है और उससे धर्मकी मर्यादा स्थिर नहीं रह सकती. लेकिन आत्मज्ञान हो जानेके बाद तो ऊंच – नीचका विचार स्वतः नष्ट हो जाता है. क्योंकि आत्मज्ञानीको शारीरिक बन्धन रहता ही नहीं. वह तो सांसारिक नियमोंसे ऊपर उठकर परमहंस बन जाता है. और परमात्माकी भक्ति करनेका सबको बराबर अधिकार है. इतिहाससे पता चलता है निम्न जातिमें पैदा होने वाले अनेकों व्यक्तिओंने अपनी साधनाके बल पर परमात्माका साक्षात्कार किया है और परमात्माने उनकी आत्माको अपने साथ एकाकार कर लिया है. हां, यह बात अवश्य है कि ब्रह्मज्ञान पात्रको विचार करके ही देना चाहिए. अपात्रको दिया हुआ ब्रह्मज्ञान उसके हृदयमें उसी प्रकार

Shri Prannath Ji Pustkalay

नहीं ठहर सकता, जिस प्रकार सिंहिनीका दूध सुवर्ण पात्रके बिना नहीं रह सकता.

केशरी दूध ना रहे रज मात्र, उत्तम कनक बिना जेम पात्र ।

इसलिए गुरुका यह कर्तव्य है कि वह पहले शिष्यको पात्र बना ले. उसके बाद ब्रह्मज्ञान प्रदान करे. क्योंकि शुद्ध परिष्कृत धरातलमें डाला हुआ बीज ही सुन्दर फल देता है. अन्यथा जिस प्रकार नाना कण्टकाकीर्ण अथवा ऊशरभूमिमें आरोपित बीज कुछ फल नहीं देता, उसी प्रकार बन्दरोंको प्रदान किया हुआ रत्न, वधिरोंके लिए संगीत, अन्धोंके लिए दीपक और मूर्खोंके लिए ब्रह्मज्ञान भी व्यर्थ ही है.

स्त्रियोंको गुरु धारण न करनेका तो प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि वह भी मनुष्य है. उनके अन्दर भी सत्यासत्य निर्णयकी बुद्धि है, उनके अन्दर भी आत्मा है और उनको भी मुक्ति प्राप्त करनेका उतना ही अधिकार है, जितना पुरुषको है. आजकल कलियुगी वातावरणके कारण एक तो लोगोंके अन्दर धर्म–कर्मसे श्रद्धा हट चुकी है और दूसरे गुरुघंटाल हो गए हैं. संसारमें आजकल प्रायः दुराचारी, कपटी, ईर्ष्यालु और लोभी गुरुओंकी बहुलता हो गई है. इसलिए भी लोग स्त्रियोंके गुरु धारण करनेके विपक्षमें हैं. लेकिन इस समस्याका यह समाधान नहीं कि स्त्रियोंकी आत्माको सुखसे वंचित रखा जाय, बल्कि समाजको चाहिए कि वह योग्य व्यक्तियोंका निर्माण करे. सदाचारी, ब्रह्मनिष्ठ, तपस्वी, शान्त, निर्वैर, अलोभी और राग–द्वेषसे रहित गुरुसे मन्त्र ग्रहण करनेसे और उसके उपदेश पर चलनेसे आत्म–कल्याण होता ही है. किन्तु मूर्ख मनुष्य दम्भी, करामती, लोभी पापी, अकर्मण्य सन्तों

Shri Prannath Ji Pustkalay

और महन्तोंको जान कर भी उनकी पूजा सत्कार करते हैं. यही महान अनर्थ है. मूर्ख लोग सत्य और सीधी बातको सुनना पसन्द नहीं करते, किन्तु पाखंडियोंके वाग्जालमें बद्ध होकर अपना सर्वस्व उनके चरणोंमें अर्पण कर देते हैं. और जब ठग गुरु उन पर ही अपना हाथ साफ करते हैं तो फिर रोते चिल्लाते हैं. इसलिए गुरुकी पूर्ण परीक्षा करके ही गुरु धारण करना चाहिए. लोक कहावत भी है कि – **पानी पीजे छानके और गुरु कीजे जानके,** अशिक्षित (जो प्रश्नोंका पूर्ण समाधान न कर सके) अहंकारी और पाखंड फैलाने वाले गुरुसे सदा दूर रहना चाहिए.

पति सेवा करना स्त्रियोंका परम कर्तव्य है और पति सेवासे ही स्त्रियां सांसारिक सब सुख प्राप्त कर सकती हैं और अन्तमें उनको स्वर्गकी प्राप्ति भी हो जाती है. किन्तु ये सब क्षणिक सुख हैं. क्योंकि पतिके साथ स्त्रीका शारीरिक सम्बन्ध है और शरीरसे किये गए प्रत्येक शुभकर्मोंका फल स्वर्ग प्राप्ति ही है. आत्माको मुक्त करनेके लिए तो प्रभु भक्ति ही करनी पडेगी. भक्तिका मार्ग गुरु ही बतला सकता है. भारतवर्षकी प्राचीन देवियां गुरु धारण करती थीं, विदुषी होती थीं.

शंकराचार्यजी और काशीके प्रसिद्ध विद्वान मंडन मिश्रका सत्रह दिन तक शास्त्रार्थ हुआ था और उन दोनोंकी मध्यस्थता मंडन मिश्रकी विदुषी पत्नी विद्याधरीने की थी. मंडन मिश्रके परास्त हो जाने पर विद्याधरीने कहा था कि –

अपि तु त्वयाद्य न समग्रजितः प्रथिताग्रणीर्मम पतिर्यदहम् ।
वपुरर्द्धमस्य न जितामतिमन् अपि मां विजित्य कुरु शिष्यमिमम् ।।

हे मतिमन्! मेरे अद्वितीय विद्वान पतिको अभी आपने पूर्णरूपसे

Shri Prannath Ji Pustkalay

परास्त नहीं किया, क्योंकि अभी उनका अर्धांग मैं अवशिष्ट हूं. अतः मुझे भी परास्त कर आप मेरे पतिको अपना शिष्य बनाइए. क्या गुरुके बिना ही विद्याधरी इतनी विदुषी हुई थी ? जिसने दिग्विजयी शंकराचार्यजीके भी छक्के छुड़ा दिये थे ? नहीं, उसने अवश्य गुरु धारण किया था. श्रीकृष्णजीने गीतामें लिखा है कि –

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः ।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ।।

हे अर्जुन ! मुझे ही प्राप्त कर स्त्रियां, वैश्य, शूद्र और पापयोनियोंमें आने वाले मनुष्य उत्तम गति प्राप्त कर सकते हैं. यदि पति सेवासे ही स्त्रियोंको परम गतिकी प्राप्ति हो जाती तो भगवान उनको अपनी शरणमें क्यों बुलाते.

स्त्रियो वा पुरुषो वापि भर्तृभावेन केशवम् ।
हृदि कृत्वा गतिं यान्ति श्रुतीनां नात्र संशयः ।। (वृहद्धामनपु.)

पतिव्रता स्त्रीके समान अनन्य भावसे श्रीकृष्णका हृदयमें ध्यान करने पर ही स्त्री अथवा पुरुषको मुक्ति मिल सकती है, अन्यथा नहीं. क्योंकि केवल पतिकी सेवा करने वाली स्त्रीको तो स्वर्गकी ही प्राप्ति होती है और उसको फिर मृत्यु लोकमें ही आना पड़ता है.

पति शुश्रुषयैव स्त्री कान् लोकान् समश्नुते ।
दिवः पुनरिहायाता सुखानामम्बुधिर्भवेत् ।। (कात्यायनस्मृतिः)

इसलिए अखंड मुक्ति प्राप्त करनेके लिए तो परमात्माकी ही शरण लेनी पडेगी.

गुरु के बिना अधम गति होई, भला बुरा चिन्हें न कोई ।
नाव बिना केवट का करही, गुरु बिन नहीं जन को भव तरही ।।
(अर्जुन गीता)

Shri Prannath Ji Pustkalay

भागवतमें भी लिखा है कि –

गुरुर्न स स्यात् स्वजनो न स स्यात्
पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात् ।
दैवं न तत्स्यात् न पतिश्च स स्यान्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम् ।।

वह गुरु, स्वजन, पिता, माता ही नहीं है, जो इस मृत्यु बन्धनसे छुड़ाकर परमात्माके चरणोंमें न पहुंचा दे. इसीलिए जब मीराबाई अपने कुटुम्बियोंके अत्याचारसे तंग आ गई और उसके देवरने भगवान कृष्णकी भक्तिमें रूकावट डालनेके लिए उसको सांपसे कटवाया और जहरका प्याला पिलाया तो मीराबाईने तुलसी दासजीको पत्र लिखा कि मेरा मार्ग–दर्शन करें. गोस्वामी तुलसी दासजीने प्रत्युत्तरमें लिखकर भेजा कि –

जाको प्रिय न राम वैदेही ।
तजिये तिन्हें कोटि बैरि सम, यद्यपि परम सनेही ।।
तज्यौ पिता प्रह्लाद विभीषण, बन्धु भरत महतारी ।
बलि गुरु तज्यौ कन्त व्रजवनितनि, भये जग मंगल कारी ।।
नाते नेह राम ही के सब, मनियत नेह जहां लौ ।
अंजन कहां आंख जो फूटे, बहुतो कहों कहां लौ ।।
तुलसी अपनो सोई सकल विध, पूज्य प्राण तें प्यारो ।
जाते होय सनेह राम पद, इतनो मतो हमारो ।।

अगस्त्य संहितामें स्त्रियोंको मंत्र ग्रहण करनेका अधिकार दिया गया है.

तदन्येषा देशिकेन वक्तव्यं तारकं परम् ।
शुचि व्रततमां शूद्रा धार्मिका द्विजसेवकाः ।।
स्त्रियः पतिव्रताश्चान्ये प्रतिलोमानुलोमजाः ।
लोकाश्चांडालपर्यन्तं सर्वेप्यत्राधिकारिणः ।। (अगस्त्यसंहिता)

Shri Prannath Ji Pustkalay

इसलिए पवित्र, व्रतनिष्ठ, धर्मात्मा और द्विज सेवक शूद्र, पतिव्रता स्त्रियां, प्रतिलोमज अथवा अनुलोमज मनुष्य और चांडाल पर्यन्त मानव मात्र इस तारतम मन्त्रके अधिकारी हैं. इसीलिए –

ब्राह्मणः क्षत्रियोवैश्यां शूद्राणां वा स्त्रियोऽपिवा ।
विष्णुभक्तिरता साधून् दिक्षाया विधिना गुरुः ।। (गुरुशिक्षा)

विष्णु भगवान् नारदसे कहते हैं कि हे नारद ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्रियोंको भी भगवानकी भक्तिमें लीन साधुको अपना गुरु बनाना चाहिए.

हिरण्यकश्यपकी गर्भवती स्त्री कयाधूको नारदजीने मन्त्र दिया था. उसीसे प्रह्लाद भक्त हुआ जिसकी गणना आज भी प्रधान भक्तोंमें है.

पाण्डवोंकी माता कुन्ती दुर्वासा ऋषिसे दीक्षित हुई थी. गौतमी और आत्रेयीने भरद्वाज ऋषिसे दीक्षा लेकर वेदाध्ययन किया था.

विदुषी गार्गीने कुमारावस्थामें ही सम्पूर्ण वेदोंका अध्ययन कर लिया था.

पहले स्वयम्भू मनु और शतरूपाने (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) इस द्वादशाक्षर मन्त्रका जाप किया था.

द्वादश अक्षर मंत्रवर जपहिं सहित अनुराग ।
वासुदेव पदपंकरूह दम्पत्ति मन अति लाग ।।
इहि विधि बीते वर्षषट् सहस वारि आहार ।
सम्वत् सप्तसहस पुनि रहे समीर आधार ।। (रामायण)

स्त्रियोंको मन्त्र लेनेका अधिकार न होता तो शतरूपा उक्त मन्त्रका जाप कैसे कर सकती थी. मनुजी अकेले मन्त्रका जाप करते और शतरूपा उनकी सेवामें निमग्न रहती. लेकिन वहां तो ऐसा

Shri Prannath Ji Pustkalay

नहीं हुआ. दोनों साथ – साथ छः हजार वर्ष तक केवल जल पीकर मन्त्रका जाप करते रहे और सात हजार वर्ष तक केवल हवाके आधार पर रह कर ही भगवानका भजन किया.

पार्वतीने कुमारावस्थामें ही नारदजीको अपना गुरु बनाया था. इसीलिए भगवान शंकरको वरके रूपमें प्राप्त करनेके लिए तप करती हुई पार्वतीके पास जब सप्तर्षियोंने आकर परीक्षा लेनी चाही थी. उस समय पार्वतीजीने कहा था कि –

नारद वचन न मैं परिहरऊँ, बसौ भवन उजरौ नहीं डरऊँ ।
गुरु के वचन प्रतीति न जेही, सपनेहु सुगम न सुख निधि तेही ।।

(रामायण)

और महादेवजीसे शादी हो जानेके बाद भी एक रोज महादेवजीको भगवान श्रीकृष्णका ध्यान करते हुए देखकर पार्वतीने कहा था कि नाथ ! मुझे भी श्रीकृष्णजीके ध्यान करनेकी विधि बतलाएँ ताकि मैं भी ध्यान किया करूं. उस समय महादेवजीने कहा था कि –

गुरूपदेशमार्गेण पूजयित्वैव केशवम् ।
प्राप्नोति वांछितं सर्वं नान्यथा भूधरात्मजे ।।
तमेत्य तं गुरुं देवि ! पूजयित्वा प्रणम्य च ।
विनीता प्राँजलीर्भूत्वा उवाच मुनि पुंगवम् ।।
भगवंस्त्वत्प्रसादेन सम्यगाराधनं हरेः ।
करिष्यामि द्विजश्रेष्ठ ! त्वमनुज्ञातुमर्हसि ।।
इत्युक्तस्तु तया देव्या वामदेवो महामुनिः ।
तस्यै मन्त्रवरं श्रेष्ठं ददौ स विधिना गुरुः ।।

.(पद्मपुराण उत्तरखण्ड अ.२५४)

हे पार्वती ! गुरुके बताए हुए मार्ग (विधि) से ही श्रीकृष्णजीकी पूजा करनेसे सब इच्छाएँ पूरी होती हैं, अन्यथा नहीं. इसलिए हे

Shri Prannath Ji Pustkalay

देवि ! सबसे प्रथम गुरुके पास जाकर पूजा करो फिर प्रणाम करके हाथ जोडकर नम्रताके साथ उस श्रेष्ठ महात्मासे प्रार्थना पूर्वक कहो कि हे द्विजश्रेष्ठ ! आपकी कृपासे मैं भी प्रभु भक्ति करना चाहती हूं. अतः आप आज्ञा देनेकी दया कीजिए. इस प्रकार महादेवजीके कहने पर पार्वतीजीने वामदेव ऋषिके पास जाकर मन्त्र देनेके लिए प्रार्थना की. पार्वतीजीकी प्रार्थना सुनकर गुरु वामदेवजीने श्रेष्ठ मन्त्र पार्वतीजीको दिया. छत्रसाल ! इस प्रकार सैकडों प्रमाण स्त्रियोंको गुरु धारण करनेके सम्बन्धमें लिखे हैं किन्तु जो अल्पज्ञ मनुष्य होते हैं, वे मूलको तो सुधारनेका प्रयत्न नहीं करते, उल्टा उन डालियोंको काट देना चाहते हैं, जिनमें फल लगा करते हैं. प्राचीन हिंदू संस्कृतिको छोड देनेसे ही भारत वर्षका अधःपतन होता जा रहा है. अतः वेद, शास्त्र और पुराणोंकी शिक्षाके आधार पर ही हिन्दू जातिका उत्थान होना चाहिए. परमात्माके अनुभवी, तपोनिष्ठ, शिक्षित और ब्रह्मविद्याको जानने वाले योग्य महात्माओंसे संसारके प्राणीमात्रको मन्त्र लेनेका और भक्ति करनेका अधिकार है.

छत्रसाल – प्रभो ! गुरुके लक्षण क्या हैं ?

स्वामीजी कहते हैं –

श्रीकृष्णरसतत्वज्ञः कृष्णमन्त्रविदांवरः ।
कृष्णमन्त्राश्रयो नित्यं मन्त्रभक्तः सदाशुचिः ।।
सद्धर्मशासको नित्यं सदाचार – नियोजकः ।
सम्प्रदायी कृपापूर्णो विरागी गुरुरुच्यते ।।

(पद्म पु. पाताल खण्ड. अ. ८२)

जो श्रीकृष्णके रहस्यको जानने वाला हो, कृष्णके मन्त्रको जानने वालोंमें भी श्रेष्ठ हो, श्रीकृष्ण मन्त्रके आश्रयमें रहने वाला हो,

Shri Prannath Ji Pustkalay

मन्त्रका भक्त हो, सदाचारी हो, सत्य धर्मका उपदेष्टा हो, दूसरोंको भी सदाचारकी शिक्षा देने वाला हो, सम्प्रदाय पर पूर्ण विश्वास वाला हो, कृपालु हो और काम, क्रोध, लोभ मोहसे पृथक रहनेकी चेष्टा वाला हो, वही गुरु बननेका अधिकारी है और इसी प्रकारके योग्य व्यक्तिको गुरु बनाना चाहिए.

सतगुरु साधो वाको कहिए, जो अगम की देवे गम ।
हद वेहद सबे समझावे, भाने मन को भरम ।।

जो मनकी अज्ञानताको नष्टकर, माया ब्रह्मका निर्णय कर परमात्माके स्वरूप और उसके स्थानकी पहचान कराने वाला हो, वही सतगुरु हो सकता है. ऐसे ही योग्य व्यक्तियोंका सत्कार और सन्मान होना चाहिए. जिस समाज, संस्था, जाति, सम्प्रदाय और देशमें योग्य व्यक्तियोंके बदले अयोग्योंकी पूजा होती है, वहां उन्नति न होकर अवोन्नति ही होती रहती है.

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानां च व्यतिक्रमः ।
त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दुर्भिक्षं मरणं व्यथा ।।

जहां सद्विचार वाले पुरुषोंकी प्रतिष्ठा न होकर अपूज्योंकी पूजा होती है, वहां दुर्भिक्ष, मरण अथवा रोगों, कष्टोंकी अधिकता हो जाती है. अतः गुरु तो सबको अवश्य ही धारण करना चाहिए किन्तु सदाचार पूर्ण गुरुको जानकर ही. अन्यथा गुरुके साथ ही शिष्यको भी नरकगामी होना पडता है. आजकल प्रायः ऐसा देखा जाता है कि – **राहका गुरु और बाटका चेला, शामको मूडा और सबेरे अकेला** हो जाता है. गुरुका ध्यान भी शिष्यके धन पर ही रहता है और शिष्य भी गुरुका धन अपहरण करनेमें संकोच नहीं करता. इसीलिए भारतवर्षका पतन होता है. अतः असत् ज्ञानसे सदा

Shri Prannath Ji Pustkalay

सावधान रहना चाहिए.

छत्रसाल – प्रभो ! एक दूसरेके साथ मिलने पर शिष्टाचारमें पहले किस शब्दका व्यवहार करना चाहिए.

स्वामीजी – एक दूसरेके मिलने पर सबसे प्रथम प्रणाम बोलना चाहिए. क्योंकि प्रणाम यह शब्द हिन्दू संस्कृति एवं परंपरामें शिष्टाचारका प्रतीक है. सृष्टिके आदि कालसे भारतवर्षमें एक मनुष्य दूसरे मनुष्यसे मिलने पर प्रणाम ही बोलता था. इसलिए मनुजीने लिखा है कि –

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ।।

मनुस्मृति सृष्टिके आदि कालका ग्रन्थ है और उसमें लिखा है कि जो मनुष्य किसीको प्रणाम करता है तो उसको आयु, विद्या, यश और बल इन चारों पदार्थोंकी प्राप्ति होती है. इन चारोंके मिल जाने पर फिर अवशिष्ट ही क्या रह जाता है. सारा सुख तो इन्हीं चार पदार्थोंमें निहित है.

इससे यह सिद्ध होता है कि एक दूसरेसे मिलने पर परस्पर प्रणाम शब्द ही बोलना चाहिए. यही प्राचीन सभ्यता है, जिसको त्याग देने पर भारतका गौरव नष्ट होता चला जा रहा है. त्रेता युगमें भी प्रणाम करनेकी ही प्रथा थी. जानकीजीके स्वयम्बरमें धनुष टूट जाने पर जब रंगमंच पर परशुरामजी आते हैं तो उनको देखकर सब राजा लोग–

पितु समेत लै लै निज नामा, करने लगे सब दंड प्रणामा ।

तुलसीदासजीने अपने लिए भी लिखा है –

Shri Prannath Ji Pustkalay

सियाराम मय सब जग जानी, करहुं प्रणाम जोरि युग पानी।।

द्वारपमें भी प्रणाम करनेकी प्रथा थी. महाभारतमें लिखा है कि –

एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामो, दशाश्वमेधाऽवभृथेन तुल्यः ।
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्ण प्रणामी न पुनर्भवाय ।।

एक बार भी जो कृष्णको प्रणाम कर लेता है, उसको दस अश्वमेध यज्ञ करनेका फल मिलता है, बल्कि इतना ही नहीं दस अश्वमेध यज्ञ करने वालेका तो संसारमें जन्म होता है, किन्तु कृष्णको प्रणाम करने वाला सदाके लिए संसार बन्धनसे छूट जाता है.

छत्रसाल – महाराज ! तो क्या अपनेसे छोटेको भी प्रणाम करना चाहिए ?

स्वामीजी – हां, छोटा हो या बडा सबको प्रणाम करना चाहिए. ऋग्वेदमें कहा है–

नमो वृहद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम अशितेभ्यः ।

बडे, छोटे, युवा, वृद्ध सबको प्रणाम करना चाहिए. मनुष्यकी तो बात ही क्या है, भगवान् वेद व्यासजी तो कहते हैं कि–

खं वायुमग्निं सलीलं महीं च ज्योतींषि सत्वानि दिशो दुमादीन् ।
सरित् समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्यः ।।
(भागवत ११.२.४१)

आकाश, वायु, जल, पृथ्वी, नक्षत्रादिक, जीवों, वृक्षों, नदियों और समुद्रादि सबको भगवानका शरीर जानकर प्रणाम करना चाहिए.

इस प्रकार जहां भी देखो प्राचीन ग्रन्थोंमें प्रत्येक स्थानोंमें प्रणाम शब्दका ही प्रयोग किया गया है. इससे मालूम होता है कि वैदिक सभ्यता और संस्कृति हमें प्रणाम करनेकी ही शिक्षा देती है

Shri Prannath Ji Pustkalay

और यही धार्मिक मर्यादा है. जो लोग यह समझते हैं कि हम अपनेसे नीच जातिमें उत्पन्न होने वालेको प्रणाम कैसे कहें, उनको यह समझ लेना चाहिए कि प्रणाम शरीरको नहीं, किन्तु आत्माको किया जाता है. शरीर तो जड है, उसको प्रणाम करनेका कोई महत्त्व नहीं और न ही उससे किसी आशीर्वादकी आशा है. आत्मा ही नित्य, चेतन, विभु और ज्ञाता है जो सबमें समान है. जिस प्रकार अनेक रंगोंके कांचके गिलासमें एक ही गौका दूध रख देने पर भी गिलासके रंगभेदसे दूधमें भी भिन्नता मालूम होती है, किन्तु वास्तविकतामें कुछ भी अन्तर नहीं है. हां, सांसारिक व्यवहारका पालन भी होना चाहिए और आत्मिक शक्ति पर ध्यान देते हुए पहले छोटोंका ही कर्तव्य है कि वह बडोंको प्रणाम कहें. बादमें बडे भी प्रणाम शब्दका ही उच्चारण करें. यही सर्वोत्तम और वेद सिद्ध शिष्टाचार है.

मन्दिरमें जाकर परमात्माके सामने साष्टांग प्रणाम करना चाहिए. क्योंकि शरीरके अष्टांगोंसे परमात्माके प्रति सम्मान प्रदर्शित करना ही श्रेयस्कर है. इसलिए हारित स्मृतिमें लिखा है–

उरसा शिरसा दृष्टया मनसा वचसा तथा ।
पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टांग उच्यते ।।

छातीसे, शिरसे, नेत्रोंसे, वाणीसे, पैरोंसे, हाथोंसे और घुटनोंसे प्रणाम करना चाहिए. इसीको दंडवत् प्रणाम भी कहते हैं. लेकिन –

सभायां यज्ञशालायां देवतायतनेष्वपि ।
प्रत्येकं तु नमस्कारं हन्ति पुण्य पुराकृतम् ।। (स्कन्द पुराण)

सभामें, यज्ञशालामें, मंदिरमें, प्रत्येक व्यक्तिको अलग–अलग प्रणाम नहीं करना चाहिए, नहीं तो प्रथम उपार्जित पुण्य नष्ट हो

Shri Prannath Ji Pustkalay

जाता है. इसलिए उपरोक्त स्थानोंमें सबको एक साथ ही प्रणाम कर लेना चाहिए. इसलिए हे छत्रसाल ! श्री निजानन्द सम्प्रदाय – श्रीकृष्ण प्रणामी धर्मके अनुयायियोंका तो यह सबसे प्रधान कर्तव्य है कि इस वैदिक मर्यादाका पालन करते हुए किसीभी व्यक्तिसे मिलने पर सबसे प्रथम प्रणाम शब्दका ही उच्चारण करें.

छत्रसाल – सद्गुरो ! परमात्माको प्राप्त करनेके लिए परमात्माकी प्रतिमूर्ति पाषाण या मृत्तिकाके रूपमें बनाकर उसकी उपासना करनी चाहिए कि नहीं ?

स्वामीजी – छत्रसाल ! पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ये पांचों तत्त्व जड और नाशवान हैं. परमात्मा शुद्ध सनातन, सच्चिदानंद, चेतन दिव्य और सर्वशोभासम्पन्न एवं सकल गुण निधान है. उसकी प्रतिकृति जड और नाशवान पदार्थोंमें बनाना उचित नहीं है. अन्धकारको प्रकाशके साथ मिलाने वालेको विवेकी नहीं कहा जा सकता है. परमात्मा प्रकाश स्वरूप है और माया अन्धकार रूप, और चतुर्दश भुवनके यावत् पदार्थ मायारूप ही हैं. इसीलिए कबीरदासजीने लिखा है कि–

माया महाठगिनी हम जानी ।
निरगुन फांस लिये कर डोले, बोले मधुर बानी ।।
केशवके कमला ह्वै बैठी, शिवके भवन भवानी ।
पंडा में मूरति ह्वै बैठी, तीरथ में भई पानी ।।
योगी के योगिन ह्वै बैठी, राजाके घर रानी ।
काहू के हीरा ह्वै बैठी, काहूके कौडी कानी ।।
भक्तनके भक्तिनि ह्वै बैठी, ब्रह्माके ब्रह्मानी ।
कहै कबीर सुनो हो सन्तो, यह सब अकथ कहानी ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

और भी –

पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजुं पहार ।
तातें यह चाकी भली, पीसा खाय संसार ।।

इसलिए गरुड पुराणमें लिखा है कि –

न काष्ठे विद्यते देवो न पाषाणे न मृत्सु च ।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद्भावो हि कारणम् ।।

लकड़ी, पत्थर और मिट्टीमें भगवान नहीं है, किन्तु वे तो भावमें ही रहते हैं. अतः परमात्माको प्राप्त करनेमें भाव ही कारण है. नारद पंचरात्रके उत्तर खंडमें लिखा है कि –

यावदीश्वरभावः स्यात् पाषाणप्रतिमादिषु ।
जलादौ तीर्थभावश्च तावदज्ञानमात्मनः ।।

जब तक पाषाण, मृत्तिका आदिके प्रतिमाओंमें ईश्वरका भाव है और जलादिकमें तीर्थ भाव है तब तक उसको अज्ञान ही कहना चाहिए. इसलिए–

तद्ब्रह्म प्रतिपद्येत मंत्रमेतत् त्रयंश्रुतेः ।
न कश्चित्पूजयेन्मूर्तिं पाषाणादिककृत्रिमम् ।। (ब्रह्मवि.)

परब्रह्म परमात्माको प्राप्त करनेके लिए कृत्रिम पाषाणादिक मूर्तियोंकी पूजा करनेकी आवश्यकता नहीं है. इसीलिए श्रीकृष्णजीने कहा है –

मामानन्दं परित्यज्य पाषाणं पूजयिष्यथ ।
लीलाक्रीडारसानन्दानुभवं परिहास्यथ ।। (पु.सं.)

आनन्द स्वरूप मुझ परमात्माको छोडकर पाषाणकी पूजा करते हो. आनन्द रसका अनुभव जो परमात्माके साक्षात्स्वरूपसे प्राप्त हो

Shri Prannath Ji Pustkalay

सकता है उससे तुम परिहास कर रहे हो.

अन्धंतमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते य उ सम्भूत्यां रताः ।। (यजु. ४०.९)

जो असंभूति अर्थात् अनुत्पन्न अनादि प्रकृति रूप कारणकी ब्रह्मके स्थानमें उपासना करते हैं, वे अन्धकार अर्थात् अज्ञान और दुःख सागरमें डूबते हैं और संभूति जो कारणसे उत्पन्न हुए कार्यरूप पृथ्वी आदि भूत, पाषाण और वृक्षादि अवयव एवं मनुष्यादिके शरीरकी उपासना ब्रह्मके स्थानमें करते हैं, वे उस अन्धकारसे भी अन्धकार अर्थात् घोर दुःखरूप नरकमें चिरकाल तक रह कर महा क्लेश भोगते हैं. अतः –

उत्तमा मानसी पूजा ग्रन्थपूजा च मध्यमा ।
अधमा कल्पितापूजा वाह्यकीत्वधमाधमा ।। (सिद्धांतसार)

मानसिक पूजा ही सबसे प्रधान है. शुद्ध पवित्र मनमें प्रभुके स्वरूपका ध्यान कर जो पूजा की जाती है वही सर्वश्रेष्ठ पूजा है. जब तक मन स्थिर होकर उस पूर्णब्रह्म परमात्माके स्वरूपको ग्रहण करनेमें समर्थ न हो सके वहां तक उस परमात्माकी लीला और ज्ञानसे परिपूर्ण श्रीमत्तातरम सागर ग्रन्थकी पूजा करनी चाहिए. लेकिन पाषाण और मृत्तिकादिकी कल्पित पूजा करनेकी आवश्यकता नहीं है और भूत–प्रेतादिकी पूजा तो अधमसे भी अधम है. जिस स्वरूपकी उपासना की जाती है, मृत्युके समय उसीका ध्यान रहता है और जिसका ध्यान मृत्युके समय हो, उसी रूपको आत्मा प्राप्त करती है.

यं यं वाऽपि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय ! सदा तद्भावभावितः ।। (गीता ८.६)

जिस जिस स्वरूपको स्मरण करता हुआ मनुष्य अपने शरीरको

Shri Prannath Ji Pustkalay

छोडता है, उसी भावनासे ओत–प्रोत होनेके कारण उसी स्वरूपको प्राप्त करता है.

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन्यान्ति पितृव्रताः ।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपिमाम् ।। (गीता ९.२५)

देवताओंकी उपासना करने वाले देवताओंको प्राप्त होते हैं, पितरोंकी पूजा करने वाले पितृ लोकमें जाते हैं, भूतोंकी पूजा करने वाले मरने पर भूत ही बनते हैं और मुझे मानने वाले मुझको ही प्राप्त करते हैं. अतः शेष सब पूजाओंका परित्याग कर परमात्माकी मानसिक पूजा ही करनी चाहिए.

छत्रसाल – कृपानिधे ! तीर्थोंमें जानेसे भी परमात्माकी प्राप्ति हो जाती है ?

स्वामीजी – छत्रसाल ! तीर्थ नाम है तारने वालेका. ग्रन्थोंमें तीर्थोंका महात्म्य इसलिए लिखा है कि पहले तीर्थोंमें बडे–बडे उच्च कोटिके महात्मा निवास करते थे उनके दर्शन और सत्संगसे मानसिक शुद्धि होगी और हमारा मन प्रभु भक्तिमें लग जाएगा, इसलिए तीर्थोंमें जाते थे. आजकल उन महात्माओंके स्थानों पर अधिकतर पाखंडी लोग निवास करते हैं जो जनताको हर प्रकार लूटनेकी ही चेष्टा करते हैं.

जब नदियोंके जलोंका महत्त्व नष्ट हो गया और तीर्थ पाखंडियोंसे व्याप्त हो गया, फिर तीर्थोंमें जानेसे जो सफलता पहले प्राप्त होती थी, वह अब कैसे प्राप्त हो सकती ?

ज्ञानह्रदे सत्यजले रागद्वेष – मलापहे ।
यः स्नाति मानसे तीर्थे स न लिप्येत पातकैः ।। (गरुडपु.)

Shri Prannath Ji Pustkalay

जो राग–द्वेषादिक मलोंको नष्ट करनेके लिए ज्ञानरूप तालाब और सत्य रूप जलसे शुद्ध मानसीतीर्थमें स्थान करता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है. इसीलिए योग वाशिष्ठमें लिखा है कि –

कृतं तेन समस्ततीर्थसलीलं दत्तं महीमंडलं
विप्रेभ्यः पितृदेवता सुरगणाः सर्वे च संतर्पिताः ।
इष्टं तेन समस्तयज्ञनिचयैस्तप्तं तपो मंडलं
यस्य ब्रह्म विचारणे क्षणमपि धैर्यं मनः प्राप्नुयात् ।।

जिसका मन क्षण मात्रके लिए भी ब्रह्म विचारमें एकाग्र हो गया. बस, समझ लो कि उसको समस्त तीर्थ करनेका फल, ब्राह्मणोंको सम्पूर्ण पृथ्वी दान करनेका फल, पितर, देवता, सुर, असुर सबको तृप्त करनेका फल, सम्पूर्ण यज्ञ करनेका फल और महानसे महान तप करनेका भी फल प्राप्त हो गया है. इसलिए श्रीकृष्णजीने भी कहा है कि–

मद्भक्त्या यत्र तिष्ठन्ति पादं प्रक्षालयन्ति च ।
तत्स्थानं च महातीर्थं सुपवित्रं भदेवद्ध्रुवम् ।। (देवीभागवत)

जहां मेरे भक्त रहते हैं अथवा अपना चरण धोते हैं, वही स्थान सब तीर्थोंमें प्रधान है. महाभारतमें भीष्मपितामहने भी कहा है कि हे युधिष्ठिर ! सत्य रूपी जल, पुण्य रूपी किनारा और दया रूपी लहरोंमें स्नान करो. जलमें स्नान करनेसे अन्तरात्मा शुद्ध नहीं होती है. इसलिए मानसिक शुद्धिके बिना किसी भी स्थानमें जाने और कुछ भी कर्म करनेका कोई सुन्दर फल नहीं मिलता है. इसलिए सबसे पहले मानसिक शुद्धि पर ही ध्यान देना चाहिए. मन प्रभुके चरणोंमें निमग्न हो और परमात्माका साक्षात्कार करनेकी क्षमता प्राप्त हो जाय इसके लिए तीर्थ स्थानोंमें जाना चाहिए. क्योंकि वहां

Shri Prannath Ji Pustkalay

पूर्णब्रह्म परमात्माके अनन्य भक्त ब्रह्ममुनियोंका निवास स्थान रहा है और वहांकी पृथ्वी पवित्र है.

छत्रसाल – स्वामीजी ! संसारमें जितने भी प्राणी मात्र हैं, क्या उन सबमें एक ही प्रकारके जीव हैं ?

स्वामीजी – नहीं, जीवोंका तो शास्त्रकारोंने कई भेद माना है, किन्तु मुख्यरूपसे तीन प्रकारके जीव हैं.

मुक्ता मुमुक्षुर्विषयी त्रिधा जीवाः प्रकीर्तिताः ।

मुक्त, मुमुक्षु और विषयी तीन प्रकारके जीव संसारमें हैं. परमधाममें निवास करने वाली परमात्माकी आनन्दरूपा शक्तियां जो दृष्टाके रूपमें इस संसारमें हैं, वे मुक्त हैं. उनको नित्यमुक्तात्मा भी कहते हैं. अक्षरब्रह्मके मानसिक तरंगोंसे उद्‌भूत और उनके मन रूप ही जो जीव हैं, उनको मुमुक्षु कहा जाता है. सृष्टिके प्रलयके बाद वे अक्षरके मन रूप ही हो जायेंगे.

विषयी जीव जिनकी उत्पत्ति कार्यब्रह्म और मायासे है. जिनको बद्ध मुक्त भी कहते हैं. संसारमें अधिक संख्यामें निवास करते हैं. इस प्रकार संसारमें तीनों प्रकारके जीव निवास करते हैं और भिन्न भिन्न रूपसे अपने–अपने अनुकूल कर्मोंमें रत हैं.

छत्रसाल – प्रभो ! ब्रह्मज्ञान देने वाले गुरुकी उपासना किस भावसे करनी चाहिए.

स्वामीजी – सद्‌गुरु परमात्माके प्रतिनिधि हैं. इसलिए उनके ऊपर भी परमात्माके समान ही भाव रखना चाहिए.

यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।

गुरुके वचनों पर पूर्ण श्रद्धा विश्वास रखना चाहिए तभी फल

Shri Prannath Ji Pustkalay

मिलता है. राजा, देवता, गुरु, वैद्य और ज्योतिषी इन पर जिस प्रकारका भाव रखा जाता है उसी प्रकारके फलकी प्राप्ति होती है. इसलिए तुलसीदासजीने लिखा है –

गुरु श्रुति सम्मत धर्म फल, पाइये बिनही कलेश ।
हठ वस सब संकट सहे, गालब नहुष नरेश ।।

कबीरदासजी भी कहते हैं –

कबिरा ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और ।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर ।।
यह तन विषकी बेलरी, गुरु अमृतकी खान ।
सीस दिये जो गुरु मिले, तो भी सस्ता जान ।।

गुरुका शास्त्रकारोंने बहुत बडा महत्त्व प्रदर्शित किया है. अतः सद्गुरु पर पूर्णभाव रखना चाहिए.

छत्रसाल – प्रभो ! मुक्तिका स्वरूप क्या है ? समझानेकी कृपा कीजिए.

स्वामीजी – जन्म–मरण रूप जो सांसारिक दुःख हैं, इनसे सर्वदाके लिए छुटकारा प्राप्त कर लेनेका नाम ही मुक्ति है. दैविक, दैहिक और भौतिक ये तीन ताप अनादि कालसे जीवके साथ सम्बन्धित हैं. क्योंकि संसारके कारण रूप जो अक्षरब्रह्म हैं, वे अनादि हैं और उनकी संसार बनानेकी शक्ति भी अनादि है. **ये माया आदि अनादिकी, चली जात अंधेर,** अनादि कालसे तैल धारावत् अविच्छिन्न मायाका प्रवाह चल रहा है और नित्य होनेके नाते जीव भी उसी प्रवाहमें बहते रहते हैं. कभी ऊर्ध्वलोक कभी अधोलोक और कभी मृत्यु लोकमें इन जीवोंके आने जानेका क्रम

Shri Prannath Ji Pustkalay

लगा ही रहता है. मृत्युलोकमें आकर ये जीव सांसारिक कर्म बन्धनमें बंध कर कर्मानुसार फलको भोगनेमें परतन्त्र होते हैं.

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।

शुभ अथवा अशुभ जो भी कर्म इस शरीरसे होते हैं. उनका फल अवश्यम्भावी है. कर्म करनेमें स्वतन्त्र होते हुए भी जीवको कर्म फल भोगनेमें परतन्त्र रहना पडता है. ईश्वरीय अंश चेतन और शक्तिमान होने पर भी शरीरके साथ सम्बन्धित हो जाने पर यह नाना प्रकारके कर्मोंमें लिप्त हो जाता है. और जिस प्रकार मकडी अपने ही शरीरसे जालीकी रचना कर स्वयं ही उसमें फंसकर मर जाती है, उसी प्रकार यह जीव भी इस शरीरको ही अपना घर समझ कर इससे कुटुम्ब, पुत्र, पौत्रादिक, महल, बाग, बगींचे और धन आदि पदार्थोंका संग्रह कर स्वतः ही उसमें आसक्त हो जाता है. परिणाम स्वरूप उसे जन्म, मरण, जरा और व्याधि रूप रोग लग जाते हैं, जो कभी छूटते ही नहीं. मनुष्येतर प्राणी तो भोजन, शयन और जननेन्द्रिय सुखोंको ही सुख मानकर उसमें ही सदाकाल लिप्त रहते हैं, किन्तु मनुष्य विवेकशील प्राणी है, यह कभी पूर्ण पुण्योदयके प्रभावसे संसारके स्वरूपको जानकर इनसे मुक्त नहीं होना चाहता है तो इसके सामने संसारसे निकलनेका कोई मार्ग ही नहीं रहता. फलस्वरूप उन्हीं जन्म, मरण, जरा और व्याधि रूप क्लोशोंको भोगता हुआ रहटके जैसा आवागमनका चक्कर खाता रहता है. बस, इस चक्करसे छूट जानेका नाम ही मुक्ति या मोक्ष है. इस चक्करसे यह जीव तभी छूट सकता है, जब उसे सत, असत, माया, ब्रह्म, नित्य, अनित्य, जड़, चेतन, सुख और दुःखका ज्ञान हो जाय.

Shri Prannath Ji Pustkalay

मायाजनित अज्ञानको दूर कर ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान देनेके लिए संसारमें अनेकों महात्माओंने अत्यधिक प्रयत्न किया है और उनके ज्ञानकी गम्भीरता इस बातकी साक्षी है कि वे अपने प्रयत्नमें काफी हद तक सफल हुए हैं. किन्तु उनका असीम ज्ञान भी परमात्माके वास्तविक स्वरूपका निर्णय न कर सका. क्योंकि उन महात्माओंके ज्ञानकी सीमा साकार या निराकारको पार नहीं कर सकी. संसारमें जितने भी धर्म, मजहब, सम्प्रदाय, मत या पन्थ हैं उनमेंसे किसीने साकारको अथवा किसीने निराकारको ही प्रभुका स्वरूप मानकर मानव समाजको उसपर चलनेके आदेश दिये हैं. और परमात्माको साकार मानने वाले महात्माओंने वैकुंठ या कैलाशमें निवास करने वाले विष्णु भगवान अथवा शंकरजीको ही परब्रह्मका स्वरूप मानकर उनको प्राप्त कर लेनेका नाम ही मुक्ति मान लिया है. किसी महात्माने इनसे आगे बढनेका प्रयत्न किया तो उन्होंने भी श्रीनारायणको ही सर्वशक्तिमानके रूपमें स्वीकार कर लिया है और वैकुंठ, कैलाश अथवा नारायणके धाममें सारूप्य, सायुज्य, सालोक्य और सामीप्य मुक्तिका वर्णन कर सन्तोष कर लिया है. यथा –

मुक्तिश्चतुर्विधा प्रोक्ता श्रूयतां कथयामि वः ।
सारूप्या चैव सायुज्या सालोक्या सार्ष्टिरेव च ।। (शिवपु.)

सारूप्य मुक्तिमें वैकुंठका सब सुख भोगता हुआ जीवात्मा भगवानका स्वरूप भी प्राप्त कर लेता है. सायुज्य मुक्तिमें भगवान स्वरूपमें सम्मिलित होकर वैकुंठके आनंदका अनुभव करता है. सालोक्य मुक्तिमें वैकुंठ लोककी प्राप्ति और सामीप्य मुक्तिमें भगवानका पार्षद बनकर रहनेका सौभाग्य प्राप्त हो जाता है. इसी प्रकार कैलाश

Shri Prannath Ji Pustkalay

अथवा नारायणादि स्थानोंमें भी मुक्तियां प्राप्त होती हैं. किन्तु–

कर्मी योगी च विद्वांसोऽन्तराले यत्सुरालयम् ।
सत्यवैकुंठकैलाशाः क्षीराब्धि – भैरवस्तथा ।।
विश्वरूपं च चैतन्यमेतन्मायास्वरूपकम् ।
माया परं भवेद् ब्रह्म तत्परं ब्रह्मकेवलम् ।। (वज्रसूचि)

कर्मी, योगी और विद्वानोंके रहनेका स्थान, स्वर्ग, सत्यलोक, वैकुंठ, कैलाश क्षीरसागर भैरव आदि अर्थात् जितना भी यह ब्रह्मांड है, सब मायाका ही स्वरूप है. मायासे पर कार्यब्रह्म हैं और उनसे पर केवल ब्रह्म निवास करते हैं. इसलिए सगुणोपासकोंकी उपासना और उसका फल दोनों मायाका ही रूप बन गया और माया तो अज्ञानका ही स्वरूप है. अज्ञानमें ही कर्म बन्धन है. इसलिए वैकुंठादि लोकोंमें जाने वाले भी मुक्त नहीं हो पाते हैं. और फिर वैकुंठादि लोकोंके अधिष्ठाता ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर भी परब्रह्म परमात्माका ध्यान करते हुए संसारके कार्य (सृष्टि, स्थिति और लय) करते है.

विष्णु भगवान भी अनेक वर्षों तक कठिन तप करते रहते हैं और ब्रह्मा, महादेवादि भी किसीका ध्यान करते ही हैं.

ब्रह्माविष्णुशिवादीनां सेव्यं बीजं परात्परम् ।
अक्षरं परमं ब्रह्म भगवन्तं सनातनम् ।। (ब्र.बै. १.१५.४९)

ब्रह्मा, विष्णु और महादेव आदिकोंका सेव्य और कारण रूप सनातन अक्षर ब्रह्म हैं, जिनके नेत्रके संचालन मात्रसे ही –

चक्षुर्निमीलने तस्य लयं प्राकृतिकं विदुः ।
प्रलये प्राकृताः सर्वे देवाद्याश्च चराचराः ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

लीना धातरि धाता च श्रीकृष्णे नाभिपंकजे ।
विष्णुः क्षीरोदशायी च वैकुंठे यश्चतुर्भुजः ।।
विलीना वामपार्श्वे च कृष्णस्य परमात्मनः ।
रूद्राद्याभैरवाद्याश्च यावन्तश्च शिवानुगाः ।।

(ब्रह्मवै. पु. २.३४.५७.५६)

प्रकृति – मायाका नाश हो जाता है और मायाके नाशके साथसाथ ब्रह्मा, विष्णु (विष्णु भगवान चाहे क्षीर समुद्रमें निवास करने वाले हों, चाहे वैकुंठवासी हों), शंकर, भैरव और जितने भी शिवके अनुचर हैं, सब लयको प्राप्त हो जाते हैं. ब्रह्मा, विष्णु और महादेव ही क्यों –

महाविष्णु सहस्राणि महाशम्भु शतानि च ।
नेत्रभ्रमणमेवास्य तदक्षरं परं पदम् ।। (पद्मपुराण)

जिस ब्रह्मांडमें हम हैं ऐसे सैकडों ब्रह्मांड हैं, अतः उन ब्रह्मांडोंके सैकडों महाविष्णु–आदिनारायण और सैकडों शंभु आदिक देवता और ब्रह्मांड भी अक्षर ब्रह्मके नेत्र संचालन मात्रसे ही लयको प्राप्त हो जाते हैं. फिर इन देवताओंकी उपासना करने वाले सदाके लिए मुक्त कैसे हो सकते हैं ?

अतः अखंड मुक्तिके लिए तो परब्रह्म परमात्मा जो सब देवोंके भी उपास्य हैं, की भक्ति करनी चाहिए. इसके बिना आवागमनका चक्र छूट नहीं सकता है. अपने तप, जप, योग, यज्ञ, भजन और भक्तिसे नारायणादिके उत्तम लोकोंको प्राप्त करके भी वहांके सुख चिरकाल तक भोगनेके बाद –

तस्मादपि च्युतः स्थानात् द्वीपेषु स हि जायते ।
स्वर्गेषु च तथान्येषु भोगान् भुक्त्वा यथेप्सितान् ।। (पद्मपुराण)

Shri Prannath Ji Pustkalay

इप्सित भोगोंको भोगनेके बाद उन स्थानोंसे गिर कर फिर इसी मृत्युलोकके किसी द्वीपमें जन्म लेना पडता है. इससे यह सिद्ध हो गया कि सगुणोपासना भक्तिसे अनन्त और अखंड सुखकी प्राप्ति नहीं होती और न ही संसारिक कर्म बन्धनसे छुटकारा मिल सकता है. इससे भी अधिक दयनीय स्थति निर्गुण–निराकारोपासनाकी है. ईश्वरका सगुण रूप तो चेतन है और सगुणोपासकोंको अखंड मुक्ति नहीं मिलती है, फिर भी मृत्युलोकके सुखोंसे अनन्त गुना अधिक सुख उनको सत्यलोकादिमें प्राप्त हो जाते हैं, भले ही स्थायी नहीं है, किन्तु महान सुख तो है ही. लेकिन निर्गुण और शून्यकी उपासना न ध्यानमें आ सकती है, न वाणीमें, न ही श्रवणमें इस उपासनासे अनन्ताकाशरूप शून्यमें जाकर विलीन हो जानेके अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगता. वेद शास्त्र आदि ग्रन्थोंमें भी बाह्यरूपसे साकार अथवा निराकारका ही उल्लेख है. उनमें जो सूक्ष्म रूपसे साकार अथवा निराकारसे पर पूर्णब्रह्म परमात्माका प्रतिपादन किया गया है, उन वाक्यों पर सामान्य जनकी दृष्टि ही नहीं पहुंच पाती.

जिन जानो शास्त्रोंमें नहीं, है शास्त्रोंमें सब कुछ ।
पर जीव सृष्टि क्यों पावही, जिनकी अकल है तुच्छ ।।

(श्रीतारतम सागर)

जिन महात्माओंकी बुद्धि वहां तक पहुंची, उन लोगोंने साकार–निराकारके स्वरूपको बतलाकर परमात्माके स्वरूपको स्पष्ट कर दिया है.

शुकदेवमुनिने भागवतमें कहा है–

अमनी भगवद्रूपे मया ते अनुवर्णिते ।
उभे अपि न गृह्णन्ति माया सृष्टे विपश्चितः ।।

(भागवत २.१०.३५)

Shri Prannath Ji Pustkalay

हे परीक्षित ! मैंने तुम्हारे सामने साकार और निराकार भगवानके इन दोनों रूपोंका वर्णन किया, किन्तु ये दोनों रूप माया जन्य होनेसे नाशवान हैं. अतः विद्वानलोग इन दोनों रूपोंको नहीं ग्रहण करते. क्योंकि सगुण और निर्गुण दोनों परस्पर सम्बन्धित हैं, और उपाधि संयुक्त हैं. अतः इन दोनोंका नाश अवश्यम्भावी है. इसीलिए शंकराचार्यजीने स्पष्ट कर दिया है कि –

साकारस्य विनाशोऽस्ति निराकारस्य शून्यत्वाच्छून्यस्य चावस्तुत्वादुभयपक्षविभिन्नं वस्तु ज्ञानं मोक्षः (वज्रसूचि)

साकार निराकार दोनों नाशवान हैं. अतः इन दोनोंसे भिन्न सर्वोत्तम तत्त्व है, वही मोक्ष है. श्रीकृष्णजी भी गीता (२–४५) में कहते हैं–

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ।

हे अर्जुन ! वेदमें प्राय सत, रज और तम इन तीनों गुणों और इनसे युक्त सृष्टिका ही वर्णन है. अतः तुम यदि आत्म – कल्याण चाहते हो तो इन त्रिगुणात्मक सृष्टिसे भिन्न परमात्माको जानो. इसमें भी निराकारोपासक लोग ईश्वरको निराकार – निराकार तो कहते रहते हैं, लेकिन प्रछन्नरूपमें उपासना साकारकी करते हैं, यह और भी आश्चर्य है. निराकारोपासक लोग ब्रह्मको ॐ कह कर सम्बोधन करते हैं. और ॐ जापसे ही अपनी मुक्ति मानते हैं. ॐ को निराकार मानते हुए भी कागजमें, पीतलमें अथवा सोना चांदीमें उसका रूप बनाकर अपने घरमें, टोपीमें या कोटमें लगाते भी हैं. मुसलमान लोग भी खुदाको वेचून, बेचगून, बेसबी और बेनिमून मानते है, किन्तु महम्मद साहेबका खुदाके पास जाकर नव्वे हजार हर्फ सुनना मानते हैं और मक्केमें जाकर काले पत्थरको चूमते हैं.

Shri Prannath Ji Pustkalay

फिर भी खुदाको निराकार ही मानते हैं. और भी –

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते ।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ।।

(मुण्डकोपनिषद् २.२.४)

इस श्रुतिने ॐ को धनुष, आत्माको वाण और ब्रह्मको लक्ष्य बताया है. वाणकी तरह तन्मय होने पर ही ब्रह्मरूप लक्ष्यको प्राप्त किया जा सकता है. इस प्रकार प्रणव (ॐ) आत्माको ब्रह्म तक पहुंचानेका साधन मात्र है स्वयं ब्रह्म नहीं है. वेहद भूमिमें प्रणवका भी स्थान है. वहांसे जीव संसारके लिए नियत किए जाते हैं. महाप्रलयमें सभी जीव प्रणवको प्राप्त होते हैं. पुनः सृष्टि होने पर वे कर्मके फल (बन्धन) बाकी रहनेसे संसारमें आते हैं. इसलिए प्रणवको भी कहकर उसका महत्व ही बढाया है. अतः ॐकारको पर–ब्रह्मके रूपमें स्वीकार करना भी समझदारी नहीं है.

इसलिए शंकराचार्यजीने प्रत्येक सम्प्रदायके सिद्धांतोंका विवेचन करते हुए लिखा है कि –

नाना स्वीयमतान्त – पटवो मायान्धकारावृत्ताः
सांख्यावैष्णववैदिकाविधिपराः–संन्यासिनः–स्नातकाः ।
सौरा नित्यपराः प्रपंचनिरता बौद्धाजिना श्रावकाः
एते कष्टरताः क्रियापथगतास्ते तत्त्वतो वंचिताः ।।
कौलाः पाशुपता महाव्रतधरा काला मुखा जंगमाः ।
गाणेशाः सकलेष्ठदं गणपतिं ध्यायन्ति चाहर्निशम् ।।
शाक्ताः कौलकुलाचधर्मनिरताः कापालिकाः शांभवाः ।
एतेऽन्या हुतमन्त्रतन्त्रनिरतास्ते तत्त्वतो वंचिताः ।।
वेदान्ता बहुतर्क–कर्कशमति – ग्रस्ताः परंमायया ।
भेदाः तर्ककलाकुलाहतधियो द्वैतेति वैशेषिकाः ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

अन्ये भेदरता विवादकलहास्ते तत्त्वतो वंचिताः ।
तस्मात्सिद्धमतं स्वभासकमयं धीरः परं संश्रयेत् ।।

(वज्रसूचि)

मायाके अन्धकारसे घिरे हुए अपने अपने मतको पुष्ट करनेमें चतुर सांख्यदर्शनवाले, वैष्णव, वेदके जाननेवाले, मीमांसक, संन्यासी, उदासी, ब्रह्मचारी, जैन, बौद्ध, श्रावक आदि जितने भी हैं और ब्रह्म प्राप्तिके लिए कष्ट उठा रहे हैं, सब परमात्म तत्त्वसे खाली हैं. कौल, शैव, महाव्रती, योगी, जंगम, गणेशके पूजनेवाले शक्तिके उपासक, कौलाचार्यके मानने वाले कपाली, अघोरी और यन्त्र, तन्त्र, मन्त्रको सिद्ध करने वाले सभी अध्यात्म मार्गसे अनभिज्ञ हैं.

मायाके प्रभावसे कर्कश (कठिन) तर्कमें निमग्न वेदान्ती, तर्कके ही बल पर पदार्थोंकी सिद्धि करने वाले वैशेषिक–नैयायिक और इनके अतिरिक्त भेदभावमें निमग्न कलह प्रिय जितने भी गच्छ, इष्ट, दीन, आचार–विचार वाले सिद्धांतवादी हैं, सभी परमार्थ तत्त्वसे रहित हैं. इसलिए धीर और बुद्धिमान पुरुषोंका कर्तव्य है कि सच्चिदानंद पूर्णब्रह्म परमात्माकी शरण ग्रहण कर मुक्ति प्राप्त करें.

शंकराचार्यजीके इस कथन से स्पष्ट हो गया कि संसारके सभी मतमतान्तर अज्ञानमें ही गोते खा रहें हैं. इनको परमात्माके स्वरूपकी पहचान नहीं है. अतः इनके सिद्धांतानुसार भक्ति करनेसे यह आत्मा कभी मुक्त नहीं हो सकती, इसलिए इस अज्ञानान्धकार चतुर्दश भुवनात्मक संसारसे पर साकार और निराकारसे भी पर शुद्ध बुद्ध सच्चिदानंद शुद्ध साकार पूर्णब्रह्म परमात्माको जानकर अनन्य भक्ति करनेसे ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है.

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

उस परात्पर पूर्णब्रह्मको देख लेनेके बाद हृदयकी अज्ञानान्धकारमयी गांठ खुल जाती है, सब संशय दूर हो जाते हैं और कर्म–जाल भी नष्ट हो जाते हैं.

यस्तु विज्ञानवान् भवति स मनस्कः सदाशुचि ।
स तु तत्पदमाप्नोति यस्माद्भूयो न जायते ।। (देवीभागवत)

जो विज्ञानवान सदा पवित्र रहकर एकाग्र मनसे उस प्रभुकी अनन्य भक्ति करता है, वह संसारमें फिर जन्म धारण नहीं करता है. त्रिपाद्विभूति नारायणोपनिषद्में लिखा है कि –

सर्वोपायान् परित्यज्य भक्तिमाश्राय
भक्ति निष्ठो भव भक्ति निष्ठो भव ।
भक्त्या सर्वा सिद्धयः सिद्ध्यन्ति भक्त्यासाध्यं न किंचदस्ति ।।

सब उपायोंको छोड़कर भक्ति करो, क्योंकि भक्तिसे कुछ भी असाध्य नहीं है. इसीलिए श्री कृष्णजी भागवतमें कहते हैं –

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्म प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा स्वपाकानपि संभवान् ।।

श्रद्धालु आत्मावाले मुझे एक (केवल) भक्तिसे ही वशीभूत कर सकते हैं. चांडाल योनिमें पैदा होनेवाले मनुष्यको भी मेरी भक्ति पवित्र कर देती है. छत्रसाल ! भक्तिका स्वरूप मैं तुम्हें पहले बता चुका हूं. माधुर्य भावसे प्रेमलक्षणाभक्ति करने वाले मुक्त पुरुषोंकी आत्मा परमधाममें जाकर सच्चिदानंद परमात्माकी आनन्द शक्तिके रूपमें सदा निवास करती है. आनन्दरूपा शक्तिका स्वरूप होनेके कारण आत्मा परमात्माका अविच्छिन्न प्रवाहित अगाध आनन्द–सागरके आनन्दका अनुभव सदा करती रहती है. और परमात्माकी

Shri Prannath Ji Pustkalay

शक्ति होनेके कारण सदा उस परमात्माके अंग–संग ही रहती भी है. क्योंकि शक्ति और शक्तिमानमें भिन्नता नहीं होती. लेकिन आनन्दानुभवके लिए उसका स्वरूप पृथक् रहता है. उस शक्तिका शरीर भी– **हानोपादानरहिता नैव प्रकृतिजाः क्वचित्.** हानि और उपादानसे रहित.दिव्य, तेजोमय और आत्मारूप ही है. वह परमात्माके आनन्द अंगका स्वरूप ही है. मायाजन्य नहीं है.

आनन्दरूपा सामग्री नित्याऽखंडा हि वर्तते ।
न माया गुणसंसर्गः कदाचित् कुत्रचिद् प्रिये ।।

वहांकी सामग्री नित्य और अखंड है. वहां मायाके गुणका लेशमात्र संसर्ग भी नहीं है. किन्तु **आनन्दमात्रकरपाद मुखोदरादिः,** उनका हाथ, पैर, मुख, उदर सब आनन्दरूप हैं.

निष्कर्ष यह है कि परमधाममें पूर्णब्रह्म परमात्मा अपनी श्यामा नामकी शक्तिके साथ निवास करते हैं. वही परात्पर सब कारणोंके कारण ईश्वरके भी मालिक पतियोंके पति और सबके आराध्य हैं. उनकी उपासना करनेवाली आत्मा उस परमधाममें जाकर दिव्य शरीर धारण कर सदा परमात्माकी सेवामें तत्पर रहती हैं. वहां पर –

ततः शुद्ध चिदानन्द ब्रह्मविलासानन्दाश्चानन्त परमानन्द विभूतयश्चानन्त वैकुंठाश्चानन्त, परमानन्द समुद्रादयः सन्त्येव.
(त्रिपाद्विभूति नारोयणोपनिषद्)

वहां पर शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्माके विलासका आनन्द परमानन्द अनन्त ऐश्वर्य, अनन्त वैकुंठका आनन्द, सुख और परमानन्दका असीम पारावार वर्तमान है. वहां पर पहुंच कर उस असीम सुख भोगनेवाली आत्माओंको शास्त्रकारोंने नित्य मुक्त ब्रह्मसृष्टि, आप्तकाम, ब्रह्ममुनि, परमहंस आदि नामोंसे याद किया

Shri Prannath Ji Pustkalay

है. वहां इच्छा मात्रसे ही सब पदार्थ उपस्थित हो जाते हैं. यद्यपि वहां किसी पदार्थके लिए इच्छा होती नहीं है.

मुमुक्षु आत्माओंको अक्षरब्रह्मके अन्तःकरण रूप सत्स्वरूपमें नित्य मुक्ति प्राप्त होगी. वहांका सुख भी अनन्त और अखंड है. केवल अन्तर इतना है कि वह पूर्णब्रह्म परमात्माका सुख न होकर उनके सदंश अक्षरब्रह्मका सुख है. सांसारिक जीव यदि ब्रह्मसृष्टियोंके बताए हुए मार्ग पर चलेंगे और पूर्णब्रह्म परमात्मा पर पूर्ण विश्वास रख कर प्रेमलक्षणा भक्तिकी आराधना करेंगे तो उनको भी अपने-अपने विश्वास और भक्तिके आधार पर अक्षर ब्रह्मके अन्तःकरणरूप केवल ब्रह्म, सबलिकब्रह्म और अव्याकृतब्रह्मके स्थानमें नित्य मुक्ति प्राप्त होगी जो सदाकाल अखंड रहेगी. और वे जीव भी सर्वदाके लिए जन्म, मरण, जरा और व्याधि रूप दुःखोंसे छुटकर ब्रह्मानंद रसके भोक्ता बने रहेंगे. इसलिए अखंड मुक्ति प्राप्त करनेके इच्छुक भक्तोंको चाहिए कि वे पतिव्रता स्त्रीके समान अनन्य भावसे प्रेममें तन्मय होकर प्रभुकी आराधना करें, जिससे नित्य मुक्ति प्राप्तकर ब्रह्मानन्द रसका सदैव पान करते रहें.

[मुक्तिके स्वरूपका विशेष विस्तार देखना हो तो विराटपटदर्शनका अवलोकन कीजिए.]

छत्रसाल – सद्गुरु ! आपकी महती कृपा है. आपके गम्भीर किन्तु हृदयस्पर्शी ज्ञानामृतसे मेरी आत्मा तृप्त हो गई. आपके उपदेशसे परमात्माका दिव्य स्वरूप और उनको प्राप्त करनेका सुगम मार्ग भी मैंने जान लिया. श्री निजानन्द सम्प्रदाय – श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म किसी मनुष्य द्वारा संचालित नहीं है. यह परमात्माके आनन्द स्वरूप श्री निजानंद स्वामी द्वारा उपदिष्ट मार्ग है. इस मार्ग

Shri Prannath Ji Pustkalay

पर चलने वाले मनुष्योंको संसारमें निवास करते हुए किन–किन नियमोंका पालन करना चाहिए और उनकी पद्धति क्या है ? कृपापूर्वक कहनेकी दया कीजिये.

स्वामीज़ी – जिन नियमोंके पालन करनेसे ऐहिक और पारलौकिक सुखोंकी प्राप्ति हो सकती है. उन नियमोंको और ब्रह्मसृष्टियोंकी पद्धतिको ध्यानपूर्वक सुनो !

१. आत्मकल्याणेच्छुक भक्तोंको चाहिए कि वे भक्ति–चिह्न कंठी, मालाको अवश्य धारण करें और स्नानादिके बाद तिलक अवश्य लगावें. हिन्दुत्वके चिह्न चोटी, यज्ञोपवीतका धारण करना भी आवश्यक है.

२. पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण प्रदत्त श्री तारतम महामन्त्रका १०८ बार अथवा २१ बार जाप अवश्य करना चाहिए. प्रातः साय संक्षिप्त रूपमें संध्या वंदन – पूजापाठ भी अवश्य करनी चाहिए.

३. आचार–विचारका पालन करना मानसिक शुद्धिका प्रबल सहायक है, अतः इससे कभी असावधान नहीं रहना चाहिए.

४. अभक्ष्य और अपेय पदार्थोंसे सदा पृथक रहना चाहिए.

५. परद्रव्यापहरण और परस्त्री गमन महान पाप है, इनसे सदा सावधान रहना चाहिए.

६. एक पत्नीव्रतका पालन करते हुए भी जहां तक संभव हो ब्रह्मचर्य धारण करना आवश्यक है, किन्तु निवृत्ति मार्गके अनुसरण करनेवालेको आजीवन ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करना चाहिए.

७. श्रीकृष्ण प्रणामी धर्मके पथका अनुसरण करनेवाले प्रत्येक व्यक्तिको चाहिए कि वे सत्संग, सदाचार और सत्याचरणको अपना

Shri Prannath Ji Pustkalay

मुख्य कर्तव्य समझे.

८. शास्त्र और गुरुके उपदेश पर पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिए.

९. अपने इष्टदेवकी उपासना अनन्य भावसे करनी चाहिए. लेकिन दूसरेके उपास्य देवोंकी निन्दा भी कभी नहीं करनी चाहिए.

१०. प्रत्येक सद्ग्रन्थोंको आदरकी दृष्टिसे देखना चाहिए, क्योंकि सभी धार्मिक ग्रन्थोंसे उत्तम शिक्षा मिलती है.

११. धर्म प्रचारका उत्तरदायित्व गृहस्थ और सन्त दोनों पर है. इसके लिए सदा प्रस्तुत रहना चाहिए.

१२. मनुष्य मात्रसे भ्रातृत्व और सभ्यताका व्यावहार रखना चाहिए, जिससे परस्पर द्वेष और घृणा उत्तपन्न न हो.

१३. मन, वचन और कर्म किसी भी प्रकारसे किसीसे द्वेष भावना नहीं रखनी चाहिए. अनजानपनमें भी यदि किसीको कुछ हानि हो जाय तो उसीसे अथवा परमात्मासे क्षमा मांगनी चाहिए.

१४. श्रीमत्तारतम सागर ग्रन्थमें जिन कर्तव्य कर्मोंके लिए विधि अथवा निषेधका उल्लेख नहीं है उनके लिए शास्त्रीय मर्यादाका पालन करना आवश्यक है.

१५. धार्मिक ज्ञानके प्रचारमें किसीसे व्यर्थ वादविवाद नहीं करना चाहिए. दुराग्रहीको समझानेकी चेष्टा भी व्यर्थ ही है.

१६. धार्मिक तीर्थ और व्रतोंका यथा शक्ति अवश्य पालन करना चाहिए.

१७. भक्ति और ज्ञानकी दृष्टिसे मनुष्य मात्रके साथ भ्रातृत्व सम्बन्धका पालन करते हुए भी वर्ण व्यवस्थाका पालन करना आवश्यक है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

१८. धर्मके साथ गुरु और सन्त सेवाका गहरा सम्बन्ध है. अतः इससे कभी मुख नहीं मोडना चाहिए और सुन्दरसाथके साथ भ्रातृ – भावका सम्बन्ध रखना चाहिए.

१९. सत्य और परिश्रमसे उपार्जित अपने धनका कुछ अंश धर्मकार्यमें अवश्य लगाना चाहिए.

२०. श्रीमत्तारतम सागर ग्रन्थको पूर्णब्रह्म परमात्माका स्वरूप जानकर इनकी सेवापूजा करनी चाहिए और इनसे उपदिष्ट आज्ञाका पालन करना परम कर्तव्य समझना चाहिए.

२१. समय – समय पर श्रीमद्भागवतका श्रवण करना अति आवश्यक है.

श्रीनिजानन्द संप्रदाय यानि ब्रह्मसृष्टियोंकी पद्धति –

छत्रसाल ! एक बार पार्वतीने महादेवजीसे पूछा था–

पुनर्ब्रूहि महादेव यथा स्याद्भजनोदयः ।
कं वा गुरुमुपासीत कथं ज्ञानोदयो भवेत् ।।

हे महादेवजी ! जिस प्रकार हृदयमें भजन करनेका भाव पैदा होता है, उसका उपाय कहिये और गुरु किसको बनाना चाहिए तथा ज्ञानकी प्राप्ति कैसे होती है ?

शिव उवाच

ब्रह्मानन्दरसज्ञानां ब्रह्मज्ञानवतां सताम् ।
पद्धतिं ब्रह्मसृष्टीनां वक्ष्यामि श्रृणु सुन्दरि ।।
गोत्रमुक्तं चिदानन्दं ब्रह्मानन्दो हि सद्गुरुः ।
शिखा ज्ञानमयी प्रोक्ता सूत्रमक्षररूपकम् ।।
किशोरी परमं चेष्टं सेवनं पुरुषोत्तमम् ।
पातिव्रत्यमनन्यत्वं साधनं समुदाहृतम् ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

वृन्दावनं नित्यमुक्तं विलाससुखसंज्ञकम् ।
जाप्यं च युगलं नाम तारतम्यमनुस्मृतः ।।
ब्रह्मविद्या परादेवी देवो ब्रह्मसनातनम् ।
शाला गोलोक इत्युक्तो द्वारमूर्ध्वमुदाहृतम् ।।
स्वसंवेद्यः समादिष्टः फलं नित्यविहारकम् ।
दिव्यब्रह्मपुरं धाम परात्परमुदाहृतम् ।।
सद्गुरोश्चरणं क्षेत्रं सर्वं शुद्धिकरं परम् ।
यमुना संज्ञकं तीर्थं मननं प्रेमलक्षणम् ।।
श्रीमद्भागवतं प्रोक्तं श्रवणं सारमद्भुतम् ।
ऋषिः प्रोक्तो महाविष्णुर्ज्ञानं जाग्रत्स्वरूपकम् ।।
आनन्दाख्यं कुलं प्रोक्तं नित्ये धाम्नि प्रकीर्तितम् ।
संप्रदायश्चिदानन्दो निजानन्दैः प्रकाशितः ।।
एवं पद्धतिराख्याता पुरुषोत्तमसंज्ञिका ।
वर्तितव्यं ततो भद्रे ! साधनैरात्मलब्धये ।।

संस्कृतसे अनभिज्ञ भक्तोंको हिन्दी भाषाकी पद्धति याद कर लेनी चाहिए. भाषा पद्धतिः –

सतगुरु ब्रह्मानन्द हैं, सूत्र है अक्षर रूप ।
शिखा सदा इनतें परे, चेतन चिद् जो अनूप ।।
सेवन है पुरुषोत्तम, गोत्र चिदानन्द जान ।
परम किशोरी इष्ट है, पतिव्रता साधन मान ।।
श्रीजुगलकिशोरको जाप है, मन्त्र तारतम सोय ।
ब्रह्म विद्या देवी सही, पुरी नवतन मम जोय ।।
अष्टोत्तर सौ पख शाखा सही, शाला है गौलोक ।
सतगुरु चरण को क्षेत्र है, जहां जाय सब शोक ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

सुख विलास नित्य वृन्दावन, ऋषि महाविष्णु हैं जोय ।
वेद हमारो स्वसम है, तीरथ जमुना सोय ।।
शास्त्र श्रवण श्रीभागवत, बुद्धि जागृत को ज्ञान ।
कुल मूल हमारो आनन्द है, फल नित्य विहार प्रमान ।।
दिव्य ब्रह्मपुर धाम है, घर अक्षरातीत निवास ।
निजानन्द है संप्रदाय, ये उत्तर प्रश्न प्रकाश ।।

छत्रसाल ! ब्रह्मसृष्टियोंकी पद्धति और सांप्रदायिक नियम मैंने तुमको सुनाया. अब मैं तुमको प्रकटवाणी सुनाता हूं. प्रकटवाणी प्रत्यक्ष वाणी है. इसके समझनेसे वेद–शास्त्र और पुराणोंका निष्कर्ष मालूम हो जायेगा. इस प्रकट वाणीसे मायाकी उत्पत्ति कैसे और क्यों हुई ? इसका मूल कारण व्रज और रास लीलाके वास्तवी तथा प्रतिभासिकीका भेद एवं व्रज तथा रासमें लीला करने वाले श्रीकृष्ण तथा गोपियोंके स्वरूप तत्त्वकी जानकारी पूर्ण रूपसे प्राप्त हो जायेगी. ब्रह्मसृष्टि, ईश्वरीसृष्टि और जीवसृष्टिका त्रिविध भेद और इनके जागृत होनेका प्रकार तथा ब्रह्मांडके अखंड होनेका प्रकार मालूम हो जायेगा. श्री निजानन्द स्वामीका स्वरूप और उनके प्रकट होनेका कारण एवं ब्रह्म प्राप्तिका रहस्य ज्ञात हो जायेगा. मायाकी वास्तविकता, तारतम्य ज्ञानका महत्त्व और इन्द्रावतीजीके स्वरूपका साक्षात्कार हो जायेगा. कालमाया, योगमाया और जागनी रासका रहस्य समझमें आयेगा. परमधाम और परमात्माके स्वरूपकी जानकारी हो जायेगी. अर्थात् जिन ज्ञानतत्त्वोंका वर्णन मैंने तुम्हारे सामने पृथक–पृथक किया है, उन सबका निष्कर्ष श्रीमत्तारतम सागर ग्रन्थके एक ही प्रकरण इस प्रगट वाणीमें तुमको मिलेगा. छत्रसाल ! इसको ध्यान पूर्वक सुनो और इस पर मनन करो. क्योंकि यह

Shri Prannath Ji Pustkalay

परमात्माकी दी हुई पांच शक्तियों (तारतम्यज्ञान, श्यामाजीकी आत्मा, पूर्णब्रह्म परमात्माका आवेश, परमात्माकी आज्ञा, अक्षरकी बुद्धि) की प्रेरणासे प्रकट हुई है. इसको समझकर इसके अनुसार परमात्माके स्वरूपको जानकर प्रेम–लक्षणा भक्ति करने वाले उस परमात्माको प्राप्त करनेमें समर्थ हो सकते हैं. अतः इसको ध्यान पूर्वक सुनो–

अब लीला हम जाहेर करें, ज्यों सुख सैंयां हिरदे धरे ।
पीछे सुख होसी सबन, पसरसी चौदे भवन ।। १
अब सुनियो ब्रह्मसृष्टि विचार,
जो कोई निज वतनी सिरदार ।
अपने धनी श्री स्यामा स्याम, अपना वासा है निजधाम ।। २
सोई अखंड अक्षरातीत घर, नित्य वैकुंठ मिने अक्षर ।
अब एह गुझ करूं प्रकास, ब्रह्मानन्द ब्रह्मसृष्टि विलास ।। ३
ए बानी चित दे सुनियो साथ,
कृपा कर कहें श्री प्राणनाथ ।
ये किव कर जिन जानो मन,
श्री धनीजी ल्याये धामसे वचन ।। ४
सो कहती हूं प्रकट कर, पट टालूं आडा अन्तर ।
तेज तारतम जोत प्रकास, करूं अन्धेरी सबको नास ।। ५
अब खेल उपजे के कहूं कारन, ए दोउ इच्छा भई उत्पन्न ।
बिना कारन कारज नहीं होय, सो कहूं याके कारन दोय ।। ६
एह उपजाई हमारे धनी, सो तो बातें हैं अति घनी ।
नेक तामें करूं रोसन, संसय भान देऊं सबन ।। ७
अब सुनियो मूल वचन प्रकार,
जब नहीं उपज्यो मोह अहंकार ।
नाहीं निराकार नाहीं सुन, नाहीं निरगुन ना निरंजन ।। ८

Shri Prannath Ji Pustkalay

ना ईस्वर ना मूल प्रकृति, ता दिनकी कहूं आपा बीती ।
निज लीला ब्रह्म बाल चरित्र, जाकी इच्छा मूल प्रकृत ।। ९
नैनके पाव पलमें इसारत, कै कोटि ब्रह्मांड उपजत खपत ।
इत खेल पैदा इन रवेस, त्रिलोकी ब्रह्मा विष्णु महेस ।। १०
कै विध खेले यों प्रकृत, आप अपनी इच्छा सों खेलत ।
या समय श्री वैकुंठ नाथ, इच्छा दरसन करने साथ ।। ११
अक्षर मन उपजी ए आस, देखों धनीजी को प्रेम विलास ।
तब सखियो मन उपजी एह, खेल देखें अक्षरका जेह ।। १२
तब हम जाय पियासों कहीं, खेल अक्षरका देखें सही ।
जब यह बात पियाने सुनी, तब बरजे हांसी करने घनी ।। १३
मने किये हम को तीन बेर, तब हम मांग्या फेर फेर फेर ।
धनी कहे घरकी ना रहेसी सुध,
भूलसी आप ना रहेसी ए बुध ।। १४
तो मने करत हैं हम, हम को भी भूलोगे तुम ।
तब हम फेर धनी सों कहा, कहा करसी हमको माया ।। १५
तब हम मिलके कियो विचार,
कहा एक दूजी को हुजो हुसियार ।
खेल देखनको हम पियासों कही,
तब हम दोऊ पर आज्ञा भई ।। १६
ये कहे दोऊ भिन्न भिन्न, खेल देखन के दोऊ कारन ।
उपज्यो मोह सुरत संचरी, खेल हुआ माया विस्तरी ।। १७
इत अक्षरको बिलस्यो मन, पांच तत्त्व चौदे भुवन ।
यामें महाविष्णु मन मनथें त्रिगुन,
ताथें थिर चर सब उत्पन्न ।। १८

Shri Prannath Ji Pustkalay

या विध उपज्यो सब संसार, देखलावने हम को विस्तार ।
जो आग्या भई हम पर, तब हम जान्या गोकुल घर ।। १९
ज्यों नींदमें देखिये सुपन, यों उपजे हम व्रज वधू जन ।
उपजत ही मन आसा घनी,
हम कब मिलसी अपने धनी ।। २०
जेती कोई हैं ब्रह्मसृष्टि, प्रेम पूरन धनी पर दृष्टि ।
कंस के बन्ध वसुदेव देवकी,
इत आई सुरत चतुरभुजकी ।। २१
सुरत विष्णुकी चतुरभुज जोय, दियो दरसन वसुदेवको सोय ।
पीछे फिर कहके हकीकत,
अब दो भुजा की कहूं विगत ।। २२
मूल सुरत अक्षरकी जेह, जिन चाह्या देखों प्रेम सनेह ।
सो सुरत धनीको ले आवेस, नन्द घर कियो प्रवेस ।। २३
दो भुजा सरूप जो स्याम, आतम अक्षर जोस धनी धाम ।
ए खेल देख्या सैयां सबन,
हम खेले धनी भेले आनन्दघन ।। २४
बाल चरित्र लीला जोबन, कई विध सनेह किये सैयन ।
कई लिए प्रेम विलास जो सुख, सो केते कहूं या मुख ।। २५
ए कालमायामें विलास जो करे, सो पूरी नींदमें सब बिसरे ।
पूरी नींद का जो सुपन, कालमाया नाम धराया तिन ।। २६
तब धामधनिये कियो विचार, ए दोऊ मगन होय खेलें नरनार ।
मूल वचनकी नाहीं सुध, ए दोऊ खेलें सुपनेकी बुध ।। २७
ए बात धनी चित सों ल्याय, आधी नींद तब दई उडाय ।
अग्यारे बरस और बावन दिन, ता पीछे पहुंचे वृन्दावन ।। २८

Shri Prannath Ji Pustkalay

तहां जाय के बेन बजाई, सखियां सबे लई बुलाई ।
तामसियां राजसियां चलीं,
स्वातसियां सरीर छोडके मिलीं ।। २९
और कुमारिका व्रज वधू संग जेह, सुरत सबे अक्षर की एह ।
जो व्रत करके मिली संग स्याम,
मूल अंग याके नहीं धाम ।। ३०
बेन सुनके चलीं कुमार, भवसागर यों उतरी पार ।
इनकी सुरत मिली सब सखियों मांहि,
अंग याके रास में नांहि ।। ३१
या विध मुक्ति इनोंकी भई, कुमारिका सखियां जो कही ।
ए जो अग्यारे बरस लों लीला करी,
कालमाया तितहीं पर हरी ।। ३२
कछुक नींद कछुक जाग्रत भए, जोगमायाके सिनगार जो कहे ।
जोगमायामें खेले जो रास, आनन्द मन आनी उलास ।। ३३
जोगमाया में खेल जो खेले, संग जोस धनी जी के भेले ।
जोगमाया में बाढ्यों आवेस,
सुध नहीं दुख सुख लवलेस ।। ३४
फेर मूल सरूपें देख्या तित, ये दोऊ मगन हुए खेलत ।
जब जोस लियो खेंचकर, तब चित्त चौंक भई अक्षर ।। ३५
कौन बन कौन सखियां कौन हम, यों चौक के फिरी आतम ।
रास आया मिने जाग्रत बुध, चुभ रही हिरदे में सुध ।। ३६
कै सुख रास में खेले रंग, सो हिरदे में भयो अगंभ ।
या विध रास भयो अखंड,
थिर चर जोगमायाको ब्रह्मांड ।। ३७

Shri Prannath Ji Pustkalay

तब इत भये अंतरध्यान, सब सखियां भई मृतक समान ।
जीव न निकसे बांधी आस,
करने धनीजी सों प्रेम विलास ।। ३८
विरह सैयों ने कियो अत,
धनी दियो आवेस फेर आई सुरत ।
तब सैयों को उपज्यो आनन्द,
सब विरहको कियो निकन्द ।। ३९
आया सरूप कर नयें सिनगार,
भजनानन्द सुख लियो अपार ।
दोऊ आतम खेले मिने खांत, सुख जोस दियो कई भांत ।। ४०
कई विरह विलास लिए मिने रात,
अंग आनन्द भयो जोलों प्रात ।
रास खेलके फिरे सब एह,
साथ सकल मन अधिक सनेह ।। ४१
पीछे जोगमाया को भयो पतन, तब नींद रही अक्षर सैयन ।
व्रजलीला सों बाधी सुरत, अखंड भई चढ आई चित्त ।। ४२
अक्षर चित्तमें ऐसो भयो, ताको नाम सदासिव कहयो ।
व्रज रास दोऊ ब्रह्मांड, ए ब्रह्म लीला भई अखंड ।। ४३
व्रज रास लीला दोऊ मांहि, दुख तामसियों देख्या नांहि ।
प्रेम पिया सों ना करे अन्तर, तो ए दुख देखे क्यों कर ।। ४४
कछुक हमको रह्यो अन्देस, सो राखे नहीं धनी लव लेस ।
ता कारन एह भयो सुपन, हुए हुकमें चौदे भवन ।। ४५
कालमाया को ए जो इंड, उपज्यो और जाने सोई ब्रह्मांड ।
ए तीसरा इंड नयां भया जो अब, अक्षरकी सुरतका सब ।। ४६

Shri Prannath Ji Pustkalay

याही सुरत की सब सखियां भई,
प्रतिबिम्ब वेदऋचा जो कही ।
जाको कह्यो उद्धव ज्ञान जोगारंभ,
सो क्यों माने प्रेमलीला प्रतिबिम्ब ।। ४७
जो उद्धव ने दई सिखापन, सो मुख पर मारे फेर वचन ।
याही विरहमें छोडी देह, सो पहुंची जहां सरूप सनेह ।। ४८
अक्षर हिरदे रास अखंड कह्यो,
ए प्रतिबिंब साथ तहां पहुंचियो ।
ए प्रतिबिंब लीला भई जो इत,
सो कारन ब्रह्मसृष्टिके सत ।। ४९
जो प्रकट लीला न होवे दोय,
तो असल नकल की सुध क्यों होय ।
ता कारन एह भई नकल, सुध करने संसार सकल ।। ५०
सारे अरथ तब होवे सत, जो प्रगट लीला दोऊ होवे इत ।
याही इंडमें श्रीकृष्णजी भये,
सो अग्यारे दिन व्रज मथुरा रहे ।। ५१
दिन अग्यारे ग्वाला भेष, तिन पर नहीं धनीको आवेस ।
सात दिन गोकुल में रहे, चार दिन मथुरा के कहें ।। ५२
गज मल्ल कंसको कारज कियो, उग्रसेनको टीका दियो ।
कारागृहमें दरसन दियो जिन, आये छुडाये बन्ध थें तिन ।। ५३
वसुदेव देवकी के लोहे भान, उतारयो भेष कियो स्नान ।
जब राज बागेको कियो सिनगार,
तब बल पराक्रम न रह्यो लगार ।। ५४
आये जरासिंध मथुरा घेरी सही,
तब श्रीकृष्णजीको अति चिंता भई ।
यों याद करते आया विचार,
तब कृष्ण विष्णु मय भये निराधार ।। ५५

Shri Prannath Ji Pustkalay

तब वैकुंठ में विष्णु ना कहे,
इत सोलह कला सम्पूरन भये ।
या दिन थें भयो अवतार, ए प्रगट वचन देखो विचार ।। ५६
सिसुपालकी ज्योति वैकुंठ गई,
समाई श्रीकृष्णजीमें तित न रही ।
आयुध अपने मंगाय के लिए,
कई विध युद्ध असुरनसे किये ।। ५७
मथुरा द्वारका लीला कर, जाए पहुंचे विष्णु वैकुंठ घर ।
अब मूल सखियां धामकी जेह,
तिन फेर आए धरी इत देह ।। ५८
उमेदां तामसियों रही तिन बेर,
सो हम देखन को आइयां फेर ।
इन ब्रह्मांडको यह कारन, सुनियो आतम के श्रवन ।। ५९
रास खेलते उमेदां रहियां तित, सो सब ब्रह्मसृष्टियां आइयां इत ।
यामें सुरत आई श्री स्यामाजीकी सार,
मत्तु मेहेता घर अवतार ।। ६०
कुंवरबाई माताको नाम, उत्तम कायस्थ उमरकोट गाम ।
आए श्रीदेवचन्द्रजी नौतनपुरी,
सुख सबनको देने देह धरी ।। ६१
इन इत आए करी बड़ी खोज,
चाहें धनीजीको मूल संयोग ।
अंग मूल उपजी एह द्रष्ट,सास्त्र सब्द खोजे कई कष्ट ।। ६२
चौदे बरस लों निष्ठा बन्ध, वचन ग्रहे सारी सनन्ध ।
कई जप तप किये व्रत नेम, सेवा सरूप सनेह अति प्रेम ।। ६३

Shri Prannath Ji Pustkalay

कई कसनी कसी अति अंग, प्रेम सेवा में न कियो भंग ।
कई कसौटी करी दुलहिन, सो सब कारन हम सैंयन ।। ६४
पियाजी किए अति प्रसन्न, तीन बेर दिए दरसन ।
तारतम बात वतन की कही,
आप धामधनी सब सुध दई ।। ६५
धरयो नाम बाई सुन्दर, निज वतन दिखायो घर ।
इत दया करी धनी, अन्दर आय के बैठे धनी ।। ६६
दियो जोस खोले दरबार, देखाया सून्य के पार के पार ।
ब्रह्मसृष्टि मिने सुन्दरबाई, ताको धनिए दई बड़ाई ।। ६७
सब सैंयों मिने सिरदार, अंग वाही की हम सब नार ।
श्रीधाम धनीजीकी अरधांग,
सब मिल एक सरूप एक अंग ।। ६८
श्री धाम लीला वैकुंठ अखंड,
व्रज रास लीला दोऊ ब्रह्मांड ।
ए सब हिरदे में चढ़ आए,
ज्यों आतम अनुभव होत सदाए ।। ६९
अब ए केता कहूं प्रकार,
निजधाम लीला नित बड़ो विहार ।
अक्षरातीत लीला किसोर, इत सैयां सुख लेवें अति जोर ।। ७०
मोहोल मन्दिर को नाहीं पार,
धाम लीला अति बड़ो विस्तार ।
इन लीला की काहूं न खबर, आज लगे बिना इन घर ।। ७१
ब्रह्मसृष्टि बिना न जाने कोय,
ए सृष्टि ब्रह्मथें न्यारी न होय ।
सो निध ब्रह्मसृष्टि लाइयां इत,
ना तो ए लीला दुनियांमें कित ।। ७२

Shri Prannath Ji Pustkalay

अब ए बानी धनी मुखथें कहे,
सो एह दुनियां किन विध लहे ।
गांगजीभाई मिले इन अवसर,
तिन ये बानी लई चित्त धर ।। ७३
कर विचार पूछे वचन, नीके अरथ लिए जो इन ।
जब समझाई पार की बान, तब धनीजीकी भई पहचान ।। ७४
अपने घर लियो बलाय, सेवा करी बहुत चित लाय ।
सनेह सों सेवा करी जो घनी,
पहिचान के अपना धामधनी ।। ७५
तब श्रीमुख वचन कहे प्राणनाथ,
ढूंढ काढ़ना अपना साथ ।
माया मिने आई सृष्टि ब्रह्म, सो बुलावन आए हैं हम ।। ७६
हम आए हैं इतने काम, ब्रह्मसृष्टि लेने घर धाम ।
तब गांगजीभाई पाए अचरज मन,
कौन मानसी पार के वचन ।। ७७
कहया ब्रह्मसृष्टि क्यों मिलसी,
चाल तुम्हारी क्यों चलसी ।
मोहजल पूर तीखा अति जोर,
नख अंगुरी को लेय जाय तोर ।। ७८
तरंग बडे मेर से होय, इत खड़ा रहने ना पावे कोय ।
लहरें पर लहरें मारे घेर, माहें देत भमरियां फेर ।। ७९
आड़े टेढ़े माहे बेहेवट, विकराल जीव माहें विकट ।
दुख रूपी सागर निपट, किनार बेट ना काहूं निकट ।। ८०
ऊंचा नीचा गेहेरा गूदवाय, कठिन समया इत पहुंचा आय ।
हाथ ना सूझे सिर ना पाय,
इन अंधेरीसे निकस्यो ना जाय ।। ८१

Shri Prannath Ji Pustkalay

चढ़यो मायाको जोर अमल, भूलियां आप माहें घर छल ।
ना सुध धनी ना मूल अकल, इन मोहजलको ऐसो बल ।। ८२
वचन बेहदके पार के पार, सो क्यों माने हदको संसार ।
त्रिगुण महाविष्णु मोह अहंकार,
ए हद सास्त्रों करी पुकार ।। ८३
ब्रह्मसृष्टि भी धरे मोहके आकार,
सो इत आवसी कौन प्रकार ।
तब श्रीधनीजीए कहे वचन, बेहेर दृष्टि होसी रोसन ।। ८४
यह बन्धेज कियो अति जोर, रात मेट के करसी भोर ।
प्रत्यक्ष परवान देसी दरसन, ए लीला चित्त धरसी जिन ।। ८५
साथ कारन आवसी धनी, घर घर बस्ता देसी घनी ।
साथ मांहें इत आरोगसी, विध विधके सुख उपजावसी ।। ८६
अचरा पकड़ पिऊ दिखलावसी,
एक दूजीको प्रेम सिखलावसी ।
ए लीला बढ़सी बिस्तार, साथ अंग होसी करार ।। ८७
तब बानीको करसी विचार, सब मायने होसी निरवार ।
तब आवसी ब्रह्मसृष्टि, जाहेर निसान देखसी दृष्टि ।। ८८
ए बन्धेज कियो उत्तम,
पर धामकी निध सो कही तारतम ।
जिन सेती होवे पहिचान, नजरों आवे सब निसान ।। ८९
तब गांगजी भाई पाये मन उछरंग,
किये करतब अति घने रंग ।
सनेह सों सेवा करी अत, पहिचान के धनी हुए गलित ।। ९०
साथ सों हेत किये अपार, सुफल कियो अपनो अवतार ।
मैं श्री सुन्दरबाईके चरने रहूं,
ए दया मुख किन विध कहूं ।। ९१

Shri Prannath Ji Pustkalay

कहयो ताको इन्द्रावती नाम, ब्रह्मसृष्टि मिने घर धाम ।
मो पर धनी हुये प्रसन्न, सौंपे धामके मूल वचन ।। ९२
आदके द्वार न खुले आज दिन,
ऐसा हुआ न कोई खोले हम बिन ।
सो कुंजी दई मेरे हाथ, तूं खोल कारन अपने साथ ।। ९३
मोहे करी सरीखी आप, टालने हम सबोंकी ताप ।
आतम संग भई जाग्रत बुध,
सुपनथें जगाए करी मोहे सुध ।। ९४
श्री धनीजीको जोस आतम दुलहिन,
नूर हुकुम बुध मूल वतन ।
ए पांचों मिल भई महामत, वेद कतेबों पहुंची सरत ।। ९५
या कुरान या पुरान, ए कागद दोऊ परवान ।
याके मगज मायने हम पास,
अन्दर आयके खोले प्राणनाथ ।। ९६
आप भी न खोले दरबार,
सो मुझथें खोलाय कियो विस्तार ।
मोहें दई तारतमकी करनवार, सो काहुं ना अटकें निरधार ।। ९८
सब संसय को कियो निरवार,
कोई संसय ना रहें वार के पार ।
रोसन करूं लेऊ हुकम बजाए,
ब्रह्मसृष्टि और दुनियां देऊं जगाय ।। ९८
द्वार तोबा के खुले हैं अब, पीछे तो दुनियां मिलसी सब ।
जब द्वार तोबाके मूंदयो, रैन गई भोर जो भयो ।। ९९
या भली या बुरी, जिनहूं जैसी फैल जो करी ।
तब आगूं आई सबोंकी करनी,
जिन जैसी करी आप अपनी ।। १००

Shri Prannath Ji Pustkalay

तब कोई नाहिं किसीके संग, दुख सुख लेवे अपने अंग ।
करूं ब्रह्मसृष्टि को मिलाप,
अखण्ड सूर उदय भयो आप ।। १०१
विस्व मिली तब करने दीदार,
पीछे कोई न रहे मिने संसार ।
ब्रह्मसृष्टि को पिया संग सुख,
सो कहयो न जाय या मुख ।। १०२
ब्रह्मासृष्टि को ऐसो नूर, जो दुनियां थी बिना अंकूर ।
ताये नये अंकूर जो कर, किये नेहेचल देख नजर ।। १०३
श्री धनीजीको दीदार सब कोई देख,
हो गई दुनिया सब एक ।
किनहूं कछुए ना कहयो, क्रोध ब्रोध काहूं ना रहयो ।। १०४
श्री धनीजीको ऐसो जस, दुनियां आपै भई एक रस ।
तेज जोत प्रकास जो ऐसो, काहूं संसय रहयो ना कैसो ।। १०५
सब जातें मिली एक ठौर, कोई न कहे धनी मेरा और ।
पिया के विरह सों निर्मल किये,
पीछे अखण्ड सुख सबनको दिये ।। १०६
ये ब्रह्म लीला भई जो इत, सो कबहुं हुई ना होसी कित ।
ना तो कई उपज गये इण्ड, भी आगे होसी कै ब्रह्मांड ।। १०७
ए तीन ब्रह्मांड हुये जो अब, ऐसा हुआ न होसी कब ।
इन तीनोमें ब्रह्म लीला भई,
व्रजरास और जागनी कही ।। १०८
ज्यों नींद में देखिये सुपन, यों व्रज को सुख लियो सैंयन ।
सुपन जोगमाया को जोय, आधी नींदमें देख्या सोय ।। १०९

Shri Prannath Ji Pustkalay

कछुक नींद कछुक सुध, रासको सुख लियो या विध ।
जागनीको जागते सुख,
ये लीला सुख क्यों कहूं या मुख ।। ११०
जागनीमें धाम लीला जाहेर, निसान हिरदे लिये चित्त धर ।
तब उपज्यो आनन्द सबों करार,
ले नजरों लीला नित्य विहार ।। १११
इतहीं बैठे घर जागे धाम, पूरन मनोरथ हुये सब काम ।
धनी महामत हंस ताली देय,
साथ उठा हंसता सुख लेय ।। ११२
(प्रकाश हिन्दी प्र. ९)

महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीने ११ वर्ष तक पन्नामें निवास किया. आपके साथ हजारों शिष्य थे. जिनमें मुक्त (ब्रह्मसृष्टि) मुमुक्षु (ईश्वरी) विषयी (जीवसृष्टि) तीनों प्रकारके भक्त थे. उस समय अहर्निश ब्रह्मचर्चाके अतिरिक्त और कोई काम न था. ब्रह्मवाणीकी कथा, उसीका गायन, ब्रह्मस्वरूपका निर्णय और संसारकी नश्वरताके विचारमें ही दिन रात व्यतीत हो जाते थे. सांसारिक भोजनादिकका प्रबन्ध महाराजा छत्रसालजीकी तरफसे होता था. छत्रसालजी महाप्रभुके प्रधान शिष्य थे. अपनी हार्दिक सेवा द्वारा महाप्रभुको प्रसन्न करना ही उनका काम था और महाप्रभु अपने अलौकिक ज्ञानसे उनकी तथा अन्य भक्तोंकी आत्माओंको प्रसन्न रखते थे. महाराजा छत्रसालजीके यहां किसी बातकी कमी न थी. उनका घर धन–धान्य, पुत्र–कलत्रसे परिपूर्ण था. क्यों न हो, जहां पूर्णब्रह्म परमात्माका स्वरूप ही साक्षात् निवास करते हों, वहां कमी भी कैसे आ सकती है ? पन्नामें रहकर ही स्वामीजीने अपने श्रीतारतम सागर ग्रन्थको पूर्ण किया. जो आज भी हजारों श्रद्धालुओंकी

Shri Prannath Ji Pustkalay

आत्माओंको मुक्तिका मार्ग बतला रहा है. सम्वत् १७५१ में महाप्रभुने समाधिस्थ होकर इह लीलाका संवरण कर लिया.

महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीको शास्त्राकारोंने निष्कलंकावतारके रूपमें वर्णन किया है और वे विजयाभिनन्दके नामसे भी शास्त्रोंमें प्रसिद्ध हैं.

युगत्रये व्यतिक्रान्ते धर्मे पादैकसंस्थिते ।
बहुपाखंडसंकीर्णे कथं योगमवाप्नुयात् ।।
व्यभिचारो मनुष्याणां यतीनां दुष्टचेतसाम् ।
रौद्रे कलियुगे प्राप्ते सर्वधर्मविवर्जिते ।।
परस्परविरोधत्वं द्विजानां दुष्टकर्मणाम् ।
राज्ञां चैव विशेषेण दुर्बलत्वं च जायते ।।
देशे ग्रामे महत्कष्टं सीदन्ति साधवो यदा ।
स्वधर्मविमुखा लोका अन्यधर्ममुपाश्रिताः ।।
न देवो न च दैवत्वं तत्प्रसादो न वै यदा ।
म्लेच्छधर्मप्रवृत्तौ च लोक – बुद्धिः प्रजायते ।।
महीतले च म्लेच्छानां राज्यवंशः प्रवर्तते ।
परस्परविरोधे चाऽवरंगो भवेद्यदा ।।
विक्रमस्य गतेऽब्दे च सप्तदशाष्टत्रिकं यदा ।
तदायं सच्चिदानन्दो ह्यऽक्षरात्परतः परः ।।
भारते चेन्दिरायां सो बुद्ध आविर्भविष्यति ।
स बुद्धः कल्किरूपेण क्षात्रधर्मेण तत्परः ।।
चित्रकूटे वने रम्ये स वै तत्र भविष्यति ।
वर्णाश्रमाणां धर्मस्य स्थापनं वै करिष्यति ।।
देवानां स्थापनं चैव प्रसादं च करिष्यति ।
विश्वात्मा विश्वज्योतिश्च पुराणः पुरुषोत्तमः ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

विश्वकृत् विश्वरूपश्च विश्वस्य हृदयं विभुः ।
म्लेच्छानां नाशको देवो बुद्ध एव भविष्यति ।।
विजयाभिनन्दनस्तत्र आनन्दे नन्दने वने ।
साधूनां रक्षणार्थाय धर्मस्य पालनाय च ।।
आनन्दाय च लोकानां परस्परहितैषिणाम् ।।
(भविष्य पुराण उत्तर खंड अ. २७)

ब्रह्माजीने कहा कि नारद ! भयंकर कलियुगके आने पर मनुष्य व्यभिचारी होंगे एवं यति दुष्ट चित्त वाले होंगे. संसारमें परस्पर विरोध फैल जायेगा. द्विज (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य) दुष्ट कर्म करने वाले होंगे और विशेषकर राजाओंमें कमजोरी आ जायेगी. देश–देश और ग्राम–ग्राममें कष्ट बढ़ जायेंगे. साधु लोग दुःखी होंगे. अपने धर्मको छोड़कर लोग दूसरे धर्मकी उपासना करनेवाले होंगे. देवताओंका दैवत्त्व भी नष्ट हो जायेगा और उनका आशीर्वाद भी नहीं रहेगा. मनुष्योंकी बुद्धि राक्षसी कर्ममें प्रवृत्त हो जायेगी. सब वर्णवालोंकी बुद्धि धर्मसे विपरीत हो जायेगी और पृथ्वी पर म्लेच्छोंके राज्यका विस्तार हो जायेगा. हिन्दू, मुसलमान एक दूसरेके विरोधी होंगे और राज्य औरंगजेबका होगा. विक्रम सम्वत् जब १७३८ होगा, तब अक्षरब्रह्मसे पर पूर्ण ब्रह्म परमात्माकी इन्द्रावती नामकी शक्ति भारत वर्षमें बुद्धरूपसे अवतरित होगी. वही बुद्ध क्षात्र धर्मसे युक्त होकर कल्कि रूपसे चित्रकूटके सुन्दर प्रदेशमें प्रकट होंगे. वे वर्णाश्रम धर्मकी रक्षा, मन्दिरोंकी स्थापना कर संसारको प्रसन्न करेंगे. वे संसारकी आत्मा, संसारको प्रकाशित करने वाले पुराण पुरुषोत्तम ब्रह्म हैं.

म्लेच्छोंके नाश करने वाले बुद्ध ही होंगे और वियजाभिनन्द

Shri Prannath Ji Pustkalay

नामसे संसारमें प्रसिद्ध होंगे. साधुओंकी रक्षा करेंगे, धर्मके संस्थापक, रक्षक एवं संवर्धक होंगे, संसारके प्राणियोंको आनन्दित करेंगे और लोगोंमें परस्पर प्रेमकी वृद्धि करेंगे.

विजयाभिनन्द बुद्धजी, और निष्कलंग इत आये ।
मुक्ति देसी सबनको मेट सबे असुराई ।। (श्रीमुख)

पद्मपुराणमें लिखा है कि –

कलेरन्ते बुद्धरूपी जननामनुकम्पया ।
अवतीर्यासिना ज्ञानरूपेणाच्छिद्य संशयम् ।।
धामस्थानानुमन्त्र्यादौ तेभ्यस्तत्वमुदीर्य च ।
अथ तांश्च समादाय गमिष्यति निजालयम् ।।

कलियुगके अन्तमें संसार पर कृपा करनेके लिए परमात्मा बुद्धरूपसे अवतार लेगा और अपनी ज्ञान रूपी तलवारसे सब संशयोंको काटकर ब्रह्मसृष्टियोंको परमतत्त्वका उपदेश करेगा और उनको साथ लेकर अपने स्थान परमधाममें जायेगा. महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीके स्वरूपका वर्णन करते हुए श्वेताश्वेतरोपनिषद् वर्णन करता है–

प्रणाधिपः सच्चरति स्वकर्मभिः – प्राणाधिपः अर्थात् प्राणनाथजी स्वकर्म ज्ञानोपदेशमें निरत होकर संसारमें विचरण करेंगे.

पुराण संहितामें भी लिखा है–

पद्मावतीकेनशरदे विन्ध्यपृष्ठ विराजिते ।
इन्द्रावती नाम सा देवी भविष्यति कलौ युगे ।।

पद्मावतीपुरीमें केन नदीके तीर पर विन्ध्याचल पर्वतके ऊपर इन्द्रावती नामकी शक्ति कलियुगमें प्रकट होंगी. इस प्रकार सैकडों प्रमाण महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीके आगमनके सम्बन्धमें मिलते हैं और उनके स्वरूपको पुष्ट करते हैं. शास्त्रोंमें यह भी

Shri Prannath Ji Pustkalay

लिखा है कि विजयाभिनन्दका शाका कलियुगमें चलेगा.

युधिष्ठिरो विक्रमश्च तथा वै शालिवाहनः ।
विजयाभिनन्दनश्चैव तथा नागार्जुन नृपः ।।
तथा कल्किश्च भगवानेते वै शकवन्धिनः ।
करिष्यन्ति कलौ भूयो धर्मस्थापनमेव च ।।

(गर्गसंहिता अश्वमेध खं. अ. ६१.२१,२२)

. भविष्य विचार ग्रन्थके पृष्ठ चार पर लिखा है कि वैतरणीके तट पर विजयाभिनन्दका शाका (१०,०००) दश हजार वर्ष तक चलेगा और पृष्ठ ६ पर लिखा है कि शालिवाहनके अठारहजार वर्ष व्यतीत होने पर सिन्धुके किनारे विजयाभिनन्दजीका शाका (सम्वत) चलेगा.

(भविष्यविचार, प्रकाशकः अध्यक्ष ज्योतिष विभाग कर्मवीर प्रेस, जबलपुर.)

१७५१ में महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजीके समाधिस्थ हो जानेके बाद महाराजा छत्रसालजीने श्रीपद्मावतीपुरी (पन्ना) में निवास करने वाले ब्रह्ममुनियोंके द्वारा इस ब्रह्मज्ञानको संसारके भिन्न–भिन्न प्रांतोंमें प्रचारित कराया. पंजाब, मालवा, एम.पी., यू.पी., आसाम, दार्जीलिंग और नेपाल आदि देशोंमें श्री पद्मावतीपुरीसे महात्माओंने जाकर इस धर्मका विस्तार किया. महाप्रभुके विद्वान और प्रधान शिष्य महात्मा मुकुन्ददासजीने उदयपुरके तात्कालिक राजा अमरसिंह राठौरको तारतम मन्त्रका उपदेश देकर श्रीकृष्ण प्रणामी धर्ममें दीक्षित किया था. राजा अमरसिंह राठौरका राज्यगुरु यद्यपि सिद्ध और प्रभावशाली था, फिर भी महात्मा मुकुन्ददासजीके सामने उसको परास्त होना ही पड़ा. शिष्यत्व स्वीकार कर लेनेके बाद अमरसिंह राठौरने अपने गुरु महात्मा मुकुन्ददासजीको उदयपुरमें ही

Shri Prannath Ji Pustkalay

रख लिया. आज भी उदयपुरमें श्रीकृष्ण प्रणामी मन्दिर और उसके पास ही महात्मा श्रीमुकुन्ददासजीकी समाधि विद्यमान है. राजा अमरसिंहजीने तो श्रीकृष्ण प्रणामी मन्दिरके लिए कई गांव भी प्रदान किये थे. लेकिन समय पाकर अब वे नष्टप्राय हो गये. महाराजा छत्रसालजी विक्रम सम्वत १७८८ तक राज्य संचालन और धर्म प्रचार दोनों कार्य करते रहे. किम्वदन्ती है कि महाराजा छत्रसालजीके राज्यका एक ब्राह्मण गृहखर्चसे दुःखी होकर परदेश जा रहा था. जंगलके मध्य भागमें उसको एक महात्माका दर्शन प्राप्त हुआ. महात्माने ब्राह्मणसे कहा कि तुम मऊ जाकर महाराजा छत्रसालसे कहो कि तुम्हारे गुरु तुमको बुला रहे हैं. ब्राह्मणने प्रार्थना की कि भगवन् ! मैं नौ दिन तक पैदल यात्रा कर किसी प्रकार भूखा प्यासा यहां तक पहुंचा हूं. अब यहांसे लौट कर जानेकी मेरे पास ताकत नहीं है. आपकी आज्ञा पालनकी इच्छा होने पर भी मैं असमर्थ हूं. रास्तेमें ही मेरी मृत्यु हो जायेगी. महात्माजीने कहा कि तुम इसकी चिन्ता न करो. तुमको एक मिनटमें मैं मऊ पहुंचा दूंगा. तुम अपनी आंखें बन्द करो. महात्माजीके कथनानुसार उस ब्राह्मणने एक पत्थरकी चट्टान पर खड़े होकर आंखे मूंद ली और जब महात्माजीका हाथका इशारा पाकर आंखें खोली तो अपने आपको मऊके अन्दर राज भवनके प्रवेश द्वार पर खड़ा पाया. ब्राह्मणने आश्चर्यचकित हो अपनी चारों तरफ देखा और द्वारपालसे महाराजा छत्रसालजीको बुला लानेके लिए कहा. ब्राह्मण और गौभक्त महाराजा छत्रसालजीने शीघ्रतासे आकर ब्राह्मणका दर्शन किया और उस ब्राह्मणकी जबानी महात्माजीका सन्देश सुनकर बहुत प्रसन्न हुए. जिस गांवमें ब्राह्मणका निवास था, वह गांव उसी ब्राह्मणको ही

Shri Prannath Ji Pustkalay

पुरस्कारमें देकर महाराजा छत्रसालने अपने पुत्रोंको बुलाया और उनको राजनीतिकी शिक्षा दी. अन्तमें पुत्रोंके लिए राज्यका विभाग कर अपना जामा (अचकन) और तलवार वहीं एक चबूतरे पर रखकर आप जंगलकी तरफ चले गये. वह सम्वत १७८८ पौष वदी तीजका दिन था. तबसे छत्रसालजीका आज तक पता नहीं चला. यह कथा बुन्दलखंडमें आज भी प्रचलित है और वह गांव भी उसी ब्राह्मणके वंशजोंके पास आज तक वर्तमान है. महाराजा छत्रसालजीका वह जामा भी मऊ श्रीकृष्ण प्रणामी मन्दिरमें आज तक सुरक्षित है. वहां जाने वाले भक्तोंको उस जामाके दर्शन प्राप्त हो जाते हैं. जामाके देखनेसे महाराजा छत्रसालजीके विशाल शरीरकी लम्बाई चौड़ाईका अनुमान सहजमें ही लगाया जा सकता है. लेखकने उस जामाका दर्शन किया है. आत्मविश्वासी लोगोंका कहना है कि महाराजा छत्रसालजीकी मृत्यु आज तक नहीं हुई और वह अपने राज्यके विभिन्न भागोंमें भ्रमण करते हुए कई संस्कारी व्यक्तियों द्वारा देखे गये हैं. इसमें कहां तक सत्य है यह तो परमात्मा ही जानें. लेकिन यह सत्य है कि महाराजा छत्रसालजी परमात्माकी दिव्य विभूतियोंमेंसे थे और आज भी प्रातःकाल उनका नाम स्मरण करनेसे कलिकल्मष रूप विघ्नोंका नाश हो जाता है.

कई अल्पज्ञ इतिहास लेखकोंने महाप्रभु स्वामी श्री प्राणनाथजी और महाराजा छत्रसालजीके जीवनके सम्बन्धमें अर्ध सुनी बातें लिख दी हैं. जो अनर्थ ही नहीं महापाप भी है. अनुचित बातें जानकर व्यक्तियोंके मनमें अश्रद्धा तो उत्पन्न होती ही है, संसारका जिज्ञासु समाज भी सत्यसे वंचित रह जाता है. अतः किसीके जीवनके सम्बन्धमें पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेनेके बाद ही कलम उठानी चाहिए.

Shri Prannath Ji Pustkalay

अन्तिम निवेदन –

सज्जनो ! उम्र बीत रही है. प्रतिदिन हम मृत्युके सन्निकट पहुंचते जा रहे हैं. वह दिन अत्यन्त नजदीक है, जब इस नश्वर संसारसे हमारे विदा हो जानेकी खबर हवाकी तरह चारों तरफ फैल जायेगी. उस दिन सारा गुड़–गोबर हो जायेगा. सारा हवाई महल ढह जायेगा. जिनको अपना कहते–कहते जीभ सुख जाती है, जिनके लिए उचित–अनुचित प्रत्येक कर्मोंसे हम पैसा पैदा करते हैं. उनसे सदाके लिए नाता टूट जायेगा. यदि जीवनमें किसीकी भलाई की होगी तो लोग आपके नाम पर चार बूंद आंसू बहा लेंगे, नहीं तो दुनियां आपकी लाश पर थूकेगी. अगर लाशपर नहीं तो नाम पर जरूर थूकेगी. जिस शरीरको साबुन तेल लगाकर सजाया जाता है. सजावटमें थोडी–सी कसर भी मनमें संकोच पैदा कर देती है. वह सोनेका शरीर जलकर क्षणमात्रमें राख–सा बन जायेगा. जानवर खायेंगे तो बिष्ठा बन जायेगा और सड़ेगा तो कीडे पड़ जायेंगे. यह बात परम सत्य होने पर भी उस दिनकी दयनीय दशा पर हम विचार नहीं करते. इसलिए तो युधिष्ठिरने कहा था कि –

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्ति यमसादनम् ।
शेषा जीवितुमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम् ।।

रोज–रोज प्राणियोंको मौतके मुखमें जाते हुए देखकर भी लोग जीवित रहनेकी ही इच्छा करते हैं, यह संसारमें महान आश्चर्यकी बात है.

Shri Prannath Ji Pustkalay

गाफिल तुझे घड़ियाल, ये देता है मुनादी ।
गरदूने घडी उम्र की और घटादी ।।

इसलिए भाई ! बेखबर मत रहो. ये ऊंचे–ऊंचे सिंहासन, ये राजपाट, ये कुटुम्ब परिवार, ये सुन्दर–सुन्दर महल किसी काममें भी न आयेंगे. बडे शौकसे जिस मकानको बनवाया था, उसकी सजावटमें धनकी नदी बहा दी थी लेकिन इस प्राण पखेरूके ऊड़ जाने पर एक क्षणके लिए भी उस महलमें रहनेको स्थान नहीं मिलेगा. सुन्दर कविने उस समयका क्या ही सुन्दर चित्र खींचा है–

मात पिता युवती सुत बान्धव, लगत हैं सबको अति प्यारो ।
लोग कुटुम्ब खरो हित राखत, होय नहीं हमसों कभी न्यारो ।।
नेह सनेह तहां तक जानहुं, बोलत हैं मुख शब्द उचारो ।
सुन्दर चेतन शक्ति गई तब, बेगि कहें घर मांझ निकारो ।।

सूरदासजी लिखते हैं –

जा दिन मन पंक्षी उड़ि जैहैं ।
ता दिन तेरे तन तरुवर के सबे पात छरि जै हैं ।।
घरके कहें बेग ही काढ़ो भूत भये कोऊ खैहैं ।
जा प्रीतमसे प्रीत घनेरी सोऊ देख डरै हैं ।।
कहां वह ताल कहां वह शोभा देखत धूर उड़ै हैं ।
भाई बन्धु कुटुम्ब कबीला सुमिरि पछतैहैं ।।
बिना गोपाल कोऊ नहीं अपना जस कीरति रहि जैहैं ।
सो तो सूर दुर्लभ देवन को सत संगति में पै हैं ।।

उस दिन सारी पद मर्यादा मटियामेट हो जायेगी. सारी शेखी घूलमें मिल जायेगी. और कुछ दिनोंके बाद संसारमें नाम लेने वाला भी कोई नहीं रह जायेगा. यह भी पता न चलेगा कि आप

Shri Prannath Ji Pustkalay

कभी संसारमें पैदा भी हुए थे कि नहीं. वही महल जो आपके सामने आकाशको चूमता हुआ नजर आता था. और जिसकी तरफ किसीको देखनेकी भी हिम्मत नहीं पड़ती थी उसीमें अब गीदड़ और कौवे बोलते हुए नजर आ रहें हैं.

कह रहा है आस्मां यह सब समां कुछ भी नहीं है ।
रोती है शबनम की नै रंगे जहां कुछ भी नहीं ।।
जिनके महलोंमें हजारों रंग के फानूस थे ।
झाड उनकी कब्र पर हैं औ निसां कुछ भी नहीं ।।
जिनकी नौबत की सदा से गूंजते थे आस्मां ।
दम व खुद हैं कब्र में अब हूं न हां कुछ भी नहीं ।।
तख्त वालों का पता देते हैं तख्ते गारे के ।
खोज मिलता तक नहीं वादे अजां कुछ भी नहीं ।।

बस, इतना ही सम्बन्ध संसारके साथ हमारा है. विद्वान, धनवान, मेहेरबान, बेईमान जो भी इस संसारमें हुए, अन्तमें सबकी गति यही है. अरे ! रावण, हिरण्यकशिपु सरीखे धरती तौलने वालोंका आज पता नहीं, हम तो किस बागकी मूली है ?

दाताऊ महीप मान्धाताऊ दिलीप जैसे,
जाके गुण अजहूं लों द्वीप द्वीप छाये हैं ।।
बलि ऐसो बलवान को भयो है जहान बीच,
रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं ।।
वाणकी कलान में सुलोन द्रोण पारथ से,
जाके गुण दीन दयाल भारतमें गाये हैं ।।
कैसे कैसे सूर रचे चातुरी विरंची जीने,
फेर चकनूर कर धूर में मिलाये हैं ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

इसलिए सावधान हो जाओ. छोड़ दो इस विद्या, बुद्धि, वर्ण, धन, परिवार, बल, सम्प्रदाय, मजहब, मत, पन्थ पदके झूठे मदको, तोड़ दो अपने आप बांधी हुई इन सारी फांसियोंको, फोड़ दो भंड़ा जगतके इस मायिक रूपका, जोड़ दो मन उस अनादि कालसे नित्य बजने वाली मोहनकी मायानाशिनी मधुर मुरली ध्वनिमें और मोड़ दो संसारमें लगने वाली बुद्धिको नित्य सत्य सच्चिदानन्द परमात्माके द्वारकी ओर. देखिये–

यावत् स्वस्थमिदं कलेवरगृहं यावच्च दूरे जरा,
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रहिता यावत्क्षयो नायुषः ।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषां कार्य प्रयत्नोमहान्,
प्रोदीप्ते भवने च कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ।।

जब तक शरीर स्वस्थ है, जहां तक इन्द्रियां ठीक काम कर रही हैं और जहां तक आयु समाप्त नहीं हुई, तभी तक आत्म–कल्याणके लिए प्रयत्न कर लेना ठीक है. अन्यथा मकानमें आग लग जानेके बाद कुआं खोदना व्यर्थ ही है.

कमलके फूलमें दिनको बैठकर सुगन्ध लेने वाला भ्रमर सांयकाल स्वयंको कमल फूलके अन्दर बन्द होते देखकर विचार करता है कि प्रातःकाल सूर्यके उदय होने पर यह कमल पुष्प फिर खिलेगा. और मैं इससे बाहर हो जाऊंगा, लेकिन हाय अफसोस ! शामको ही जंगली हाथी तालाबमें पानी पीकर उस कमलके फूलको भी तोड़कर खा जाते हैं और बेचारा वह भ्रमर.....

यह हाल हम लोगोंका भी है. इसलिए प्रेमियो ! मनुष्य जीवनकी सार्थकता परमात्माकी प्राप्तिमें ही है. अनेक योनियोंमें भटकनेके बाद यह मनुष्य तन परमात्माको प्राप्त करनेके लिए ही

Shri Prannath Ji Pustkalay

मिला है. समस्त संसारके कार्य इसी विचारको सामने रखकर हमेशा करना चाहिए. इसीको भूल जानेके कारण आज हम अपने रास्तेसे गिर कर अनेकों प्रकारके कष्ट भोग रहे हैं. इसीसे आज हमारा जीव अशांत और दुःखदायी हो रहा है. यदि मनुष्य अपने इस महान लक्ष्य पर स्थिर होकर समस्त कार्य परमात्माके चरणोंमें अर्पण करे तो सारे कष्टोंका अनायास ही अन्त हो सकता है.

देखा जाता है कि विषयोंके साधनोंमें और उनके मिल जाने पर भोगोंमे राग–द्वेष बढ़ जाते हैं. हृदय अभिमानसे भर जाता है. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष, छल–कपट आदि दुर्गुणोंका विस्तार हो जाता है. मन और इन्द्रियां काबूसे बाहर हो जाती हैं. चौबीसों घंटे पागलोंकी तरह धन, पुत्र, स्त्री, यश आदि संग्रह करनेमें चित्त व्यग्र रहता है. क्या आत्मिक उन्नतिको भूलकर केवल धन, मान, मदके संग्रहमें लगे रहनेसे हमारा मन मोहसे ढक नहीं जाता ? और क्या वह मोह हमें तनज्जुलीके समुद्रमें डुबो नहीं देता ? एक बार विचार कीजिए, शांतचित्तसे सोचिए.

एक बार महात्मा गांधीने कहा था कि जिस समय हमें चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई पड़ता है और हमारी बुद्धि बेकाम हो जाती है, उस समय विश्वास ही हमारी रक्षाको आता है. यही वह विश्वास, जिसकी हमारी नवयुवकोंमें आवश्यकता है. और यह तभी प्राप्त होता है, जब बुद्धिके गर्वको चूर कर ईश्वरीय इच्छाओं पर अपनेको पूर्णतया समर्पित कर दिया जाता है.

महात्माजीका यह कथन अक्षरशः सत्य और सदा स्मरण रखने योग्य है. मौके बेमौके बुद्धिके बेकाम हो जाने पर ईश्वरीय विश्वास ही रक्षक होता है. किन्तु यह विश्वास होता है उत्तम

Shri Prannath Ji Pustkalay

संस्कार या किसी महात्मासे सत्संग करने पर. लेकिन आजकल स्कूल और कालेजोंमें जिस स्थूलवाद प्रधान जड़ शिक्षाका प्रचार हो रहा है, वह तो भारतीय सभ्यता और संस्कृतिका नाश करने वाली ही सिद्ध हो रही है. विद्यार्थी जीवनमें जहां संयमकी आवश्यकता है, वहां उच्छृंखलता, इन्द्रियलोलुपता, विलासिता और फैशनकी भरमार है. आजकल तो विदेशी पहरावा, विदेशी खानपान और हर बातमें विदेशियोंकी नकल करना–

कोटं च बूटं पतलूनकं च चंचलमुखे सिग्रटमद्वितीयम् ।
घड़ी छड़ी ऐनक सभ्यतायाः सप्तैव चिह्नानि भवन्ति लोके ।।

बस यही सभ्यताका चिन्ह रह गया है. चरित्र बल तो बूरी तरह नष्ट हो रहा है. छात्र जीवनमें ही तरह – तरहके रोग आक्रमण कर लेते है. स्वास्थ्य बिगड़ जाता है. नैतिक पतन हो जानेके बाद उन्नतिका प्रश्न ही खत्म हो जाता है.

प्राचीन कालमें जंगलमें निवास करने वाले स्वार्थ रहित परमात्माके ध्यानमें तल्लीन ऋषि महर्षि अपने आत्म बल पर संसारको बनाने और मिटानेकी ताकत रखते थे. भारतवर्षके लिए वह दिन स्वप्नके समान हो गया. लड़कियां भी चरित्र बलसे पतित और क्षुद्र विचारको लेकर ही संसारके कार्यक्षेत्रमें आती है. उन्होंने भी पुरुषोंके कन्धेसे कन्धा मिलाकर साईकिल दौडाना, दो चोटी रखना और तरह – तरहके कृत्रिम पदार्थोंसे अपने चेहरोंको सुन्दर बनानेमें ही अपनी उन्नतिकी चरम सीमा मान रखी है. इनसे अब गार्गी, सीता, सावित्री और अनुसूयाकी क्या आशा रखी जा सकती है.

हम बहुत ऊंची – ऊंची बातें करते हैं ब्रह्मज्ञानका निरूपण करते हैं. बात – बातमें लोगोंको संसारके मिथ्या होनेकी सूचना देते

Shri Prannath Ji Pustkalay

हैं, परन्तु अपनी ओर बहुत कम देखते हैं.

दोष पराये देखकर, चला हसन्त हसन्त ।
अपने याद न आवहीं, जिनका आदि न अन्त ।।

भक्तिका महत्त्व समझाते हुए और ब्रह्मज्ञानका निरूपण करते समय भी हमारे मनमें संसारकी कोई न कोई कामना छिपी रहती है. जरा गहरे जाकर हम तत्काल उसे पकड़ सकते हैं. सत्य बात तो यह है कि हम वहीं होते हैं, जहां हमारा मन होता है. यदि हमारे मनमें बार – बार काम, क्रोध, लोभ और मोहकी वृत्तियां जागृत होती हैं तो समझ लेना चाहिये कि हम अभी तक ठीक नहीं हैं. हम मनुष्य कहलानेके अधिकारी तभी बन सकते हैं, जब हमारा मन सतरूप परमात्माके स्वरूपसे भर जायेगा. खेदकी बात तो यह है कि आजकल हम सभी लोग उपदेशक और गुरु बनना चाहते हैं. अपने भीतर जमे हुए मलकी कुछ परवाह न कर दूसरेका मल धोना चाहते हैं. परिणाम यह होता है कि हमारे हृदयमें और अधिक मलकी वृद्धि हो जाती है, जिससे और भी अनेकों दोष हमारे हृदयमें एकत्रित हो जाते हैं.

इसलिए उचित तो यह है कि हम अपनी ओर देखें, अपने हृदयके मलको साफ करें, दूसरेसे कुछ सीखना चाहें और जो भी अच्छी बात मिले उसका मन लगाकर सेवन करें.

एक व्यक्ति वास्तवमें धनी है और उसके धनको लोग जानते नहीं तो इसमें उसका कुछ नुकशान नहीं है. लोगोंके न जाननेसे उसका धन नष्ट नहीं हो सकता. लेकिन जो धनी है नहीं और धनी होनेका जाल फैलाकर लोगोंको धोखा देता है, वह स्वयं भी अनेकों दुःख भोगता है और दूसरोंके भी दुःखका कारण बनता है. इसलिये

Shri Prannath Ji Pustkalay

सत्पुरुष कहलानेकी इच्छा न रख कर सत्पुरुष बननेकी इच्छा रखनी चाहिए.

विश्व आपके दृढ संयम का गाता है यश गान ।
मैं भी उसमें देता उसका, साथ आज मति मान ।।
खूब जानते आप खींचना, और मोड़ना बाग ।
पर कमबख्त कहां वह घोड़ा, है इसका कुछ ध्यान ।।

इसलिये याद रखिये कि –

चेतो हरा युवतयो सुहृदोऽनुकूलाः
सद्बान्धवाः प्रणतिगर्भगिरश्च भृत्याः ।
गर्जन्ति दन्ति निवहास्तरलास्तुरंगाः
सम्मिलने नयनयोर्न हि किंचिदस्ति ।।

चित्तको हरण करने वाली युवतियां, अनुकूलमित्र, अत्यन्त प्यार करने वाले भाई और संकेतको समझने वाले चतुर नौकर एवं हाथियोंकी कतारें और घोड़ोंका झुण्ड, आपके आँख बन्द करते ही समाप्त हो जायेंगे. उस समय धन जमीनमें, पशु अपने स्थान पर, अत्यन्त प्रिय पत्नी घरके दरवाजे तक और मित्र शमशान तक, फिर आपके साथ –

चार जने मिल खाट उठाइन, रोवत ले चले डगर डगरिया ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सँग जलेगी वही सूखी लकरिया ।।

हां, धर्म अथवा अधर्मको लेकर जीव यहांसे जायेगा. इसीलिए शास्त्रकोरोंने लिखा है कि –

लोकयात्रार्थमेवेह धर्मस्य नियमः कृतः ।
उभयत्र सुखोदर्क इह चैव परत्र च ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

परलोक यात्राके लिए ही तो धर्मको प्रगट किया है, जो यहां और परलोकमें भी सुख देने वाला है. इसलिए –

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः ।

किसी इच्छाकी पूर्तिके लिए भयसे, लोभसे, अथवा प्राण रक्षाके लिए भी धर्मका परित्याग नहीं करना चाहिए. क्योंकि –

जड़ चेतन जे वस्तुयें, तिन कर धर्म अधार ।
जो हठ राखे धर्मको, तेहि राखे करतार ।।
धर्म प्राण जे नर बने, ते नर ईश्वर पूत ।
अधम कुचाली पातकी, ते जीते ही भूत ।।

इसलिए –

धर्मं शनैः संचिनुयाद्वल्मीकमिव पुत्तिकाः ।
परलोकसहायार्थं सर्वभूतान्यपीडयन् ।।

जिस प्रकार दीमक मिट्टीका संग्रह करता है, उसी प्रकार समस्त प्राणियोंके साथ प्रेमका व्यवहार रखते हुए परलोककी सहायताके लिए धर्म संग्रह करो. क्योंकि उस समय धर्म ही कहता है –

मा तात सहसा कार्षीर्धर्मोऽहं त्वामुपागतः ।

मैं धर्म, तुम्हारे लिए तुम्हारे रक्षकके रूपमें उपस्थित हूं. चिन्ता न करो. धर्मके डंकेकी इस आवाज पर आजके बेपरवाह लोग ध्यान ही नहीं देते हैं. लेकिन जब आँखें धँस जाती हैं, कमर झुककर कुब्बड़ निकल आता है, पैरके घुटने दो – दो इंच आगे बढ़ जाते हैं, कान जबाव दे जाते हैं, बोलने पर थूककी छींटे उड़नेके डरसे कोई सामने खड़ा होना नहीं चाहता, घरके प्राणी नफरतकी निगाहसे देखते हैं, उस समय सब जोश ठण्डा हो

Shri Prannath Ji Pustkalay

चुका होता है और कर्मोंको दोष दे – देकर रोनेके सिवा कुछ हाथ नहीं लगता.

उस समय तो –

इन्द्रियां होंगी शिथिल तब, भोग विष बन जायेंगे ।
मौत मांगें न पावेंगे, पड़े पड़े पछतावेंगे ।।

फिर पछतानेसे क्या होता है ?

का वर्षा जब कृषि सुखाने, समय बीत पुनि का पछताने ।।

इसीलिये –

ग्रन्थ पन्थ सब जगत के, बात बतावत तीन ।
नाम हृदय मन में दया, तन सेवा में लीन ।।
तन पवित्र सेवा किये, धन पवित्र कर दान ।
मन पवित्र प्रभु भजनकर, होत त्रिविध कल्याण ।।

बस ! तन, मन और धन तीनों पवित्र हो गए. और इन तीनोंके पवित्र हो जाने पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थोंकी प्राप्ति हो जाती है. इन चारों पदार्थोंकी प्राप्ति कर लेना ही मनुष्यका सबसे बड़ा परमार्थ है. इनके प्राप्त हो जाने पर मनुष्य जीवन सफल हो जाता है. लेकिन इन चारों पदार्थोंकी प्राप्ति उसीको होती है जो सत्य संकल्प, शुद्ध हृदय, प्रभु प्रेमी, विश्वासी, दयालु और परोपकारी है.

किन्तु इसके विपरीत आजकल मानवकी उन्नति और शोभा तो मांस, शराब और अण्डों तक ही सीमित है. इस सम्बन्धमें महाभारतमें लिखा है –

स्वमांसं परमांसेन यो वर्धयितुमिच्छति ।
नास्तिक्षुद्रतरस्तस्मान्न नृशंसतरो नरः ।।

Shri Prannath Ji Pustkalay

जो दूसरेके मांससे अपना मांस बढ़ाना चाहता है, उससे क्रूर और नीच प्राणी संसारमें दूसरा नहीं है. मनुजी लिखते है –

योऽहिंसकानी भूतानी हिनस्त्यात्मसुखेच्छया ।
स जीवश्च मृतश्चैव न क्वचित्सुखमेधते ।।

जो अहिंसक प्राणियोंको अपने सुखकी इच्छासे हनन करता है, वह जीवित रहने अथवा मरने पर भी सुख नहीं पाता है. और हिन्दू शब्दका अर्थ भी यही है. **हिनान् दूषयतीति हिन्दू** हीन दूषित पदार्थोंको त्यागने वाला ही तो हिन्दू कहलाता है. हिन्दुओंके लिए ही शास्त्रकारोंने विधि और निषेध दोनोंका वर्णन कर दिया है. लेकिन हिन्दू आज अपनी प्राचीन संस्कृतिको भूल गये. इसलिए सांसारिक पदार्थोंकी उपलब्धि होने पर भी सुखकी प्राप्ति नहीं होती. धनकी पवित्रता भी आजकल –

दावत अदावत में गावत बजावत में,
कहत कहावत में लोगन लुगाई में ।
मोटर की आमद में वोटर खुशामद में,
मैडम बरामद में योरुप जवाई में ।।
भंग की छनाई कवाब की खवाई,
शराब की पिवाई और रंडिन नचाई में ।
लाखन उड़ावें पुरषान की कमाई पर,
पाई न लगावें के स्वधर्म की भलाई में ।।

और मनकी पवित्रता भी प्रभु भजनके बदले पैसेके ही भजनमें है. चाहे जितना भी अधर्मी, पापी और नीच मनुष्य क्यों न हो, धनवान् है तो उसके सब दोष क्षम्य हैं. और वह भी –

टका धर्मः टका कर्मः टका हि परमं तपः मानकर उचित

Shri Prannath Ji Pustkalay

अनुचित किसी भी रूपसे द्रव्य उपार्जनको ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ समझकर उसीमें तल्लीन रहता है. गृहस्थ ही क्यों, आजकल सन्त नामधारी मनुष्यकी उनसे भी विचारणीय हालत है. वे भी तरह – तरहके भेष बनाकर जनताको लूटने और उससे नीचसे नीच कर्म करनेमें संकोच नहीं करते हैं. क्या हुआ जो हजारोंमें कहीं एक सच्चा सन्त, सन्त शब्दको चरितार्थ करता. इन्हीं लोगोंके लिए तो तुलसीदासजीने लिखा है कि –

मूड़ मुड़ाय रखाय जटा सिर, राख लगाय भये ब्रह्मचारी ।
बैठे रहे पट दे मठ भीतर, साध के मौन लगाय के तारी ।।
धर्म अधर्म के घूंट पिये, ममता मद लोभ दया न विसारी ।
ऐसे भये तो कहा तुलसी जो, आसन मार के आस न मारी ।।

मायाजन्य पदार्थोंके संग्रहमें लीन गृहस्थ या सन्त दोनोंको ध्यान रखना चाहिए कि –

झूठे सुखको सुख कहें, मान लिया मन मोद ।
जगत चबेना कालका, कुछ मुखमें कुछ गोद ।।

इसलिए मित्रो ! समयसे पहले ही सावधान हो जाओ. क्षणिक सुखके लिए जीवन वरबाद न करो. नहीं तो – जिस प्रकार किसी धनाढ्य सेठने सुन्दर फल और फूलोंसे सुसज्जित एक मनोहर बगींचा केवल लोगोंके देखने मात्रके लिए बनवाया था न कि लालचमें आकर उसके फल और फूलोंको तोड़नेके लिए. और उस बगींचेके दरवाजे पर शस्त्रोंसे युक्त बैठा सिपाही प्रत्येक अन्दरसे आने वाले व्यक्तिकी तलाशी लेता था. उसी प्रकार इस संसार रूपी बगींचेके बाहर भी बैठा हुआ यमराज सिपाही हमारे मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार, चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, मुख और उपस्थ आदि इन्द्रियोंसे

Shri Prannath Ji Pustkalay

किए प्रत्येक कर्मोंका लेखा भी अवश्य लेगा. और परिणाम स्वरूप हमें नाना नारकीय यातनाओंका कष्ट भोगना ही पड़ेगा. यह परम सत्य है. अतः हमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेष, मद और मत्सर आदि विकारोंको दूर कर उनके स्थानमें दया, क्षमा, विवेक, त्याग, शील, सन्तोष, भक्ति, वैराग्य, ज्ञान और परोपकार आदि सद्गुणोंको धारण करना चाहिए. नहीं तो –

बहुत गई थोडी रही, नारायण अब चेत ।
काल चिरैया चुग रही, निश दिन आयु खेत ।।

आयुके समाप्त हो जानेके बाद पश्चात्तापकी अग्निमें जलना पड़ेगा और लाख प्रयत्न करने पर भी यह समय दुबारा नहीं मिलेगा.

एक बात और –

संसारकी उन्नतिको ही जीवनका चरम लक्ष्य मानने वाले स्थूलवाद प्रधान जगतके अन्दर भूमिखंडके किसी एक क्षुद्र खण्डको देश मान लें, जिस कल्पित जातिमें स्थूल शरीर जन्मा हो उसीमें जन्म लेने वालेकी स्वजाति बतलावें, क्षणस्थायी कुटुम्ब, धन, शरीर, संसारको सत्य मान लें, यह तो सम्भव है. लेकिन ब्रह्मसृष्टि, मुक्त पुरुष, अखिल ब्रह्मांडको ब्रह्मके एक अंशमें स्थित मानने वाले अपने असली ब्रह्मस्वरूपको भूलकर माया कल्पित आपात, रमणीय, मायिक सुन्दरता युक्त स्थल विशेषको ही अपना स्वदेश मानलें तो क्या यह ब्रह्मके व्यापक अस्तित्वको सीमित कर देनेके प्रयासके समान नहीं है ? मायासे बने हुए देशको अपना देश मानकर उसीमें मोहित रहना क्या विदेशको स्वदेश मान लेना नहीं है ? अपनी सच्चिदानन्द रूप नित्य अखण्ड स्वाभाविक सत्ताको छोड़कर

Shri Prannath Ji Pustkalay

अपनी देहको ही आत्मा मान लेना क्या सजातीयताको छोड़कर विजातीय बन जाना नहीं ? अपने सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म स्वरूपको भूलकर, अपने परमधामके स्वाभाविक धर्मको छोड़कर क्या विधर्मी बन जाना नहीं है ? विचार करो तुम कौन हो ? तुम अमर हो, तुम सुखरूप हो, तुम नित्य हो, तुम अखण्ड हो, तुम पूर्ण हो, तुम मायासे अतीत हो, तुम्हारी ही सत्तासे जगतका अस्तित्व है. तुम्हारी ही महिमासे विश्व महिमान्वित है. तीनों लोक तुम्हारे ही अन्दर प्रतिभासित हैं.

इसलिये अपने गौरवका स्मरण करो, स्वरूपका अनुसन्धान करो, फिर देखोगे सम्पूर्ण जगतमें तुम ही तुम हो. तुम अपने असली स्वरूपको भूलकर छोटे मत बनो. अपने सत् चिद् आनन्द स्वरूपसे च्युत मत होओ. मायाके विजातीय आवरणसे अपनेको ढक न दो, क्योंकि तुम अमृत हो, सत्य हो और ज्ञान स्वरूप हो. तुम ब्रह्म हो, सच्चिदानन्द हो, अपनी ओर देखो और अपने शक्तिमानके साथ सम्मिलित हो जाओ.

॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

श्री राधा राधारमण आनन्द मंगल पुंज ।
नील वसन मुरली सहित, बिलसहु हिरदय निकुंज ॥
राधाकृष्ण भजो सदा, चित्तमें धरके ध्यान ।
मन वांछित फल पाइहो, हूहै पूरण ज्ञान ॥

Shri Prannath Ji Pustkalay

जीवन – सूत्रके अनमोल बोल

मोक्ष मिलता है **क्या नहीं**

भक्तिसे ! पुण्य बिना सत्संग नहीं !
दर्शन से ! सत्संग बिना ज्ञान नहीं !
तप से ! ज्ञान बिना क्रिया नहीं !
ज्ञान से ! क्रिया बिना मुक्ति नहीं !
चरित्र से ! मुक्ति बिना सुख नहीं !

वह मूर्ख है **सेवा करो**

जो बिना बात के हंसे ! माता की !
जो अपनी बड़ाई खुद करे ! गुरु की !
जो व्यर्थ की बातें करे ! तपस्वी की !
जो बड़ों का निरादर करे ! बीमार की !
जो निज घर की बड़ाई करे ! पिता की !
जो बिना बुलाए बीच में बोले ! अतिथि की !
अनाथ की !
गरीब की !

दया है तो **प्रभु भक्ति नहीं होती**

सत्य भी है ! अभिमान के रहते !
दान भी है ! प्रमाद के रहते !
सेवा भी है ! मोह के रहते !
शील भी है ! क्रोध के रहते !
क्षमा भी है ! रोग के रहते !
सरलता भी है ! आलस्यके रहते !

Shri Prannath Ji Pustkalay

किन्तु बनता है

सम-भाव से श्रमण !
ज्ञान से मुनि !
ब्रह्मचर्य से ब्राह्मण !
तपश्चरण से तपस्वी !

ज्ञानी वही है

जो शान्त स्वभाव वाला हो !
जो स्थिर चित्त वाला हो !
जो समभाव रखने वाला हो !
जो निर्भय वृत्ति वाला हो !
जो सदा दया रखने वाला हो !

सन्त वही है

जो काम को जीते !
जो क्रोधको जीते !
जो लोभ को जीते !
जो मोह को जीते !
जो द्वेष को जीते !
जो राग को जीते !
जो माया को जीते !
जो मन को जीते !

सबसे बडा है

निरोगता सबसे बड़ा लाभ है !
निर्लोभता सबसे बड़ा धन है !
विश्वास सबसे बड़ा बन्धु है !
लज्जा सबसे बड़ा भूषण है !
मोह सबसे बड़ा दुःख है !
मोक्ष सबसे बडा सुख है !
अहिंसा सबसे बडा धर्म है !

कभी मत करो

जाति का गर्व !
बल का गर्व !
ज्ञान का गर्व !
लाभ का गर्व !
कुल का गर्व !
रूप का गर्व !
तप का गर्व !
ऐश्वर्य का गर्व !

मानव में

क्रोध नहीं, किन्तु क्षमा चाहिए !
माया नहीं, किन्तु विनय चाहिए !

आवश्यक है

धर्म में अनुराग !
बोली में मिठास !

Shri Prannath Ji Pustkalay

मान नहीं, किन्तु सरलता चाहिए !
लोभ नहीं, किन्तु सन्तोष चाहिए !

हृदयमें सरलता !
गुरु में भक्ति !
आचरण में पवित्रता !
सद्गुणों में विश्वास !

जीवन सफल बनता है

सच्चे वैराग्य से !
सच्चे विवेक से !
सच्ची श्रद्धा से !
सच्चे ज्ञान से !
सच्ची क्षमा से !
सच्ची करुणा से !
हृदयकी कोमलता से !

वह नर पशु है

जो विद्या से रहित है !
जो ज्ञान से रहित है !
जो दान से रहित है !
जो शील से रहित है !
जो तप से रहित है !
जो दयासे रहित है !
जो धर्मसे रहित है !

पवित्र होते हैं

भगवद्वाणी से कान !
शास्त्र–पठन से नेत्र !
सुपात्र–दान से हाथ !
सद्गुण–कीर्तन से जिह्वा !
सत्य–संकल्प से मन !
तप के अनुष्ठान से आत्मा !

जो देना सो लेना

सुख दो, सुख मिलेगा !
दुःख दो, दुःख मिलेगा !
प्रेम दो, प्रेम मिलेगा !
द्वेष दो, द्वेष मिलेगा !
मान दो, मान मिलेगा !
अपमान दो, अपमान मिलेगा !
जहर दो, जहर मिलेगा !
अमृत दो, अमृत मिलेगा !

शोभा नहीं पाते

न्याय–हीन राजा !
धर्म–हीन मानव !

नित्य प्रयत्न करो

ज्ञान–वृद्धि के लिए !
दर्शन–प्राप्ति के लिए !

Shri Prannath Ji Pustkalay

विनय-हीन शिष्य ! चरित्र निर्माण के लिए !
वैराग्य-हीन साधु ! तप-अनुष्ठान के लिए !
लज्जा-हीन नारी !

सुखी होना है तो मांस खाने से

मन में सत्य भर लो ! पवित्रता नष्ट होती है !
मन में प्रेम भर लो ! दयालुता नष्ट होती है !
मन में दया भर लो ! सत्यता नष्ट होती है !
मन में क्षमा भर लो ! सद्गति नष्ट होती है !
मन में सेवा भर लो ! सुमति नष्ट होती है !
मन में मैत्री भर लो ! कोमलता नष्ट होती है !

पाप का परिवार नकल कभी मत करो

पाप का पिता -लोभ ! बूढे की !
पाप की माता -हिंसा ! काने की !
पाप की स्त्री -ईर्ष्या ! लूले की !
पापका बेटा -स्वार्थ ! तुतले की !
पाप की बेटी -तृष्णा ! अन्धे की !
पाप की बहन -कुमति ! लंगड़े की !
पाप का भाई -झूठ ! गूंगे की !
बहरे की !

मृत्यु के आते ही दुर्लभ है

धन छोड़ना होगा ! नम्रता पूर्वक दान !
तप छोड़ना होगा ! गर्व रहित विद्या !
कुटुम्ब छोड़ना होगा ! क्षमायुक्त शौर्य !

Shri Prannath Ji Pustkalay

मित्र–दल छोड़ना होगा ! दानमें लगा धन !
घर–बार छोड़ना होगा ! सेवा में लगा मन !

क्षणिक है **पुण्य है**

बादल की छाया ! भूखे को भोजन देना !
बीजली की चमक ! प्यासे को पानी पिलाना !
बरसाती नदी का बेग ! नंगे को वस्त्र देना !
दुर्जन की प्रीति ! निराश्रित को आश्रय देना !
संसारिक सुख भोग !

जीव अपने ही कर्मोंसे **सर्वदा करो**

कोई सुखी है, कोई दुःखी ! हाथों का संयम !
कोई धनी है, कोई निर्धन ! पैरों का संयम !
कोई स्वामी है, कोई सेवक ! इन्द्रियों का संयम !
कोई सुरूप है, कोई कुरूप ! मन का संयम !
कोई ऊंचा है, कोई नीचा ! वाणी का संयम !
कोई निरोगी है, कोई रोगी ! इच्छा का संयम !
कोई ब्राह्मण है, कोई क्षत्रिय !
कोई वैश्य है, कोई शूद्र !

गुरुजनोंके समक्ष

पैर पर पैर रखकर मत बैठो !
व्यर्थ की गप–शप मत करो !
किसी की निन्दा मत करो !
व्यर्थ में कभी मत बोलो !
छल कपट की बात मत करो !

अच्छी बात है

भूख से कम खाना !
अधिक न सोना !
बेकार न घूमना !
झूठी गवाही न देना !
जीव–घात न करना !

Shri Prannath Ji Pustkalay

किसी भी प्रकार का गर्व मत करो ! किसी की हंसी न करना !
सरल–हृदय बन कर रहो ! चोरी कभी नहीं करना !

नाश होता है **सिनेमा देखने से**

अहंकारी व्यक्ति का यश ! समय की हानि !
चंचल व्यक्ति की मित्रता ! पैसे की हानि !
धन लोलुप व्यक्ति का धर्म ! स्वास्थ्य की हानि !
व्यसनी व्यक्ति का धन ! विचारों की हानि !
कृपण व्यक्ति का सुख ! सदाचार की हानि !
बिना मालिक का खेत !

श्री निजानन्द सम्प्रदाय के सम्पूर्ण साहित्य
अब टेलीग्राम ग्रुप में
श्री प्राणनाथ जी पुस्तकालय
श्री परमधाम की वाणी
बीतक, चर्चनी, चितवनि
की सभी PDF File

Shri Prannath Ji Pustkalay